तिब्बत में एक खोजकर्ता के रोमांच

ए. हेनरी सैवेज लैंडोर

Table of Contents

कॉपीराइट
चित्र
प्रस्तावना
अध्याय 1 एक निषिद्ध देश
अध्याय II एक अज्ञात दर्रा
अध्याय III बाल-बाल बचना
अध्याय IV जासूसों की निगरानी
अध्याय V सैनिकों द्वारा चेतावनी दी गई
अध्याय VI: एक उच्च तिब्बती अधिकारी से मुठभेड़
अध्याय VII एक रोमांचक रात्रि यात्रा
अध्याय VIII भूखे भगोड़े
अध्याय 9 विद्रोह का प्रयास
अध्याय X शत्रुओं और लुटेरों के बीच
अध्याय 11: अजनबी संगति में
अध्याय XII लामाओं के बीच
अध्याय XIII मठों में जीवन
अध्याय 14 एक और आपदा
अध्याय 15 तिब्बती सैनिकों द्वारा अनुसरण किया गया
अध्याय सोलह: पवित्र प्रांत में प्रवेश करने वाला पहला श्वेत व्यक्ति
अध्याय सत्रह नदी पर आपदा
अध्याय 18 वीं बंदी
अध्याय XIX मृत्युदंड
अध्याय XX एक भयानक यात्रा
अध्याय XXI जल्लाद
अध्याय XXII एक जादुई जीवन
अध्याय XXIII सीमांत की ओर ले गया
अध्याय XXIV अंततः दोस्तों के साथ
परिशिष्ट
फुटनोट:

तिब्बत में एक खोजकर्ता के रोमांच

द्वारा

ए. हेनरी सैवेज लैंडोर

के लेखक
"निषिद्ध भूमि में"
"पूर्व के रत्न"
आदि आदि।

लेखक द्वारा बनाए गए चित्रों सहित

हार्पर एंड ब्रदर्स पब्लिशर्स
न्यूयॉर्क और लंदन
एमसीएमएक्स

कॉपीराइट, 1910, हार्पर एंड ब्रदर्स द्वारा

सर्वाधिकार सुरक्षित

अप्रैल 1910 में प्रकाशित।
अमेरिका के संयुक्त राज्य अमेरिका में छपी

अंतर्वस्तु

चित्र

लेखक
अनैच्छिक टोबोगनिंग
रात में मैंने भयंकर बर्फीले तूफान में अपने आदमियों को पहाड़ पर चढ़ाया।
हमारे गढ़ों के पीछे
डाकुओं ने अपने हथियार डाल दिए।
एक प्राकृतिक महल
विशाल शिलालेखों वाला शिविर
मूसलाधार बारिश
तिब्बती महिलाएं और बच्चे
टट्टुओं की खरीद
मैं एक कैदी था
समझौते में घसीटा गया
चंदेन सिंग को कोड़े मारे जा रहे हैं
नुकीली काठी पर सवारी
हमने अपने ही पहरेदारों पर पत्थरों से हमला किया।
चट्टानी बस्तियाँ

प्रस्तावना

यह पुस्तक मुख्य रूप से लेखक के 1897 में तिब्बत की यात्रा के दौरान के अनुभवों पर आधारित है, जब धार्मिक कट्टरता के कारण वह देश विदेशियों के लिए बंद था। इस अभियान के वैज्ञानिक परिणामों और वहां के रीति-रिवाजों, परंपराओं आदि के विस्तृत विवरण के लिए, इसी लेखक की अन्य पुस्तक, जिसका शीर्षक 'निषिद्ध भूमि में' (हार्पर एंड ब्रदर्स, प्रकाशक) है, का संदर्भ लिया जा सकता है।

उस खोज यात्रा के दौरान लेखक ने कई महत्वपूर्ण भौगोलिक खोजें कीं, जिनमें से कुछ का उल्लेख इस प्रकार किया जा सकता है:

(क) विश्व की चार सबसे बड़ी नदियों में से एक, महान ब्रह्मपुत्र नदी के दो प्रमुख स्रोतों की खोज।

(ख) यह पता लगाना कि हिमालय के उत्तर में एक ऊँची पर्वत श्रृंखला मौजूद थी, लेकिन उसमें हिमालय श्रृंखला की सबसे ऊँची चोटियों जितनी ऊँचाई नहीं थी।
(ग) पवित्र (मानसरोवर) और शैतान की (राकास्टल) झीलों के बीच कथित संबंध को लेकर भौगोलिक विवाद का निपटारा।
(घ) सतलुज नदी के वास्तविक स्रोतों की खोज।

भौगोलिक नामों को लिखते समय लेखक ने उनके स्थानीय उच्चारण के अनुसार ही उन्हें सही ध्वनि दी है, और यहां तक कि काव्यात्मक शब्द "हिमालय" (बर्फ का निवास) के लिए भी कोई अपवाद नहीं रखा है, जिसे अंग्रेजी में आमतौर पर गलत वर्तनी के साथ लिखा जाता है और अर्थहीन हिमालय में बदल दिया जाता है।
इस पुस्तक में दिए गए सभी कंपास दिशासूचक चुंबकीय हैं। तापमान का मापन फारेनहाइट थर्मामीटर से किया गया है।
ए. एच. एस. एल.

तिब्बत में एक खोजकर्ता के साहसिक कारनामे

तिब्बत में एक खोजकर्ता के साहसिक कारनामे

अध्याय 1

एक निषिद्ध देश

तिब्बत एक निषिद्ध भूमि थी। इसीलिए मैं वहाँ गया था।

एशिया के मध्य में स्थित एक ऊंचे पठार पर बसा यह विचित्र देश, ठंडा और बंजर है। इस निर्जन पठार की औसत ऊंचाई - समुद्र तल से लगभग 15,000 फीट - यूरोप के सबसे ऊंचे पहाड़ों से भी अधिक है। लोग इसे "दुनिया की छत" कहना बिल्कुल सही कहते हैं। इस ऊंचे पठार पर निचली घाटियों में उगने वाली झाड़ियों और घास के अलावा कुछ भी नहीं उगता, या लगभग कुछ भी नहीं उगता। यहां के मूल निवासी पड़ोसी देशों से आयातित भोजन पर निर्भर हैं। वे इसके बदले ऊन, बोरेक्स, लोहा और सोना देते हैं।

तिब्बती पठार चारों ओर से ऊँची पर्वत श्रृंखलाओं से घिरा हुआ है। इनमें सबसे ऊँची पर्वत श्रृंखला दक्षिण में स्थित हिमालय श्रृंखला है, जो पृथ्वी की सबसे ऊँची पर्वत श्रृंखला है। दक्षिण से तिब्बत में प्रवेश केवल गर्मियों में ही अभियान के माध्यम से संभव है, जब पर्वतीय दर्रे पूरी तरह से बर्फ से अवरुद्ध नहीं होते हैं।

मेरी यात्रा के समय तिब्बत का कानून यह था कि किसी भी विदेशी को देश में प्रवेश करने की अनुमति नहीं थी। तिब्बती सीमा पर सैनिकों द्वारा कड़ी सुरक्षा की जा रही थी।

तिब्बत के उत्तरी भाग में कुछ ही अभियान दल गए थे, क्योंकि वह क्षेत्र लगभग निर्जन था। उन्हें अपने मार्ग में शायद कुछ दयनीय खानाबदोशों के अलावा कोई भी विरोधी नहीं मिला। तिब्बत के विदेशियों के लिए वर्जित होने के बाद से कोई भी ल्हासा प्रांत में प्रवेश नहीं कर पाया था—जो तिब्बत का एकमात्र ऐसा प्रांत था जहाँ अपेक्षाकृत घनी आबादी थी। यही वह प्रांत था, जो उस वर्जित भूमि का सबसे अधिक वर्जित हिस्सा था, जिसका मैंने अन्वेषण और सर्वेक्षण करने का इरादा किया था। मैं अपने उद्देश्य में सफल रहा, हालाँकि विज्ञान और अपने साथी मनुष्यों के लिए उपयोगी होने की अपनी इच्छा के लिए मुझे अपनी जान गंवाने के कगार पर आना पड़ा।

वैज्ञानिक कार्यों के लिए उपलब्ध सर्वोत्तम उपकरणों के साथ, मैं 1897 में तिब्बती सीमा की ओर रवाना हुआ। भारत में बॉम्बे से, मैं उत्तर की ओर रेलवे लाइन के अंतिम छोर, काठगोदाम तक गया, और फिर बैलगाड़ियों और घोड़ों से नैनीताल पहुँचा। भारत के उत्तर-पश्चिमी प्रांत में, निचले हिमालय में स्थित इस छोटे से पहाड़ी स्थल पर, मैंने अपने अभियान की तैयारी की और उस अज्ञात भूमि में अपना रास्ता बनाने का दृढ़ संकल्प लिया।

नैनीताल समुद्र तल से 6407 फीट ऊपर है। इस बिंदु से मेरा सारा सामान कुलियों या पोर्टरों की पीठ पर लादकर ले जाना पड़ता था। इसलिए, प्रत्येक सामान का वजन पचास पाउंड से अधिक नहीं होना चाहिए। मैंने उपकरण, नेगेटिव और क्षतिग्रस्त होने वाली वस्तुओं को अपने द्वारा विशेष रूप से बनाए गए, कठोर उपयोग के लिए डिज़ाइन किए गए बक्सों में पैक किया। अच्छी तरह से तैयार की गई लकड़ी के ऐसे चार बक्से, जिन्हें

सावधानीपूर्वक जोड़ा और फिट किया गया था, जस्ता से लेपित थे और एक विशेष घोल में भिगोए गए थे जिससे वे जल और वायुरोधी बन गए थे, कई तरह से उपयोगी हो सकते थे। इन्हें अलग-अलग इस्तेमाल किया जा सकता था, बैठने के लिए। चार बक्सों को एक पंक्ति में रखने से पलंग का काम हो जाता था। तीन बक्सों को बैठने और मेज के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता था। चार बक्सों को एक विशेष तरीके से मिलाकर एक नाव बनाई जा सकती थी, जो जल्दी, मजबूत और आसानी से बन जाती थी, जिससे दुर्गम नदी को पार किया जा सकता था या अज्ञात झीलों के शांत जल में गहराई मापी जा सकती थी। इन बक्सों को फोटोग्राफी के लिए टैंक के रूप में भी इस्तेमाल किया जा सकता था। आपातकालीन स्थिति में, इनका उपयोग उन क्षेत्रों में पानी ले जाने के लिए पानी के पीपों के रूप में भी किया जा सकता था जहाँ पानी उपलब्ध नहीं था। पैक किए गए इन डिब्बों में से प्रत्येक एक कुली के भार के बराबर होता था, या फिर इन्हें दो-दो के सेट में छल्लों वाली पट्टियों की सहायता से काठी पर टांगा जा सकता था।

मेरे लिए विशेष रूप से भोजन सामग्री तैयार की गई थी, जो कठोर जलवायु और उच्च ऊंचाई वाले क्षेत्रों के अनुकूल थी। संरक्षित मांस में भरपूर मात्रा में वसा और कार्बनयुक्त, या ऊष्मा उत्पन्न करने वाले खाद्य पदार्थ, साथ ही आसानी से पचने योग्य तत्व थे जो असामान्य तनाव के क्षणों में शक्ति बनाए रखने के लिए उपयुक्त थे। मेरे पास एक .256 मैनलिचर राइफल, एक मार्टिनी-हेनरी पिस्तौल और 1000 कारतूस थे जो जलरोधी डिब्बे में अच्छी तरह से पैक किए गए थे। मेरे पास 500 कारतूसों वाला एक रिवॉल्वर, कई शिकार चाकू, खाल उतारने के उपकरण, छोटे स्तनधारियों को पकड़ने के लिए विभिन्न आकारों के तार के जाल, तितली पकड़ने के जाल, सरीसृपों को अल्कोहल में संरक्षित करने की बोतलें, कीटनाशक बोतलें (पोटेशियम साइनाइड), आर्सेनिक युक्त साबुन की एक मात्रा, हड्डी काटने वाले उपकरण, स्केलपेल और प्राकृतिक इतिहास के नमूने एकत्र करने के लिए आवश्यक अन्य सभी सहायक उपकरण भी थे। मेरे उपकरण में तीन फोटोग्राफिक कैमरों के सेट, एक दर्जन ड्राई प्लेटें, साथ ही नेगेटिव को डेवलप करने, फिक्स करने, प्रिंट करने आदि के सभी सहायक उपकरण थे। मेरे पास खगोलीय अवलोकन और सर्वेक्षण के लिए उपकरणों के दो पूर्ण सेट थे। एक सेट मुझे लंदन की रॉयल ज्योग्राफिकल सोसाइटी द्वारा दिया गया था। दूसरा मेरा अपना था। प्रत्येक सेट में निम्नलिखित उपकरण थे: एक छह इंच का सेक्स्टेंट। हाइप्सोमेट्रिकल उपकरण, एक ऐसा उपकरण जिसका उपयोग क्वथनांक थर्मामीटर की सहायता से ऊँचाई मापने के लिए किया जाता है, जिसे विशेष रूप से अधिक ऊँचाई पर काम करने के लिए बनाया गया था। यह सर्वविदित है कि ऊँचाई जितनी अधिक होती है, पानी का क्वथनांक उतना ही कम होता जाता है। किसी पर्वत पर किसी ऊँचे स्थान पर उबलते पानी के तापमान और साथ ही वायुमंडल के तापमान को मापकर, और समुद्र तल पर किसी दिए गए स्थान के क्वथनांक तापमान के सापेक्ष गणना करके, दोनों बिंदुओं के बीच ऊँचाई का अंतर सटीकता से ज्ञात किया जा सकता है।

मेरे साथ दो एनरॉइड बैरोमीटर भी थे, जो विशेष रूप से मेरे लिए बनाए गए थे—एक 20,000 फीट तक की ऊँचाई मापता था, दूसरा 25,000 फीट तक। हालाँकि मैंने इन एनरॉइड बैरोमीटरों का उपयोग मुख्य रूप से

अपने मार्ग में ऊँचाई के अंतर को मापने के लिए किया, क्योंकि एनरॉइड बैरोमीटरों की सटीकता पर हमेशा भरोसा नहीं किया जा सकता, फिर भी मैंने क्थनांक थर्मामीटरों के साथ इनकी तुलना करने पर पाया कि ये हमेशा अत्यंत सटीक थे। हालाँकि, यह एक अपवाद था, और पर्वतों की ऊँचाई के सटीक मापन के लिए केवल एनरॉइड बैरोमीटरों पर निर्भर रहना उचित नहीं था। मेरे उपकरण में तीन कृत्रिम क्षितिज थे—एक पारे से बना था, और बाकी दो प्लेट ग्लास से निर्मित थे। बाद वाले में एक विशेष व्यवस्था थी जिससे उन्हें सटीक रूप से समतल किया जा सकता था। मैंने पाया कि सूर्य द्वारा अक्षांश और देशांतर के अवलोकन के लिए बुध क्षितिज संतोषजनक था, लेकिन जब रात में ग्रहणों का अवलोकन करना होता था, तो प्लेट-ग्लास क्षितिज अधिक सुविधाजनक थे और तिब्बत जैसी अत्यधिक ठंडी जलवायु में तारों और ग्रहों का अधिक स्पष्ट प्रतिबिंब देते थे, जहाँ खगोलीय अवलोकन हमेशा बड़ी कठिनाई से किए जाते थे। उस अभियान में मेरे द्वारा ले जाया गया सबसे उपयोगी उपकरण खगोलीय नेत्रगोलक वाला एक शक्तिशाली दूरबीन था। आवश्यकतानुसार, मैं अपने साथ कई कम्पास ले गया था, जिनमें प्रिज्मेटिक, ल्यूमिनस, फ्लोटिंग और पॉकेट कम्पास शामिल थे। दैनिक तापमान का रिकॉर्ड रखने के लिए अधिकतम और न्यूनतम थर्मामीटर साथ ले गया था, और मैं अपने साथ चित्र और पेंटिंग सामग्री का एक डिब्बा, साथ ही मानचित्र बनाने के लिए सभी प्रकार के उपकरण, जैसे कि प्रोटेक्टर, समानांतर रूल, टेप रूल, सेक्शन पेपर, नोटबुक आदि भी ले गया था। मेरे पास ग्रीनविच माध्य समय बताने वाली जलरोधी हाफ-क्रोनोमीटर घड़ियाँ और तीन अन्य घड़ियाँ थीं। अक्षांश और देशांतर के लिए अपने अवलोकनों को मौके पर ही करने के लिए, मेरे पास रैपर की नेविगेशन और 1897 और 1898 के लिए नॉटिकल अल्मनैक जैसी पुस्तकें थीं, जिनमें गणनाओं के लिए सभी आवश्यक सारणियाँ पाई जाती थीं।

मुझे एक हल्का पहाड़ी तंबू दिया गया था, जिसे आमतौर पर टेंटे डी'एब्री कहा जाता है; यह सात फीट लंबा, चार फीट चौड़ा और तीन फीट ऊंचा था; इसका वजन चार पाउंड था। बिस्तर के लिए मुझे केवल एक ऊंट के बालों के कंबल की आवश्यकता थी। मेरे कपड़े न्यूनतम थे। मेरे सिर पर केवल एक पुआल की टोपी थी, जो दुर्भाग्य से मेरी यात्रा की शुरुआत में ही टूट गई, इसलिए मैं ज्यादातर समय बिना सिर ढके या छोटी टोपी पहनकर ही रहता था। मैंने बिना कीलों वाले मध्यम मोटाई के जूते पहने थे और कभी भी छड़ी नहीं रखी। मेरे व्यक्तिगत सामान की सादगी के कारण ही मैं अक्सर कठिन परिस्थितियों में भी तेज गति से यात्रा करने में सक्षम था। हालांकि मेरे अभियान की तैयारियों में कई हजार डॉलर खर्च हुए, लेकिन मैंने अपने और अपने साथियों के लिए दवाओं पर बहुत कम पैसा खर्च किया; वास्तव में, मुझे केवल बासठ सेंट (दो शिलिंग और छह पेंस) ही खर्च करने पड़े। मेरा दृढ़ विश्वास है कि प्राकृतिक परिस्थितियों में स्वाभाविक रूप से रहने वाला और पर्याप्त व्यायाम करने वाला कोई भी स्वस्थ व्यक्ति दवाओं से बहुत कम लाभान्वित हो सकता है।

मैंने नैनीताल से अपनी यात्रा शुरू की और अल्मोड़ा (समुद्र तल से 5510 फीट ऊपर) तक पहुँचा, जो तिब्बती सीमा की ओर जाने वाला आखिरी पहाड़ी इलाका था जहाँ मुझे यूरोपीय निवासियों के मिलने की उम्मीद थी। यहाँ मैंने साहसी, ईमानदार, चुस्त-दुरुस्त और तंदुरुस्त नौकरों की तलाश की, जो अच्छी तनख्वाह और अच्छे इनाम के लालच में तिब्बत की मेरी यात्रा में आने वाली तमाम असुविधाओं, कठिनाइयों

और खतरों का सामना करने के लिए तैयार हों। कई नौकर मेरे सामने आए। हर एक ने एक प्रमाण पत्र प्रस्तुत किया जिसमें नौकरों के सभी गुणों की भरमार थी। प्रत्येक प्रमाण पत्र पर किसी न किसी एंग्लो-इंडियन अधिकारी के हस्ताक्षर थे—चाहे वह गवर्नर हो, जनरल हो, कैप्टन हो या डिप्टी कमिश्नर। मुझे सबसे ज्यादा आश्चर्य इस बात का हुआ कि इन प्रमाण पत्रों को लाने वाले नौकरों को उन लोगों ने बुरी तरह से उपेक्षित कर दिया था जिन्होंने उनकी सेवाओं की इतनी प्रशंसा की थी। वे सभी भोजन, कपड़े खरीदने और अपने प्रियजनों की देखभाल के लिए रुपये उधार माँगने लगे, या फिर भीख माँगने लगे।

एक दिन मैं डाक विश्राम गृह में बैठा था, तभी एक अजीब प्राणी अपनी सेवाएं देने आया। मैंने पूछा, "आपके प्रमाणपत्र कहाँ हैं?"

"साहिब, हम 'सर्टिफिकेट्स' ने है" (सर, मेरे पास कोई सर्टिफिकेट नहीं है)।

मैंने उसे तुरंत काम पर रख लिया। उसके चेहरे की बनावट अन्य स्थानीय लोगों की तुलना में कहीं अधिक व्यक्तित्व दर्शाती थी। मेरे लिए इतना ही काफी था। मैं चेहरे की बनावट और पहली छाप पर बहुत विश्वास करता हूँ, जो मेरे लिए दुनिया के किसी भी प्रमाण पत्र से कहीं अधिक महत्वपूर्ण है। आज तक मैं कभी गलत नहीं हुआ हूँ।

मेरे नए नौकर का पहनावा अजीब था। उसके सिर पर सफेद पगड़ी बंधी थी। एक छोटी जैकेट के नीचे से एक भड़कीली पीली और काली फलालैन की कमीज दिखाई दे रही थी, जो उसकी पतलून में tucked होने के बजाय बाहर लटक रही थी। उसने जूते नहीं पहने थे और अपने दाहिने हाथ में एक पुराना क्रिकेट स्टंप लिए रहता था, जिससे वह हर बार मेरे कमरे में आने या जाने पर "समन्वय" करता था। उसका नाम चंदन सिंह था। वह कुशल नौकर नहीं था। उदाहरण के लिए, एक दिन मैंने उसे अपने सबसे अच्छे बालों के ब्रश से मेरे जूते पॉलिश करते हुए पाया। सोडा वाटर की बोतलें खोलते समय वह अक्सर आपको पानी की बौछार से नहला देता था और हमेशा उड़ते हुए कॉर्क से आपके चेहरे पर मारता था। इन्हीं में से एक दुर्घटना के कारण चंदन सिंह ने मेरी आंख में बुरी तरह चोट पहुँचाई थी, और एक दिन उसे दरवाजे से बाहर फेंक दिया गया था। बाद में—क्योंकि मेरे पास सोडा वाटर खत्म हो गया था—मैंने उसे माफ कर दिया और उसे वापस आने दिया। यही वह आदमी था जो मेरे सभी नौकरों में इकलौता साहसी निकला। तिब्बत में हमारी मुश्किलों के दौरान, वही व्यक्ति हर सुख-दुख में मेरे साथ खड़ा रहा।

अल्मोड़ा से लेकर जिसे आमतौर पर भोट कहा जाता है (हिमालय की ढलानों पर स्थित वह इलाका जो सीमा के ब्रिटिश हिस्से में है), हमारी यात्रा काफी जाने-माने जिलों से होकर गुजरी; इसलिए मैं अपने मार्ग के पहले भाग पर विस्तार से चर्चा नहीं करूंगा। मेरे साथ लगभग तीस कुली थे। हम घने चीड़ और देवदार के जंगलों से होते हुए, एक के बाद एक पर्वत श्रृंखलाओं के किनारों पर ऊपर-नीचे चलते रहे।

हम प्राचीन गोरखा नगर पिथौरागढ़ से होकर गुजरे, जहाँ पुराना किला भी था। कुछ दिनों बाद मैंने अस्कोट के पुराने राजा से मुलाकात की, जो उस समय उत्तरी भारत के सबसे श्रेष्ठ राजकुमारों में से एक थे। मैं राओत जनजाति से मिलने गया, जो जंगल में सबसे अलग-थलग रहने वाली एक विचित्र जंगली जाति थी। 'निषिद्ध

भूमि में' नामक पुस्तक में उन विचित्र लोगों के साथ मेरे अनुभवों और निचले हिमालय के उस सुंदर क्षेत्र में हमारी लंबी यात्राओं का विस्तृत वर्णन मिलेगा।

अंततः हम यात्रा के एक कठिन पड़ाव पर पहुँचे—नेरपानी नामक स्थान, जिसका अनुवाद "जलहीन मार्ग" होता है। बहुत कम यात्री इस बिंदु तक पहुँचे थे। मैं उस मार्ग पर मौजूद तीव्र ढलानों और उतार-चढ़ावों का वर्णन नहीं करूँगा, जो लगभग खड़ी चट्टान के साथ काटकर बनाया गया था। मार्ग के कई हिस्से चट्टान में क्षैतिज रूप से ठोंके गए लोहे के डंडों पर बने थे। इन डंडों के ऊपर पत्थर की बड़ी-बड़ी पटियाएँ रखकर एक संकरा रास्ता बनाया गया था, जिन पर चलने पर वे ज़्यादा मज़बूत नहीं थीं। इस अस्थिर मार्ग पर चलते हुए, चट्टान के तल पर नदी तक की खाई अक्सर 1800 से 2000 फीट तक गहरी होती थी, और कई जगहों पर यह मार्ग छह इंच से ज़्यादा चौड़ा नहीं था। अन्य स्थानों पर नेरपानी मार्ग चट्टान के किनारे सैकड़ों सीढ़ियों के बेतरतीब ढंग से बनाए गए समूह थे।

अध्याय II

एक अज्ञात दर्रा

तिब्बती सीमा के निकट स्थित गरब्यांग नामक स्थान पर मैंने तिब्बत अभियान की अंतिम तैयारियाँ कीं। इस स्थान पर रुकना अपरिहार्य था, क्योंकि हिमालय पर्वतमाला के सभी दर्रे बंद थे। प्रतिदिन नई बर्फ गिर रही थी। मेरा इरादा उस क्षेत्र के सबसे निचले दर्रे, लिप्पू दर्रे से होकर पार करने का था; लेकिन सर्वेक्षण के लिए लोगों को भेजने के बाद मुझे पता चला कि उस समय उस आसान मार्ग से भी अपना पूरा अभियान चलाना असंभव था।

मैंने गरब्यांग में एक तिब्बती तम्बू बनवाया। मेथोडिस्ट इवेंजेलिकल मिशन के डॉ. एच. विल्सन, जिनसे मेरी मुलाकात यहीं हुई थी, ने मेरे लिए तिब्बती सीमा पार जाने के लिए लोगों को जुटाने में बहुत प्रयास किया। लेकिन उनके प्रयास सफल नहीं हुए। भारत से लाए गए तीस लोगों ने आगे आने से इनकार कर दिया, और मुझे यहीं से नए लोगों को लाना पड़ा। शोका (भोट के निवासियों का स्थानीय और सही नाम) मेरे साथ जाने के लिए बिल्कुल भी इच्छुक नहीं थे। वे तिब्बतियों की क्रूरता को भली-भांति जानते थे। उनमें से कई को यातनाएं दी गई थीं, और गरब्यांग में ऐसे लोग देखे जा सकते थे जिन्हें तिब्बतियों ने बुरी तरह घायल कर दिया था। वास्तव में, तिब्बती अक्सर सीमा पार करके आते थे और बकाया और कर वसूलते थे तथा भारत सरकार द्वारा असुरक्षित छोड़े गए असहाय शोका लोगों को दंडित करते थे।

तिब्बती सीमा पर तैनात उच्च अधिकारी, तकलाकोट के जोंग पेन ने मेरी प्रस्तावित यात्रा के बारे में सुनकर धमकी दी कि जो भी व्यक्ति मेरे साथ आएगा, उसकी ज़मीन ज़ब्त कर ली जाएगी। उसने दूत भेजकर धमकी दी कि सीमा पार करने पर मेरा सिर काट दिया जाएगा और मेरे साथ आने वाले किसी भी व्यक्ति को कोड़े मारकर जान से मार दिया जाएगा। मेरी तरफ से जासूस उसकी गतिविधियों की जानकारी देते रहे। वह रोज़ाना और धमकियाँ देते हुए दूत भेजता रहा। उसने अपने सैनिकों को लिप्पू दर्रे पर इकट्ठा कर लिया, जहाँ उसे शक था कि मैं उसके देश में प्रवेश कर सकता हूँ।

अपनी पूरी यात्रा शुरू करने से पहले, मैंने कुछ ही लोगों के साथ एक टोही यात्रा की, ताकि यह पता चल सके कि निषिद्ध भूमि के कट्टरपंथी आदिवासियों से बचने के लिए मुझे कौन सी रणनीति अपनानी चाहिए। अछूते पहाड़ों और हिमनदियों पर नए रास्ते खोजना आसान काम नहीं था। हमारी तेज़ खोज यात्रा के दौरान कई दुर्घटनाएँ हुईं। एक दिन बर्फ की ढलान पर फिसलते हुए मैं तीन सौ गज की दूरी तक भयानक गति से बर्फ की ढलान पर लुढ़क गया, बाल-बाल बचा कि इस अनैच्छिक फिसलन के अंत में टुकड़े-टुकड़े होने से बच गया। मेरे एक भारवाहक, जो मेरे एक भार के ऊपर एक बच्चे को ले जा रहा था, के साथ भी ऐसी ही दुर्घटना हुई, जिसके परिणामस्वरूप बच्चे की मृत्यु हो गई।

गारब्यांग लौटने पर मुझे पता चला कि तिब्बतियों ने स्थानीय लोगों को मेरे खिलाफ भड़काने की कोशिश की थी। तिब्बती जासूस रोज़ाना तकलाकोट और गारब्यांग के बीच आते-जाते रहते थे ताकि जोंग पेन को मेरी

गतिविधियों की जानकारी मिलती रहे। एक दिन जोंग पेन ने एक धृष्ट दूत को यह कहने के लिए भेजा कि उसके पास लिप्पू दर्रे की रक्षा के लिए बहुत सारे सैनिक तैनात हैं और अगर हम आए तो वह हम सबको मार डालेगा। उसने कहा कि अगर उसने मुझे ज़िंदा पकड़ा तो वह मेरा सिर काट देगा; और मेरे शरीर को खालों में सिलकर नदी में फेंक देगा। मैंने जोंग पेन को यह सूचित करने के लिए एक दूत भेजा कि मैं जाने के लिए तैयार हूँ और लिप्पू दर्रे पर उससे मिलूँगा; उसे सावधान रहना चाहिए और मेरे रास्ते से हट जाना चाहिए। यह खबर लाने वाला दूत बाल-बाल बचा। वह मेरे पास लौटकर आया और बताया कि जोंग पेन युद्ध की तैयारी कर रहा है, उसने अपने सभी सैनिकों को एक संकरे दर्रे की चोटी पर इकट्ठा कर लिया है, जहाँ उन्होंने बड़ी संख्या में बड़े-बड़े पत्थर और छोटे-छोटे गोला-बारूद जमा कर रखे हैं ताकि जब हम पहाड़ की ओर आएँ तो उन्हें हम पर लुढ़काया जा सके।

काफी मशक्कत के बाद जब मैंने काफी आदमी इकट्ठा कर लिए, तो एक दिन अचानक मैंने उन्हें अपने साथ लिया और उसी रात अचानक निकल पड़ा। तिब्बतियों को शक था कि मैं उसी दिन निकल जाऊंगा, इसलिए उन्होंने भारत और नेपाल की सीमा बनाने वाली एक तेज और गहरी नदी पर बने पुल को तोड़ दिया। इससे मुझे असुविधा हुई, क्योंकि मुझे नदी के उस पार जाना पड़ा जो बहुत ऊबड़-खाबड़ था। इससे हमें और भी परेशानी हुई। जिन चट्टानों को हमें पार करना पड़ा, उनमें से कुछ बेहद खतरनाक थीं।

मैं हिमालय के सबसे ऊँचे गाँव, कुटी नामक स्थान पर पहुँचा, जो 12,920 फीट की ऊँचाई पर स्थित था। यहाँ मैंने सीमा पार करने के अंतिम प्रयास के लिए जल्दबाज़ी में अपनी अंतिम तैयारियाँ कीं। हर उपलब्ध शोका मेरे दल में शामिल हो गया था, और किसी भी प्रलोभन से और स्वयंसेवक नहीं मिले। मुझे दो अतिरिक्त आदमियों की ज़रूरत थी। दो भटके हुए चरवाहे अधभूखे और नंगे बदन मिले, जिनके बाल लंबे और बिखरे हुए थे, और उनके पास कपड़ों के नाम पर केवल एक मूंगे का हार और एक चाँदी का कंगन था। इन दो आदमियों के साथ मेरी छोटी सी टुकड़ी में तीस लोग हो गए।

दो चरवाहों में से एक ने मेरा ध्यान खींचा। वह उदास रहता था। वह शायद ही कभी कुछ बोलता था, और जब बोलता भी था तो कभी मधुरता से नहीं बोलता था। वह बेहद बीमार लग रहा था। बिना हिले-डुले, वह कभी-कभी किसी एक बिंदु को घूरता रहता था, मानो किसी समाधि में हो। उसके चेहरे की बनावट विशेष रूप से सुस्पष्ट और सुव्यवस्थित थी, लेकिन उसकी त्वचा पर कुष्ठ रोगियों की तरह भयानक, चमकदार, सफेदी थी। पहले तो मैंने उस पर विशेष ध्यान नहीं दिया, क्योंकि मैं अन्य कामों में व्यस्त था; लेकिन एक दिन चलते-चलते मैंने उसकी सावधानीपूर्वक जाँच की, और पाया कि बेचारे को वास्तव में कुष्ठ रोग के सभी लक्षण थे, जो कि सबसे भयानक बीमारी है। उसकी विकृत और सिकुड़ी हुई उंगलियाँ, जिनके जोड़ों पर त्वचा में घाव थे, एक दुखद और निश्चित प्रमाण थे। मैंने उसके पैरों की जाँच की, और पाया कि वह व्यक्ति कुष्ठ रोगी था।

मैंने उससे पूछा, "आपका नाम क्या है?"

"मंसिंग," उसने रूखेपन से कहा और तुरंत ही अपने स्वप्निल समाधि में फिर से लीन हो गया।

अपने अनुयायियों को देखकर मुझे आश्चर्य हुआ कि वे कितने विचित्र लोग थे। उनमें हुमली और जुमली जनजातियाँ थीं, जो तिब्बती सीमा के पास रहने वाली पर्वतीय जनजातियाँ थीं; वे अपने लंबे काले बालों को छोटी चोटियों और एक जूड़े में बाँधे रखते थे। वहाँ तिब्बती, शोका, रोंगबा, नेपाली थे—सभी कुशल पर्वतारोही। फिर राजिपुट जाति के चंदन सिंह और मानसिंह थे। एक ब्राह्मण, दो देशी ईसाई और एक जौहरी थे। फिर डॉक्टर विल्सन थे। क्या ही अनोखा समूह था! भाषाओं और बोलियों का कितना घालमेल था! इस विचित्र समूह की एक रोचक विशेषता यह थी कि प्रत्येक जाति अन्य सभी जातियों को नीचा समझती थी। इस कारण शुरू से ही मेरे साथियों के बीच काफी कलह होती रही। मुझे इस बात की खुशी थी, क्योंकि इससे एक तरह की गारंटी मिल जाती थी कि वे कभी मेरे खिलाफ एकजुट नहीं होंगे। मेरे साथ मौजूद सबसे विचित्र व्यक्तियों में से एक तिब्बती डाकू था, जो बैल की तरह ताकतवर था। उसके इतिहास की गहन जाँच से कोई खास पता नहीं चलता था। उसने कई लोगों को मारा था। उसने मुझसे नौकरी करने का अनुरोध किया, क्योंकि उसका अपनी पत्नी से झगड़ा हो गया था और वह अब उसके साथ नहीं रहना चाहता था। शिविर में उसे डाकू के नाम से जाना जाता था। गरब्यांग के सबसे धनी व्यापारियों में से एक का बेटा, काची नाम का एक युवक भी मेरे साथ था। वह बुद्धिमान था और अंग्रेज़ी के कुछ शब्द बोल सकता था। मैंने उसे सैनिकों की देखभाल करने और ज़रूरत पड़ने पर दुभाषिया के रूप में काम करने के लिए नियुक्त किया था। उसके चाचा डोला को नौकर और रसोइया के रूप में नियुक्त किया गया था।

लिप्पू दर्रे से आगे बढ़ने के बजाय, जहाँ जोंग पेन अपने आदमियों के साथ मेरा इंतज़ार कर रहा था, मैंने कुटी से एक बिल्कुल अलग दिशा में ज़बरदस्ती मार्च किया। मेरा इरादा एक ऊँचे, अनछुए, लगभग अनजान दर्रे से पार करने का था, जहाँ किसी को शक भी नहीं हो सकता था कि कोई कारवां तिब्बत में प्रवेश करेगा। मेरे आदमी अच्छे थे। हम कई दिनों तक लगातार बहुत ऊबड़-खाबड़ इलाके में चलते रहे, अनंत बर्फ की ओर ऊँचाई पर चढ़ते गए। तेज़ और उफनती धाराओं को पार करने में हमें काफ़ी तकलीफ़ हुई। वे अक्सर काफ़ी गहरी थीं, और पिघलती बर्फ़ का पानी इतना ठंडा था कि हर बार उनमें से गुज़रते समय हम लगभग जम जाते थे। हमने पत्थरों और बजरी के कई बड़े समतल बेसिन पार किए जो झील के तल जैसे दिखते थे। इन बेसिनों में हमें डेल्टा मिले, जो धारा के विभिन्न दिशाओं में बँटने से बने थे। नंगे पैर एक के बाद एक ठंडी धाराओं को पार करने में हमें बहुत तकलीफ़ हुई। मेरे कुछ आदमी बाल-बाल फ्रॉस्टबाइट से बचे, और पैरों को ज़ोर से रगड़ने के बाद ही तेज़ दर्द कम हुआ और आखिरकार रक्त संचार बहाल हुआ। मेरे पैरों के तलवे और उंगलियां बुरी तरह से कटी-फटी और चोटिल थीं। नदियों में हर पत्थर नुकीला लग रहा था। पानी में कुछ देर रहने के बाद मुझे भी असहनीय पीड़ा हुई। उस दिन से पहले मुझे यह एहसास ही नहीं था कि गर्म मोजे पहनना कितना सुकून देता है! जिस आखिरी घाटी को हमने पार किया, वह 15,400 फीट की ऊंचाई पर थी। हमने वहीं अपना डेरा डाला। थर्मामीटर में न्यूनतम तापमान 24°C दर्ज किया गया, जबकि उस दिन का अधिकतम तापमान 51°C फ़ारेनहाइट था।

ऊँचाई वाले इलाकों में यात्रा करने की मुख्य कठिनाइयों में से एक ईंधन की कमी थी। हमारे शिविर के आस-पास एक भी पेड़ या झाड़ी नज़र नहीं आ रही थी। प्रकृति अपने सबसे उजाड़ और बंजर रूप में थी। लकड़ी न मिलने पर, मेरे साथी याक, टट्टू और भेड़ों के सूखे गोबर को इकट्ठा करने और ईंधन के रूप में लाने के लिए इधर-उधर बिखर गए। इसे जलाना आसान नहीं था। माचिस की एक के बाद एक कई डिब्बियाँ जल्दी ही खत्म हो गईं, और कुछ इंच ऊँची लौ में मुश्किल से जलने वाली चिंगारियों को फूँकने में हमारी सामूहिक फेफड़ों की शक्ति बुरी तरह से खर्च हो गई। इस मामूली आग पर हमने अपना खाना पकाने और पानी उबालने की कोशिश की (ऊँचाई वाले इलाकों में यह एक कठिन प्रक्रिया थी)। उस रात का खाना हमेशा की तरह स्वादिष्ट नहीं था। हमें सब कुछ अधपका, या कहें तो लगभग कच्चा ही खाना पड़ा। रात बहुत ठंडी थी, और भारी बर्फबारी हो रही थी। जब हम सुबह उठे तो हमारे चारों ओर दो फुट गहरी बर्फ जमी हुई थी। बर्फ की चमक हमारी आँखों को चुभ रही थी। मैंने अपने साथियों को इकट्ठा किया। मानसिंग गायब था। वह पिछली रात नहीं आया था, और उसे ढूंढने के लिए मैंने जिस आदमी को भेजा था, उसका भी कोई अता-पता नहीं था। मुझे न सिर्फ उस आदमी की चिंता थी, बल्कि उसके बोझ की भी—जिसमें आटा, नमक, काली मिर्च और पाँच पौंड मक्खन था। मुझे डर था कि बेचारा कुष्ठ रोगी किसी खतरनाक नदी में बह गया होगा। वह किसी भी हालत में ठंड से बुरी तरह पीड़ित होगा, बिना किसी आश्रय और बिना आग के।

सूरज उगने के काफी देर बाद, मैंने अपनी दूरबीन की मदद से बचाए गए व्यक्ति और बचावकर्ता को हमारी ओर आते देखा। वे लगभग एक घंटे बाद शिविर में पहुँचे। मानसिंग कई मील दूर, खाली मक्खन के बर्तन के पास गहरी नींद में सोता हुआ मिला। उसने सारा मक्खन खा लिया था। जब हमें यह पता चला तो शिविर में सभी लोग क्रोधित हो गए। स्थानीय लोग ठंडे दर्रों से गुजरते समय खुद को गर्म रखने के लिए वसा और मक्खन को बहुत महत्व देते थे। बड़ी मुश्किल से मैंने मानसिंग को अपने अन्य साथियों के चंगुल से छुड़ाया, जो बेचारे कुष्ठ रोगी को कड़ी सजा देना चाहते थे। ताकि ऐसा दोबारा न हो, मैंने मानसिंग को फोटोग्राफिक प्लेटों और उपकरणों का भारी बोझ उठाने का आदेश दिया, जो मुझे लगा कि उसे इतना स्वादिष्ट नहीं लगेगा।

जब हम डेरा डाले हुए थे, लगभग छह सौ भेड़ों का एक झुंड दिखाई दिया, और उनके साथ कुछ तिब्बती भी थे। चूंकि मैंने अपना तिब्बती तंबू लगाया हुआ था, वे उसकी ओर बढ़े, यह सोचकर कि उन्हें अपने देशवासी मिल जाएंगे। जब उन्होंने खुद को डॉक्टर विल्सन और मेरे सामने पाया, तो उनकी हैरानी देखने लायक थी। उन्होंने जल्दी से अपनी फर की टोपियाँ उतारकर ज़मीन पर रख दीं और एक हास्यास्पद प्रणाम किया। उन्होंने अपनी जीभ पूरी लंबाई तक बाहर निकाल लीं और तब तक बाहर नहीं निकालीं जब तक मैंने उन्हें इशारा नहीं किया कि वे उन्हें अंदर खींच लें, क्योंकि मैं उनसे कुछ सवाल पूछना चाहता था। हमसे इस अप्रत्याशित मुलाकात ने उन्हें बहुत डरा दिया। वे डर से कांप रहे थे। उनसे जितनी जानकारी मिल सकती थी, उतनी प्राप्त करने के बाद, मैंने उनकी सबसे मोटी भेड़ खरीद ली। जब पैसे दिए गए, तो उन्होंने फिर से अपनी फर वाली जीभें दिखाईं और जाते समय और भी बड़े-बड़े सलाम किए, जबकि मेरे शिविर के सभी लोग हमारे नए खरीदे गए जानवरों को हमसे दूर जा रहे झुंड में वापस जाने से रोकने की कोशिश में लगे हुए थे।

हमारी अगली यात्रा में ये जानवर बहुत परेशानी का सबब बने। हमें उन्हें ज़्यादातर रास्ते घसीटना पड़ा। काची को एक जिद्दी, ताकतवर जानवर की जिम्मेदारी सौंपी गई थी, जिसे मैंने खास तौर पर अपने आदमियों को उस दिन लंबी पैदल यात्रा करने पर रात के खाने के लिए देने का वादा किया था। लेकिन भेड़ ने उसे मात दे दी। भेड़ ने काची द्वारा खींची जा रही रस्सी से अपना सिर छुड़ा लिया और पूरी रफ्तार से उस दिशा के विपरीत भाग गई जिस दिशा में हम जा रहे थे। यह सर्वविदित है कि अधिक ऊंचाई पर दौड़ना एक कष्टदायक कार्य होता है, क्योंकि विरल हवा के कारण ऐसा परिश्रम लगभग दम घोंटने वाला होता है। फिर भी, काची ने अपने पहले आश्चर्य पर काबू पाते हुए, जल्द ही भागे हुए जानवर का पीछा किया और मेरे अन्य आदमियों के उत्साहवर्धन से प्रेरित होकर, एक रोमांचक दौड़ के बाद, जानवर को उसकी पूंछ से पकड़ने में सफल रहा। इस कारनामे का वर्णन करना आसान है, करना मुश्किल, क्योंकि तिब्बती भेड़ों की पूंछ बहुत छोटी और ठूंठनुमा होती है। काची थककर जमीन पर गिर पड़ा, लेकिन उसने दोनों हाथों से अपनी पकड़ को मजबूती से पकड़े रखा और अंत में जानवर को रस्सियों से बांध दिया गया।

ऊबड़-खाबड़ ज़मीन पर चढ़ते हुए हम 15,580 फीट ऊँचे दर्रे पर पहुँचे—जो कोलोराडो के पाइक पीक से एक हज़ार फीट से भी ज़्यादा ऊँचा था। फिर एक चौड़े, समतल मैदान को पार करते हुए हम कुटी नदी के किनारे-किनारे चले, जिसके पश्चिम और पूर्व में ऊँचे, बर्फीले पहाड़ थे। 16,000 फीट की ऊँचाई पर हमेशा बर्फ जमी रहती थी; इस ऊँचाई से नीचे की बर्फ कुछ छायादार जगहों को छोड़कर रोज़ पिघलती थी। लाल और सफेद फूल अभी भी दिखाई दे रहे थे, हालाँकि नीचे की तुलना में उतनी मात्रा में नहीं। हमने काले-सफेद पंखों वाली छोटी तितलियों के कई जोड़े देखे।

कुछ देर बाद हमें एक और बेहद ठंडी धारा पार करनी पड़ी, दो छोटी झीलों के किनारे से होकर जाना पड़ा और तीन और गहरी नदियों को पार करना पड़ा, जिनमें बर्फ से पिघला ठंडा पानी हमारी छाती तक आ रहा था। हमें लोहे से भरी चट्टानों के एक विशाल मैदान से होकर यथासंभव बेहतर रास्ता बनाना था, जिसने मेरे कंपास को इतना प्रभावित किया कि वह कुछ समय के लिए पूरी तरह से अविश्वसनीय हो गया, क्योंकि वह दिशा भटकने लगा था।

हम मील दर मील नुकीले पत्थरों पर चलते रहे, एक मील चौड़े और आठ धाराओं वाले एक और मुश्किल डेल्टा को पार करते हुए आगे बढ़े, और अंत में नुकीले कंकड़ों से भरे एक समतल मैदान को भी पार किया। आखिरकार, हमें बड़ी राहत मिली जब हम समतल घास के मैदान पर पहुँचे।

यहां कुटी नदी एक विशाल घाटी से होकर बह रही थी, जो उस घाटी से मिलती-जुलती थी जिसके पास हमने पिछली रात डेरा डाला था। यह किसी झील के तल जैसी दिख रही थी, जिसके बाईं ओर ऊँची-ऊँची चट्टानें थीं। जैसे-जैसे हम उत्तर-पश्चिम की ओर बढ़ते गए, घाटी चौड़ी होती गई और कुटी नदी उत्तर-पश्चिम की ओर मुड़ गई, जबकि पूर्व से उतरती हुई मंगशान नदी घाटी के मध्य में पहली धारा से मिल गई। दोनों नदियों की कई शाखाओं से होकर गुजरते हुए हमें पिछले दिन की थकान और कठिनाई पहले से कहीं अधिक महसूस हो रही थी। पानी पहले से कहीं अधिक ठंडा लग रहा था। इस समय तक हमारे पैर बहुत बुरी हालत में थे, खून

बह रहा था और उनमें दर्द हो रहा था, क्योंकि हर कुछ मिनटों में जूते उतारने के बजाय नंगे पैर चलना ही ज़रूरी था। दर्द से कराहते और ठंड से कांपते हुए हम लड़खड़ाते हुए पानी में अंदर-बाहर होते रहे, ऐसा लग रहा था जैसे हम हमेशा नुकीले पत्थरों पर ही पैर रख रहे हों। दर्द को धैर्य से सहना पड़ा। आखिरकार हम अपने शिविर स्थल पर पहुँच गए, जो हमारे उत्तर में स्थित ऊँची पर्वत श्रृंखला की ओट में और मंगशान नदी के उत्तरी किनारे पर था। हमारे ठीक सामने अंतिम बाधा खड़ी थी—हिमालय पर्वतमाला की विशाल श्रृंखला। इस पर्वतमाला को पार करने के बाद, मैं तिब्बत के उस ऊंचे पठार पर पहुंच जाऊंगा जिसे "दुनिया की छत" के रूप में सटीक रूप से वर्णित किया गया है।

अध्याय III

बाल बाल बचना

कुटी से मैंने नट्टू नाम के एक बलवान शोका को यह पता लगाने के लिए भेजा था कि क्या ऊंचे मांगशान दर्रे से हिमालय पर्वतमाला को पार करना संभव है। अनुकूल सूचना मिलने पर मैं पकड़े जाने के डर के बिना तिब्बत में कई बार मार्च कर सकता था। मैंने सोचा था कि मैं उस सैन्य बल को घेर लूंगा जिसे तकलाकोट के जोंग पेन ने मुझे अपने देश में प्रवेश करने से रोकने के लिए लिप्पू दर्रे पर इकट्ठा किया था। तिब्बतियों को मेरे ठिकाने का पता चलने से पहले ही मैं इतनी दूर तिब्बती इलाके में पहुंच जाऊंगा कि वे मुझे पकड़ न सकें। नट्टू समय पर लौट आया। वह पहाड़ पर आधे रास्ते तक पहुंच गया था। बर्फ गहरी थी और बर्फ में बड़ी-बड़ी खतरनाक दरारें थीं। हिमस्खलन हुआ था और चमत्कार ही हुआ था कि वह बच गया। वह दर्रे की चोटी तक पहुंचे बिना ही वापस लौट आया था। वह डरा हुआ और थका हुआ था और उसने कहा कि हमारे लिए उस रास्ते से आगे बढ़ना असंभव है। कुटिया के लोगों के साथ हुई विपत्तियों की रोमांचक कहानी ने मेरे आदमियों का मनोबल गिरा दिया। भीषण ठंड, ऊबड़-खाबड़ इलाकों में ऊँचाई पर भारी बोझ ढोने की थकान और बार-बार पार की गई बर्फीली ठंडी नदियों के कारण, मेरे सामान ढोने वाले लोग आगे आने वाली नई कठिनाइयों के बारे में सोचकर पूरी तरह से हतोत्साहित हो गए। मुझे नट्टू की बात पर विश्वास नहीं हुआ। मैंने खुद जाकर देखने का निश्चय किया।

शाम के साढ़े चार बज रहे थे, यानी सूर्यास्त से कुछ समय पहले। चांदनी होनी चाहिए थी। उस दिन मैं आठ मील पैदल चल चुका था। यह याद रखना चाहिए कि अधिक ऊंचाई पर आठ मील चलना उतना ही कठिन होता है जितना कम ऊंचाई पर उससे दुगनी दूरी चलना। हालांकि मेरे पैर घायल और दर्द कर रहे थे, मैं थका नहीं था। हमारा शिविर 16,150 फीट की ऊंचाई पर था, जो यूरोप के सबसे ऊंचे पर्वत से भी अधिक ऊंचाई थी। डॉक्टर विल्सन ने मेरे साथ इस खोज यात्रा पर चलने की जिद की। काची राम और एक रोंगबा कुली ने भी स्वेच्छा से आने की पेशकश की। जोहारी बिजेसिंग भी कुछ समझाने-बुझाने के बाद हमारे छोटे से खोज दल के साथ चलने के लिए तैयार हो गया। चंदन सिंह को शिविर की जिम्मेदारी सौंपी गई थी और उसे सख्त आदेश दिया गया था कि मेरी अनुपस्थिति में भागने का प्रयास करने वाले किसी भी व्यक्ति को कड़ी सजा दी जाए।

हम ऊँची चट्टानों के बीच से होकर बहने वाली मंगशान नदी के बहाव के साथ-साथ आगे बढ़े। अंत में, यह नदी हमारे शिविर से लगभग तीन मील पूर्व-दक्षिण-पूर्व में स्थित मंगशान पर्वत की तलहटी में हिमनद पर जाकर मिलती थी। बड़े-बड़े, फिसलन भरे पत्थरों पर चलना बहुत कठिन था, जहाँ पैर लगातार फिसलते और चट्टानों के बीच फंसते रहते थे, जिससे टखनों में खिंचाव और दर्द होता था। चूंकि मुझे अपने हतोत्साहित साथियों पर भरोसा नहीं था, जो विद्रोह के कगार पर लग रहे थे, इसलिए मैंने अपने कोट में सिले हुए चांदी के रुपयों (800 रु.) का भारी बोझ शिविर में नहीं छोड़ा। मैं हमेशा अपने साथ इतनी राशि, अपनी राइफल, दो

कंपास (एक प्रिज्मीय और एक चमकदार), दो एनरॉइड, एक अर्ध-क्रोनोमीटर और एक घड़ी, और लगभग तीस राइफल कारतूस रखता था। इन सभी वस्तुओं का कुल वजन काफी था, और उस दोपहर तो यह मेरी ताकत से लगभग असहनीय था। हम पहाड़ियों की श्रृंखला पर ऊपर-नीचे चढ़ते-उतरते रहे, और सदियों से पिघलती बर्फ और हिम से बनी अनगिनत नालियों में से होकर गुज़रे, जो ढीले पत्थरों के ढेर में गहराई तक समा गई थीं। जहाँ दो पर्वत श्रृंखलाएँ मिलती थीं, वहाँ हमारे सामने मंगशान हिमनद की शानदार हल्के हरे रंग की बर्फ की सीढ़ियाँ खड़ी थीं, जिनके ऊपर विशाल बर्फ के मैदान पर्वत श्रृंखला की चोटी तक फैले हुए थे। बादलों ने ऊँची चोटियों को घेर रखा था। साफ बर्फ में ऊर्ध्वाधर धारियाँ दिखाई दे रही थीं, खासकर निचली परतों में, जहाँ यह दानेदार थी। खुले हुए हिस्से का आधार, किनारे और ऊपरी भाग बर्फ की मोटी परत से ढका हुआ था। मंगशान नदी इसी हिमनद से निकलती थी।

हम ग्लेशियर (समुद्र तल से 17,800 फीट ऊपर) को दाईं ओर छोड़कर, उत्तर की ओर तेज़ी से मुड़कर दर्रे की ओर चढ़ाई शुरू की। जिस बर्फ पर हम चल रहे थे वह इतनी नरम और गहरी थी कि हम कमर तक उसमें धंसते जा रहे थे। बीच-बीच में बर्फ की जगह ढीले मलबे और सड़ी हुई चट्टानों के टुकड़े दिखाई देते थे। ऐसी सतह पर चलने की थकान असहनीय थी। ढीले, नुकीले पत्थरों के बीच आधा दर्जन सीढ़ियाँ चढ़ने के बाद, हम लगभग अपने शुरुआती बिंदु तक फिसल जाते, और फिर खिसकते मलबे का एक छोटा हिमस्खलन होता जो पहाड़ की तलहटी तक पहुँचते ही रुक जाता।

19,000 फीट की ऊंचाई पर, हम कुछ देर तक नरम बर्फ पर चले, जिसने गहरी दरारों और गड्ढों वाले बर्फ के मैदान को ढक रखा था। हमें बहुत सावधानी से रास्ता टटोलना पड़ा, खासकर इसलिए क्योंकि जब तक हम उस स्थान पर पहुंचे, तब तक हमारे पास सहारा लेने के लिए केवल चंद्रमा का प्रकाश ही बचा था।

जैसे-जैसे हम ऊपर चढ़ते गए, मुझे एक अजीब सी थकावट महसूस होने लगी, जो मैंने पहले कभी अनुभव नहीं की थी। सूर्यास्त के समय, काची के पास मौजूद थर्मामीटर कुछ ही मिनटों में 40 डिग्री गिर गया था, और तापमान में अचानक आए इस बदलाव का असर हम सब पर पड़ा। हम सब आगे बढ़ते रहे, सिवाय बिजिंग के, जिसे इतनी भयंकर पर्वतीय बीमारी हो गई थी कि वह आगे नहीं बढ़ पा रहा था। डॉक्टर, जो एक मजबूत कद-काठी का आदमी था, भी काफी तकलीफ में था। उसने बताया कि उसके पैर सीसे के हो गए थे, और हर पैर एक टन भारी लग रहा था। उन्हें उठाने या हिलाने में भी उसकी सारी ऊर्जा लग जाती थी। हालांकि वह बुरी तरह हांफ रहा था, फिर भी उसने हिम्मत से संघर्ष किया और 20,500 फीट की ऊंचाई तक पहुँच गया। यहाँ पहुँचकर वह थकावट और दर्द से बेहाल हो गया, और आगे नहीं जा सका। काची राम, रोंगबा और मैं आगे बढ़े, लेकिन हम भी तकलीफ में थे। काची को कनपटी में तेज दर्द और कानों में भनभनाहट की शिकायत थी। वह हांफ रहा था और खतरनाक तरीके से लड़खड़ा रहा था, ऐसा लग रहा था जैसे वह किसी भी क्षण गिर जाएगा। 21,000 फीट की ऊंचाई पर वह बर्फ पर गिर पड़ा। वह तुरंत सो गया, उसकी सांसें तेज़ चल रही थीं और वह खर्राटे ले रहा था। उसके हाथ-पैर बर्फ से ठंडे थे। मुझे सबसे ज़्यादा चिंता उसके दिल की अनियमित धड़कन से हो रही थी। मैंने उसे उसके कंबल और अपने वाटरप्रूफ कपड़े में लपेट दिया, और

उसे आराम देने के बाद, मैंने डॉक्टर को आवाज़ लगाई (शांत हवा में मेरी आवाज़ दूर तक सुनाई दी) और उसे सब कुछ बताया। मैं रोंगबा के साथ आगे बढ़ा, जो अब दल में अकेला बचा था।

अचानक घने कोहरे ने हमें घेर लिया, जिससे हमारी मुश्किलें और बढ़ गईं। 21,000 फीट की ऊंचाई पर काची को पीछे छोड़ने के बाद हमने आगे बढ़ने के लिए जी-तोड़ कोशिश की। ऐसा लग रहा था मानो हमारी सांसें थमने वाली हों और दिल इतनी ज़ोर से धड़क रहा था मानो शरीर से बाहर निकल आएगा। थकावट और असहनीय नींद से बेहाल होकर, रोंगबा और मैं आखिरकार शिखर पर पहुँच गए। थकान से लगभग बेहोश होते हुए, मैंने अपने अवलोकन दर्ज किए। ऊंचाई 22,000 फीट थी, रात के 11 बज रहे थे। उत्तर-पूर्वी दिशा से तेज़, चुभने वाली हवा चल रही थी। ठंड बहुत तेज़ थी। मैं सही तापमान दर्ज नहीं कर पाया, क्योंकि काची के बेहोश होने पर मैं उसकी जेब से थर्मामीटर निकालना भूल गया था। तारे बेहद चमकदार थे, और जब कोहरा छटा तो मेरे चारों ओर फैले नज़ारे पर चाँद कुछ देर के लिए चमक उठा। हालाँकि यह पूरी तरह से वीरान दृश्य था, फिर भी यह अजीब तरह से आकर्षक था। पर्वत श्रृंखला के उत्तरी ढलान पर बर्फ की मात्रा दक्षिणी ढलान की तुलना में अधिक थी। मुझे इस ऊँचे स्थान से होकर अपना पूरा अभियान ले जाना असंभव सा लगने लगा। मेरे नीचे, दक्षिण की ओर, बर्फ से ढकी पर्वत श्रृंखलाएँ थीं, और दक्षिण-पश्चिम और उत्तर-पूर्व में मुझसे भी ऊँची चोटियाँ थीं। उत्तर की ओर विशाल, उबड़-खाबड़ तिब्बती पठार फैला हुआ था, जिसमें जटिल पर्वत श्रृंखलाएँ और ऊबड़-खाबड़ इलाके थे, जिसके पार दूर बर्फ से ढकी चोटियों वाली एक ऊँची पर्वत श्रृंखला मुश्किल से दिखाई दे रही थी।

प्रकृति के इस सुंदर दृश्य को मैंने अभी ठीक से देखा भी नहीं था कि मेरे सामने फिर से कोहरा छा गया और मैंने उसमें से एक विशालकाय भूत को निकलते देखा। एक लंबा, काला सा दिखने वाला व्यक्ति एक चमकदार वृत्त के केंद्र में खड़ा था, जो कोहरे के एक विशाल आवरण में लिपटा हुआ था। यह दृश्य अद्भुत था। कुछ क्षणों बाद मुझे एहसास हुआ कि उस भूत के चेहरे पर मेरी ही झलक थी और मैं एक वृत्ताकार चंद्र इंद्रधनुष के केंद्र में खड़ा था, कोहरे में अपने ही बड़े प्रतिबिंब को देख रहा था। जब मैं अपने हाथ, शरीर या सिर हिलाता, तो वह भूत जैसी आकृति भी हिलती। मुझे ऐसा महसूस हो रहा था जैसे कोई बच्चा पहली बार दर्पण के सामने खड़ा हो, और मैं उस विशाल छवि को हिलाने और अपनी हर अजीब हरकत को दोहराने के लिए मजबूर कर रहा था। बाद में एक बार मैंने सूर्य उदय के समय एक प्रेत देखा, जिसके चारों ओर एक वृत्ताकार इंद्रधनुष था। चंद्रमा की रोशनी का प्रभाव इससे अलग था, क्योंकि इंद्रधनुष के रंग बहुत धुंधले दिखाई दे रहे थे।

रोंगबा थककर गिर पड़ा था। मेरे फेफड़ों पर असामान्य दबाव के कारण मुझे इतनी कमजोरी महसूस हो रही थी कि तमाम कोशिशों के बावजूद मैं भी बर्फ पर गिर पड़ा। मैं और कुली, बुरी तरह कांपते हुए, ठंड से बचने के लिए एक ही कंबल ओढ़े हुए थे। हम दोनों को असहनीय नींद आ रही थी। मैंने उससे बहुत संघर्ष किया, क्योंकि मैं अच्छी तरह जानता था कि अगर मेरी पलकें एक बार बंद हो गईं तो वे लगभग हमेशा के लिए बंद ही रहेंगी। रोंगबा गहरी नींद में सो रहा था। मैंने अपनी आखिरी ताकत लगाकर अपनी आँखें खुली रखीं। ठंडी

हवा हमारे पास से सरसराती हुई गुज़री। वह सरसराहट आज भी मेरे कानों में गूंजती है! रोंगबा नीचे झुक गया, कांपते दांतों के साथ कराह रहा था। उसके अचानक कांपने से पता चल रहा था कि वह बहुत दर्द में है। उसे पूरा कंबल दे देना ही एकमात्र दया भाव था, जो वैसे भी हम दोनों के लिए छोटा पड़ रहा था। मैंने उसे उसके सिर और उसके दुबले-पतले शरीर के चारों ओर कसकर लपेट दिया। यह मेरे लिए असहनीय था। पूरी तरह थककर मैं बर्फ पर गिर पड़ा। मैंने टिमटिमाते तारों को देखने का आखिरी हताश प्रयास किया... मेरी दृष्टि धुंधली हो गई...

यह अर्धचेतना कितनी देर तक चली, मुझे नहीं पता। "यह भयानक है! डॉक्टर! काची!" मैंने बोलने की कोशिश की। मेरी आवाज़ गले में ही अटक गई थी। क्या जो मैं देख रही थी, वह सचमुच सच था? बर्फ की विशाल सफेद चादर पर काची और डॉक्टर बर्फ की मूर्तियों की तरह बेजान पड़े थे, मानो जम कर मर गए हों। अपने बुरे सपने में मैंने उन्हें उठाने की कोशिश की। वे अकड़े हुए थे। मैं उनके पास घुटनों के बल बैठ गई, उन्हें पुकारा और पूरी ताकत से उन्हें होश में लाने की कोशिश की। आधी बेहोशी की हालत में, मैंने बिजेसिंग को ढूंढने के लिए मुड़ा और जैसे ही मैंने ऐसा किया, मेरे अंदर की सारी ऊर्जा जम सी गई। मैंने खुद को पारदर्शी बर्फ की एक तेज़ी से सिकुड़ती हुई कब्र में घिरा हुआ देखा। मुझे लगा कि मैं भी जल्द ही अपने साथियों की तरह जम कर मर जाऊंगी। मेरे पैर, मेरे हाथ, सब बर्फ से जम चुके थे। इतनी भयानक मौत के करीब आने से मैं भयभीत तो थी, लेकिन साथ ही साथ मुझे एक अजीब सी सुस्ती और नींद भी आ रही थी, जो मुझे बिल्कुल भी बुरी नहीं लग रही थी। क्या मुझे खुद को ढीला छोड़ देना चाहिए, मेहनत की बजाय आराम और शांति को चुनना चाहिए, या फिर खुद को बचाने के लिए आखिरी संघर्ष करना चाहिए? बर्फ हर पल और भी कसती जा रही थी। मेरा दम घुट रहा था।

मैंने चीखने की कोशिश की, खुद को बर्फ से बाहर निकालने की कोशिश की, जो मुझे कुचल रही थी। मैंने ज़ोर से छलांग लगाई। फिर सब कुछ गायब हो गया... जमा हुआ काची, डॉक्टर, पारदर्शी मकबरा...

मैंने अपनी आँखें खोलीं। उनमें ऐसा दर्द हो रहा था मानो सुइयाँ चुभाई गई हों। ज़ोरदार बर्फ़बारी हो रही थी। मेरे पैर और उंगलियाँ कुछ समय के लिए सुन्न हो गई थीं। वे लगभग जम गई थीं। उस भयानक बुरे सपने से जागते ही मुझे तुरंत एहसास हुआ कि मुझे तुरंत नीचे उतरना होगा। मैं पहले से ही बर्फ़ की एक मोटी परत से ढका हुआ था। जब मैं जागा तब ज़ोरदार बर्फ़बारी हो रही थी, और शायद मेरे माथे पर जमी ठंडी बर्फ़ ही मेरे बुरे सपने का कारण थी। यह पूरी तरह संभव है कि अगर अचानक आए झटके से मैं बर्फ़ से मुक्त न हुआ होता, तो मैं कभी जाग ही न पाता।

मैं बड़ी मुश्किल से उठा और धीरे-धीरे अपने निचले अंगों को रगड़कर और पीटकर उनमें जान वापस लाने लगा। मैंने रोंगबा को जगाया, उसे रगड़ा और तब तक हिलाया जब तक वह हिलने-डुलने लायक नहीं हो गया। फिर हमने नीचे उतरना शुरू किया।

इसमें कोई शक नहीं कि ऊंचे पहाड़ों पर चढ़ने का संतोष बहुत बड़ा होता है, लेकिन क्या इसकी तुलना नीचे उतरने के आनंद से की जा सकती है?

ढलान बहुत खड़ी होने के कारण हम बर्फ पर लंबे-लंबे कदम रखते हुए आगे बढ़े। जब हम बर्फ के ढेर पर पहुँचे तो फिसलते हुए तेज़ी से नीचे उतरने लगे। हमारे फिसलने से पत्थरों का विशाल ढेर हिल उठा और ज़ोरदार गड़गड़ाहट हुई। अभी भी बर्फ गिर रही थी।

मैंने रोंगबा से कहा, "सुनो! यह क्या है?"

हमने अपने कानों पर हाथ रखकर ध्यान से सुना।

"आओ, आओ, आओ! जल्दी आओ! तुमका हटते?" (आओ, आओ, आओ! जल्दी आओ! तुम कहाँ हो?) बहुत नीचे से एक कमजोर, व्याकुल आवाज आई।

हमने अपनी गति तेज कर दी। पैरों पर लगभग कोई नियंत्रण न होने के कारण, हमारा उतरना बेहद तीव्र था। बर्फबारी रुक गई और हम एक बर्फीले घने कोहरे में घिर गए जो हमारी हड्डियों तक को भेद रहा था।

डॉक्टर की चिंता भरी चीखों से निर्देशित होकर, हमने अपनी तेज़ गति से नीचे की ओर यात्रा जारी रखी। चीखें धीरे-धीरे और स्पष्ट होती गईं, और अंत में हम विल्सन के सामने आ पहुँचे, जो अभी भी असहाय था।

वह हमारे बारे में चिंतित था, और हमारी लंबी अनुपस्थिति के दौरान उसने हमें लगभग खोया हुआ मान लिया था।

हमने काची को ढूंढा और वह मिल गया। वह अपनी गर्म कंबल और मेरे वाटरप्रूफ कोट में लिपटा हुआ गहरी नींद सो रहा था। अब वह काफी तरोताजा था। हम सब बिना किसी बड़ी दुर्घटना के नीचे की ओर अपनी दौड़ जारी रखते रहे। जैसे-जैसे हम कम ऊंचाई पर उतरते गए, जीवन और शक्ति धीरे-धीरे वापस लौटती गई।

उसी पथरीली घाटी को पार करते हुए हम सुबह शिविर में पहुँचे। शिविर में मेरे साथियों की चिंता चरम पर थी। उन्होंने हमें दोबारा देखने की सारी उम्मीद खो दी थी।

अध्याय IV

जासूसों द्वारा निगरानी की जा रही है

कुछ घंटों के आराम और भरपेट भोजन के बाद, सुबह 9 बजे तक हम फिर से तैयार थे, इस बार पूरे अभियान दल के साथ, आसान लुम्पिया दर्रे को पार करने के लिए। टेंट के अंदर थर्मामीटर में 40° तापमान दर्ज था। रात के दौरान बाहर का न्यूनतम तापमान 14° था। हमने पर्वत श्रृंखला की तलहटी में कुटी नदी का अनुसरण किया। एक ऊंचे टीले को पार करते हुए, जहां कुटी नदी एक संकरे रास्ते से बह रही थी, हमने एक टीले पर चौदह पत्थर के खंभे और पिरामिड देखे जिन पर सफेद पत्थर लगे थे और कुछ तिब्बती "उड़ती प्रार्थनाएं" थीं, जो हवा में लहराते कपड़े की पट्टियों जैसी लग रही थीं। यहीं से लुम्पिया दर्रे की चढ़ाई शुरू हुई।

हमारा रास्ता धीरे-धीरे ऊपर की ओर चढ़ता गया, पहले उत्तर-पश्चिम की ओर, फिर उत्तर-पूर्व की ओर मुड़कर, हम 17,350 फीट की ऊंचाई पर गहरी बर्फ से ढके एक समतल मैदान पर पहुँच गए। अब तक तो हमें कोई खास परेशानी नहीं हुई थी, लेकिन अचानक हालात बिगड़ गए। मेरे आगे चल रही लंबी, खामोश कतार में हर कुली घुटनों तक, और अक्सर कमर तक, बर्फ में धंसा हुआ था। उनके काले चेहरे, जो पगड़ी से कसकर ढके हुए थे, सफेद पृष्ठभूमि पर स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहे थे। कुछ ने कान ढकने वाली फर की टोपियाँ पहन रखी थीं। सभी ने भेड़ की खाल के कोट और ऊँचे जूते पहन रखे थे। कई लोग बर्फ के चश्मे का इस्तेमाल कर रहे थे। पीठ पर भारी बोझ लादे, हाँफते-हाँफते ऊपर की ओर संघर्ष करते इन लोगों के खामोश जुलूस को देखकर, मन में चिंता होने लगी कि उनमें से कितने लोग अपने देश जीवित लौट पाएंगे। खतरनाक दरारों से बचने के लिए सावधानी से आगे बढ़ते हुए, मैं छह सौ फीट ऊँची एक जगह पर पहुँचा, जहाँ मैं बर्फ से लगभग मुक्त एक चट्टानी द्वीप पर थोड़ी देर रुका। एक के बाद एक कुली हांफते हुए आते रहे, तो उसने अपना बोझ नीचे रखा और चुपचाप उसके किनारे बैठ गया। किसी ने कोई शिकायत नहीं की, न ही उस कठिन परिश्रम के लिए कोई निंदा की जो उन्हें सहना पड़ रहा था। ओले गिर रहे थे, और सब कुछ गीला और ठंडा था। इस बिंदु से हमारे सामने एक खड़ी चढ़ाई थी। बाईं ओर एक हिमनद था, जिसका मुख लगभग सौ फीट ऊँचा बर्फ की एक खड़ी दीवार जैसा था। मंगशान हिमनद की तरह, यह सुंदर, साफ बर्फ की क्षैतिज परतों में था, जिसमें गहरे हरे रंग की ऊर्ध्वाधर धारियाँ थीं।

डॉक्टर और मैं आगे बढ़ गए। शिखर तक पहुँचने की हड़बड़ी में हम दिशा को लेकर भ्रमित हो गए। अत्यधिक थकान के साथ हमने एक बेहद खड़ी चढ़ाई चढ़ी। यहाँ हम मुश्किल से मिलने वाले ढीले पत्थरों के एक हिस्से पर आ गए, जिन पर हमें आधे घंटे से अधिक समय तक संघर्ष करना पड़ा, जब तक कि हम पर्वत श्रृंखला के शिखर पर नहीं पहुँच गए, जो 18,750 फीट ऊँचा था—दर्रे से काफी ऊँचा। बाकी अधिकांश लोग ग्लेशियर के किनारे से होकर जाने वाले एक खतरनाक रास्ते से आगे बढ़ चुके थे।

उत्तर-पूर्व से आती हवा बहुत तेज़ थी और ठंड असहनीय थी। इस ऊँचे स्थान से हमें तिब्बती पठार का एक सुंदर विहंगम दृश्य दिखाई दिया। हिमालय के तिब्बती भाग के साथ-साथ हमारे ठीक सामने स्थित निचली

पर्वत श्रृंखला, जो लगभग हमारी श्रृंखला के समानांतर थी, बर्फ की विशाल चादरों से ढकी हुई थी। इन दोनों श्रृंखलाओं के बीच, दो हज़ार फीट नीचे, एक चौड़ी बंजर घाटी में, दरमा यांकती नामक नदी बह रही थी। यही नदी उस महान नदी का मुख्य स्रोत है जो बाद में सतलुज कहलाती है। मुझे इस बात की खुशी थी कि मैं उस स्थान पर जाने वाला पहला श्वेत व्यक्ति था जहाँ से यह नदी निकलती है। दूर तक, नदी से लगभग आठ सौ फीट ऊपर उठा हुआ एक समतल पठार, जो एक विशाल रेलवे तटबंध जैसा दिखता था, कई मील तक दिखाई दे रहा था। उत्तर की ओर दूर बर्फ से ढकी ऊँची नीली पर्वत श्रृंखला खड़ी थी—निस्संदेह यह केलास चोटियों सहित गंगरी श्रृंखला थी।

इस विरल हवा में परिश्रम के कारण एक दर्दनाक घटना घटित हुई। ठंड और थकान से बेहाल, रुबसो नामक एक व्यक्ति, जो ईसाई धर्म में परिवर्तित हुआ था, को ऐंठन होने लगी। वह अर्धचेतन अवस्था में पड़ा था, उसके दांत किटकिटा रहे थे, चेहरा विकृत और पीला पड़ गया था; उसकी आंखें धंसी हुई और बेजान थीं। हम उसे एक चट्टान की आड़ में ले गए और उसके शरीर को अच्छी तरह से रगड़ा, ताकि रक्त संचार बहाल हो सके। अंततः वह इतना ठीक हो गया कि हमारे साथ चल सके।

अपने उच्चतम बिंदु से अब हमें छह सौ फीट नीचे दर्रे तक उतरना था। हम खतरनाक चट्टानों और मलबे के बीच से अपना रास्ता बनाते हुए आगे बढ़े। मैं अपनी आधी जमी हुई उंगलियों से एक उभरी हुई चट्टान को पकड़े हुए था, तभी मुझे नीचे से चीखने की आवाज सुनाई दी। बर्फ की खड़ी ढलान पर दो कुली, अपने-अपने बोझ के साथ, अपना संतुलन खो बैठे और अविश्वसनीय गति से फिसल रहे थे। वे अंततः घाटी के तल पर पहुँच गए, जहाँ ढलान में बदलाव के कारण वे अनजाने में पलट गए, और उनका बोझ चारों ओर बिखर गया। जब मैंने उन्हें फिर से उठते देखा तो मुझे राहत मिली। उनमें से एक लड़खड़ाया और दूसरी बार ऐसे गिर पड़ा जैसे मर गया हो। फिसलन भरी चट्टानों पर तेजी से चलते हुए, और फिर ढीले पत्थरों पर से नीचे उतरते हुए, मैं दर्रे पर पहुँच गया। यह समुद्र तल से 18,150 फीट ऊपर था। संकट में फंसे कुली की मदद के लिए दो अनिच्छुक लोगों को भेजा गया। उसे और उसके बोझ को अंततः उस स्थान तक लाया गया जहाँ मैं था। वह बुरी तरह से सहम गया था और उसके पूरे शरीर में दर्द हो रहा था, लेकिन वह हमारे साथ आगे बढ़ने में सक्षम था।

हम तिब्बती तरफ की खड़ी ढलान से तेज़ी से नीचे उतरे, ताकि कड़ाके की ठंड और तेज़ हवा वाले दर्रे से जल्दी निकल सकें। एक चौड़ा मोड़ लेते हुए और फिर कई लंबी बर्फ की चादरों को पार करते हुए, हम आखिरकार नदी के किनारे पहुँचे और 16,900 फीट की ऊंचाई पर बर्फ पर अपने तंबू गाड़ दिए। वहाँ न लकड़ी थी; न याक या टट्टू का गोबर, न लाइकेन, न काई, और इसलिए आग जलाने के लिए कुछ भी नहीं था। मेरे साथियों का मानना था कि इतनी ऊंचाई पर, जब तापमान कम हो, ठंडा खाना खाने से निश्चित रूप से मौत हो जाती है। उन्होंने बिना भोजन के रहना ही बेहतर समझा। रात हुई और उसके साथ ही तेज़ हवा चलने लगी, जिससे हमारे तंबुओं के चारों ओर बजरी और बर्फ जमा हो गई। रात में, जब एक भयंकर तूफान चल रहा था, हमें अपने फड़फड़ाते तंबुओं को कई बार खोलकर ढीली हुई कीलों को कसना पड़ा। जमी हुई रस्सियों को फिर से कसना बर्फीले ठंडे काम जैसा था। रात के 2 बजे थर्मामीटर 12 डिग्री तक गिर गया था;

सुबह 9 बजे, धूप में तापमान 26 डिग्री तक पहुंच गया, और उसी समय तम्बू के अंदर तापमान 32 डिग्री था - जो हिमांक बिंदु है।

धूल भरी आंधी और मूसलाधार बारिश में हमने जैसे-तैसे अपना सामान समेटा और फिर से चल पड़े। मुझे आश्चर्य हुआ जब मैं अपने आदमियों से आगे बढ़ते हुए, अपने पुराने शिविर से लगभग दो सौ गज की दूरी पर, बर्फ में हाल ही के पदचिह्नों की दोहरी रेखा दिखाई दी। हमारी ओर आने वाले पदचिह्न कुछ धुंधले थे और लगभग धूल से ढके हुए थे; विपरीत दिशा में जाने वाले पदचिह्न बिल्कुल नए लग रहे थे। इन पदचिह्नों का ध्यानपूर्वक निरीक्षण करने के बाद, मुझे यकीन हो गया कि ये किसी तिब्बती के थे। जहाँ पदचिह्न हमारे शिविर के सबसे करीब थे, वहाँ बर्फ में बने निशानों से पता चलता था कि वह व्यक्ति अलग-अलग जगहों पर बर्फ पर लेटा था। जाहिर है, रात भर हमारी जासूसी की गई थी और हम पर नजर रखी गई थी। मेरे आदमी, जो पहले से ही तिब्बतियों से डरे हुए थे, अब सभी इन पदचिह्नों पर चिंतित होकर झुक रहे थे। उनमें से कुछ का मानना था कि वह अजनबी कोई डाकू (लुटेरा) होगा, और रात में पूरा गिरोह हम पर हमला कर देगा; दूसरों का मानना था कि जासूस केवल ज्ञानमा अधिकारियों द्वारा हमारी गतिविधियों पर नजर रखने के लिए भेजा गया कोई सैनिक हो सकता है। उन्होंने इस घटना को अपशगुन माना।

हम समतल या हल्की ढलान वाली बंजर भूमि पर यात्रा कर रहे थे। हमने कमर तक पानी में डूबी एक और ठंडी नदी को पार किया। मेरे साथी इतने थक गए कि एक मील आगे जाकर हमें रुकना पड़ा। इस स्थान की ऊंचाई 16,650 फीट थी।

ठंड बहुत तेज़ थी। हमारे पास फिर से किसी भी तरह का ईंधन नहीं था। तेज़ हवा चल रही थी। शाम को भारी बर्फ़बारी हुई। मेरे सामान ढोने वाले, आधे भूखे, थोड़ा सा सत्तू (एक प्रकार का दलिया) खा पाए, लेकिन राजिपुट चंदन सिंह, अपनी जाति का उल्लंघन किए बिना कपड़े उतारे बिना खाना नहीं खा सकते थे। उन्हें खाना खाए दो दिन हो गए थे, लेकिन अपने धर्म के नियमों को तोड़ने या इतनी ठंड में कपड़े उतारने के बजाय, उन्होंने कंबल में लिपटकर भूखे पेट सोना बेहतर समझा।

तंबू के अंदर का तापमान 28 डिग्री फ़ारेनहाइट था, यानी हिमांक बिंदु से नीचे। ज़मीन पर एक फुट मोटी बर्फ़ जमी थी और ज़ोरदार बर्फ़बारी हो रही थी। ठंड से बचने के लिए सामान ढोने वाले एक-दूसरे से सटकर बैठे थे और भूख भुलाने के लिए सोने की कोशिश कर रहे थे।

दो-तीन घंटे बाद मौसम साफ हो गया। आधे भूखे-प्यासे कुली शिकायत करने आए कि उन्हें खाना पकाने के लिए ईंधन नहीं मिल रहा है और वे मुझे वहीं छोड़ देंगे। यह बहुत मुश्किल समय था। मैंने तुरंत अपना दूरबीन उठाया और एक छोटी सी पहाड़ी पर चढ़ गया। यह देखना दिलचस्प था कि कुलियों को इस दूरबीन पर कितना भरोसा था। वे बच्चों की तरह मानते थे कि इससे मैं पहाड़ों के पार देख सकता हूँ। मैं उन्हें खुशखबरी देते हुए नीचे आया कि एक दिन की पैदल यात्रा के बाद हम एक ऐसी जगह पहुँच जाएँगे जहाँ ईंधन भरपूर मात्रा में उपलब्ध है।

वे खुशी-खुशी सामान समेटने लगे और असाधारण ऊर्जा के साथ उस दिशा में चल पड़े जो मैंने बताई थी। हम नदी के दूसरी ओर स्थित ऊँचे, समतल पठार के समानांतर चल रहे थे। यह बर्फ से ढका पठार दक्षिण-पश्चिम से उत्तर-पूर्व तक फैला हुआ था। इसके उत्तर में कुछ ऊँची, बर्फीली चोटियाँ दिखाई दे रही थीं—संभवतः ये गार्टोक के दक्षिण-पूर्व में स्थित ऊँची चोटियाँ थीं। हमारे दाहिनी ओर ऊँचे, ऊबड़-खाबड़ पहाड़ थे, जिनकी ढलानों से जगह-जगह छोटी-छोटी नदियाँ बह रही थीं। छह घंटे की तेज चाल से चलते हुए हम एक सुरक्षित स्थान पर पहुँचे जहाँ कुछ लाइकेन और झाड़ियाँ उग रही थीं। अगर हम अचानक जर्मनी के ब्लैक फ़ॉरेस्ट या योसेमाइट घाटी में पहुँच जाते, जहाँ सदियों पुराने विशाल वृक्ष हैं, तो हमारी खुशी का कोई ठिकाना नहीं होता, फिर भी इन झाड़ियों में से सबसे ऊँची झाड़ी भी ज़मीन से छह या सात इंच से ज़्यादा ऊँची नहीं थी, जबकि लकड़ी का सबसे बड़ा टुकड़ा जो हमने इकट्ठा किया, वह एक साधारण पेंसिल से भी बड़ा नहीं था। सभी लोग पूरी तेज़ी से इन पौधों को ईंधन के लिए उखाड़ने में जुट गए।

रात होते ही उतने ही लोग खाना पकाने में जुट गए और अलग-अलग बर्तनों से गरमागरम खाना निकालकर भूखे-प्यासे मजदूरों को परोसने लगे। शिविर में खुशी का माहौल छा गया। हाल की सारी कठिनाइयाँ भुला दी गईं।

जब हम उठे तो एक नया आश्चर्य हमारा इंतजार कर रहा था। भिखारियों के वेश में दो तिब्बती हमारे शिविर में आए। उन्होंने ठंड और भूख से पीड़ित होने का नाटक किया। मैंने आदेश दिया कि उन्हें ठीक से भोजन कराया जाए और उनके साथ अच्छा व्यवहार किया जाए। पूछताछ करने पर उन्होंने कबूल किया कि वे ज्ञानेमा के अधिकारी द्वारा भेजे गए जासूस थे, जो यह पता लगाने आए थे कि क्या कोई श्वेत व्यक्ति सीमा पार कर गया था और क्या हमने उसे देखा था।

सुबह हमें इतने सारे काम निपटाने थे और इतनी ठंड थी कि नहाना सचमुच झंझट बन गया था। मैंने तो फिलहाल के लिए नहाना छोड़ ही दिया। हम धूप से झुलस चुके थे और हमने पगड़ी व चश्मा पहन रखा था, इसलिए तिब्बती लोग यह सोचकर चले गए कि हमारे दल में एक हिंदू डॉक्टर, उसका भाई और नौकरों का एक काफिला है (जिनमें से किसी ने भी गोरे आदमी को नहीं देखा था), और हम अब पवित्र मानसरोवर झील और कैलाश पर्वत की तीर्थयात्रा पर हैं।

वहाँ मौजूद लोगों के सामने हमने इसे एक बड़ा मज़ाक समझा, लेकिन फिर भी, विल्सन और मैंने अपनी तत्काल योजनाओं पर चिंतापूर्वक विचार-विमर्श किया। क्या हमें रात में ही दाईं ओर स्थित पर्वत श्रृंखला को पार करके तेज़ी से आगे बढ़ना चाहिए और जंगल के रास्ते पूर्व की ओर आक्रमण करना चाहिए, या फिर हमें ग्यानेमा नेता और उसके सैनिकों का सामना करना चाहिए?

हमने उनसे मिलने का फैसला किया बजाय इसके कि हम अपना रास्ता बदलें। मैंने तुरंत डेरा हटाने का आदेश दिया।

अध्याय V

सैनिकों द्वारा चेतावनी दी गई

हमने अपना मार्ग उत्तर से उत्तर-पूर्व की ओर मोड़ा और 16,600 फीट की ऊँचाई पर चढ़ गए। हम लामा चोक्तेन पहुँचे, जो तिब्बती पहरेदारों द्वारा संरक्षित एक दर्रा था। सैनिक तुरंत बाहर आ गए, उनके हाथों में बंदूकें थीं। वे दयनीय लग रहे थे। उन्होंने कोई प्रतिरोध नहीं किया, बल्कि पैसे और भोजन की भीख माँगी। सैनिकों ने अपने वरिष्ठों द्वारा दुर्व्यवहार की शिकायत की। उन्हें कोई वेतन नहीं मिलता था, और इस चौकी पर भोजन भी कभी-कभार ही भेजा जाता था। उनकी कमीज़ें फटी हुई थीं। प्रत्येक सैनिक कमरबंद के सामने तलवार गँवाए हुए था। यहाँ भी, हमें उस युवा साहब, यानी गोरे व्यक्ति के बारे में और पूछताछ करनी पड़ी। तकलाकोट से घुड़सवार दूतों को तुरंत भेजा गया था ताकि ज्ञानेमा अधिकारी को चेतावनी दी जा सके कि यदि वह लुम्पिया दर्रे से आने का प्रयास करे तो उसे हुंडेस (तिब्बती नाम) में प्रवेश न करने दिया जाए। मेरे कथित रूप-रंग का उनका वर्णन मुझे काफी मनोरंजक लगा, और जब उन्होंने कहा कि अगर साहब उनके रास्ते में आए तो वे उनका सिर काट देंगे, तो मैं उनके सौम्य विश्वास से इतना प्रभावित हुआ कि मैं उनमें कुछ रुपये बांटना चाहता था।

"महाराज, इन्हें कुछ मत दीजिए," काची और डॉक्टर ने कहा। "ये लोग डाकुओं के दोस्त हैं। अगर इन्हें पता चल गया कि आपके पास पैसा है, तो हम पर इनके हमले का बहुत बड़ा खतरा होगा।"

मैंने उन्हें उपहार देने पर जोर दिया।

"नहीं, श्रीमान," काची ने कहा; "ऐसा मत कीजिए, वरना हमें मुसीबत और विपत्ति आएगी। अगर आप उन्हें चार आने दे दें, तो यह काफी होगा।"

तदनुसार, कमान अधिकारी ने यह बड़ी रकम अपनी फैली हुई हथेली में रखवाई। अपनी संतुष्टि दर्शाने के लिए, उन्होंने अपनी जीभ पूरी तरह बाहर निकाली, कृतज्ञता के प्रतीक के रूप में दोनों हाथ हिलाए और साथ ही अनाड़ीपन से झुके। उनकी फर की टोपी पहले ही उतारकर ज़मीन पर फेंक दी गई थी। आठ सेंट से कुछ कम की इस भेंट के लिए इतनी औपचारिकताएँ बरती गईं।

इस स्थान से मुझे एक सुंदर दृश्य दिखाई दिया। उत्तर दिशा में बादल छंट गए थे और बर्फ से ढका पवित्र केलास पर्वत हमारे सामने प्रकट हो रहा था। किसी मंदिर की भव्य छत की तरह, केलास पर्वत लंबी, बर्फ से ढकी पर्वत श्रृंखला के ऊपर स्थित था, और निचले इलाकों के गर्म सिएना रंग के साथ अपने रंगों के सुंदर मिश्रण से एक अलग ही आभा बिखेर रहा था। केलास, गंगरी पर्वत श्रृंखला की अन्य चोटियों से लगभग दो हजार फीट ऊंचा था। इसमें स्पष्ट रूप से परिभाषित चट्टानें और चबूतरे थे जो इसकी परतदार संरचना को दर्शाते थे, और ये बर्फ से घिसी हुई गहरी चट्टानों के विपरीत चमकदार सफेद बर्फ की क्षैतिज परतों से ढके हुए थे। तिब्बती, नेपाली, शोक, हुमली, जुमली और हिंदू, सभी इस पर्वत के प्रति गहरी श्रद्धा रखते थे, जिसे वे सभी अच्छे देवताओं, विशेष रूप से भगवान शिव का निवास स्थान मानते थे। वास्तव में, हिंदुओं का मानना था

कि इसके आधार के चारों ओर की चट्टान उन रस्सियों का निशान है जिनका उपयोग राक्षस "राकस" ने शिव के सिंहासन को गिराने के प्रयास में किया था।

मेरे साथी, सिर ढके हुए, पवित्र शिखर की ओर मुख किए हुए, प्रार्थना कर रहे थे। उन्होंने हाथ जोड़कर, जिन्हें वे धीरे-धीरे माथे तक उठाते थे, श्रद्धापूर्वक प्रार्थना की और फिर घुटनों के बल बैठकर सिर जमीन पर टिका दिए। मेरे पास खड़ा मेरा साथी, जो एक डाकू था, फुसफुसाते हुए बोला कि मुझे भी प्रार्थना में शामिल होना चाहिए।

“तुम्हें देवताओं से मित्रता रखनी चाहिए,” डाकू ने कहा; “यदि तुम केलास के सामने सिर नहीं झुकाओगे तो दुर्भाग्य तुम्हारा पीछा करेगा। वह एक अच्छे देवता का निवास स्थान है!” और उसने अत्यंत श्रद्धा और विश्वास के साथ शिखर की ओर इशारा किया।

उन्हें प्रसन्न करने के लिए, मैंने बड़े आदर के साथ पर्वत को प्रणाम किया और अपने साथियों का अनुकरण करते हुए, एक सफेद पत्थर चोक्तेन या ओबो (पत्थर के स्तंभ) पर रख दिया। इस स्थान पर भक्तों द्वारा ऐसे सैकड़ों स्तंभ स्थापित किए गए थे। ये ओबो, या पत्थरों के ऊबड़-खाबड़ पिरामिड, ऊंचे दर्रों के रास्तों पर, झीलों के पास और नदियों के उद्गम स्थलों पर पाए जाते थे। मैंने लामा चोक्तेन में जितने ओबो देखे, उतने कहीं और नहीं देखे थे। प्रत्येक राहगीर इनमें से किसी एक ओबो पर एक सफेद पत्थर रखता था। ऐसा माना जाता था कि इससे सौभाग्य प्राप्त होता है।

खुरदुरे पत्थरों से बना वह चौकीदार घर, तिब्बत को छोड़कर किसी भी देश में मनुष्यों की तुलना में सूअरों के लिए अधिक उपयुक्त माना जाएगा।

लगभग एक मील आगे जाने पर, जैसे-जैसे सूरज ढलने लगा, हम अपने तंबू लगाने के लिए उपयुक्त जगह खोजने लगे। पानी का कोई नामोनिशान नहीं था, बस एक सूखी हुई छोटी नदी का पथरीला तल था। हम स्थिति पर चर्चा कर ही रहे थे कि हमें बहते पानी की हल्की सी आवाज़ सुनाई दी। आवाज़ धीरे-धीरे तेज़ होती गई, और फिर हमने देखा कि बर्फ़ के पानी की एक निर्मल धारा धीरे-धीरे पत्थरों पर से रिसती हुई हमारी ओर आ रही है। ज़ाहिर है, पहाड़ों की बर्फ़, जो दिन भर में पिघल गई थी, अब जाकर उस जगह तक पहुँची थी जहाँ हम खड़े थे। मेरा साथी बहुत उत्साहित हो गया।

“आपकी ओर जल बह रहा है, साहब!” उन्होंने बाहें फैलाते हुए कहा। “आपका सौभाग्य होगा! देखिए! देखिए! आपको अपने शिविर के लिए पानी चाहिए और एक धारा आपकी ओर आ रही है! ईश्वर की कृपा आप पर बनी रहे। जैसे ही जल आपके पास आए, अपनी उंगलियाँ उसमें डुबोकर कुछ बूँदें अपने कंधों पर डाल लीजिए। फिर सौभाग्य आपकी यात्रा में आपका साथ देगा।”

मैं आसानी से इस तिब्बती अंधविश्वास में शामिल हो गया। हम सबने अपनी उंगलियाँ पानी में डुबोईं और पानी को अपनी पीठ पर छिड़का। हालाँकि, विल्सन, जो इस मामले को गंभीरता से ले रहे थे, ने कहा कि यह सब बकवास है और वे ऐसे "बचकाना अंधविश्वासों" के आगे नहीं झुकेंगे।

हमारे शिविर के सामने लगभग दस मील लंबा और चौदह मील चौड़ा समतल जलोढ़ भूभाग फैला हुआ था, जो देखने में किसी झील का तल प्रतीत होता था। अपनी दूरबीन से मैंने एक छोटी पहाड़ी की तलहटी में कार्को का शिविर स्थल देखा। वहाँ अनेक तंबू लगे हुए थे। मेरे साथियों को तंबूओं के आकार और रंग से यह देखकर तंबू देखकर तसल्ली हुई कि ये मिलम के जोहारी जनजाति के थे, जो तिब्बतियों के साथ व्यापार करने के लिए यहाँ आए थे। कार्को के उत्तर में जल का एक विशाल क्षेत्र, ज्ञानेमा झील, चमक रही थी, और उसके आगे अपेक्षाकृत नीची पर्वत श्रृंखलाएँ दिखाई दे रही थीं। दूर बर्फ से ढकी चोटियाँ भी नज़र आ रही थीं।
शिविर छोड़ने के बाद हमने उत्तर-पूर्व दिशा में छह मील तक मैदान को पार किया, और फिर पहाड़ियों से घिरी एक छोटी घाटी में मुड़ गए, जिसका हमने तीन या चार मील की दूरी तक अनुसरण किया।
अपनी यात्रा के दौरान हमने कई जंगली घोड़ों के झुंड देखे। वे हमारे करीब आ गए। वे ज़ेबरा जैसे दिखते थे, बस उनका रंग हल्का भूरा था। उनकी आकर्षक और चंचल चाल बहुत लुभावनी थी। स्थानीय लोग इन जानवरों की निकटता को खतरनाक मानते थे, क्योंकि उनका दिखने में शांत स्वभाव केवल अनजान यात्री के बिल्कुल पास आने और फिर अचानक झपट्टा मारकर ज़ोरदार काटने के लिए होता था।
एक पहाड़ी श्रृंखला पर चढ़ने के बाद, हम दूसरी ओर एक समतल घास के मैदान में उतरे, जिसके उत्तरी किनारे पर एक झील थी। झील के दक्षिण में एक पहाड़ी पर ज्ञानेमा किला खड़ा था, जो पत्थर से बनी एक आदिम, मीनार जैसी संरचना थी, जिसके ऊपर छत के रूप में एक तंबू लगा हुआ था। एक ध्वजदंड से दो गंदे सफेद कपड़े लटके हुए थे। ये राष्ट्रीय ध्वज नहीं थे, बल्कि केवल हवा में उड़ने वाली प्रार्थनाएँ थीं। नीचे, पहाड़ी की तलहटी में, दो या तीन बड़े काले तंबू और पत्थर की एक छोटी सी झोपड़ी थी। सैकड़ों काले, सफेद और भूरे याक हरी घास के मैदानों पर चर रहे थे।
हमारे दल के प्रकट होने से सब लोग भयभीत हो गए थे, क्योंकि दर्रे की चोटी पर पहुँचते ही किले में एक घंटा ज़ोर से बजने लगा, जिसकी धातुई ध्वनि पूरे वातावरण में गूंज उठी। एक गोली चली। सैनिक अपनी बंदूकें लिए इधर-उधर भागने लगे। उन्होंने एक काला तंबू उखाड़ा और जल्दी से उसे किले के अंदर ले गए। किले की अधिकांश टुकड़ियाँ भगदड़ मचाते हुए किले की दीवारों के भीतर शरण लेने लगीं। कुछ समय बाद जब उन्हें यकीन हो गया कि हम उन्हें नुकसान नहीं पहुँचाना चाहते, तो कुछ तिब्बती अधिकारी अपने आदमियों के साथ कांपते हुए हमसे मिलने आए। निहत्थे डॉक्टर उनसे बात करने के लिए आगे बढ़ गए, जबकि चंदेन सिंह और मैं कुलियों के साथ रुके रहे ताकि किसी भी अप्रत्याशित हमले की स्थिति में अपने सामान की रक्षा कर सकें और अपने भयभीत भारवाहकों को अपना सामान छोड़कर भागने से रोक सकें। स्थिति काफी शांत लग रही थी। घास पर चटाई बिछाई गई और अंत में हम सब बैठ गए। तिब्बती अधिकारियों के साथ एक घंटे तक उबाऊ बातचीत चली, जिसमें बार-बार वही बातें दोहराई गईं, लेकिन कोई नतीजा नहीं निकला। उन्होंने कहा कि वे किसी भी हालत में भारत से किसी को भी, चाहे वह भारतीय हो या साहिब, आगे नहीं जाने देंगे, और हमें वापस लौटना होगा। हमने अपनी ओर से कहा कि हम कोई नुकसान नहीं पहुंचा रहे हैं। हम पवित्र मानसरोवर झील के तीर्थयात्री थे, जो कुछ ही मील दूर थी। हमने बहुत खर्च और मेहनत की थी। अपने गंतव्य

के इतने करीब आकर हम कैसे वापस लौट सकते थे? हम वापस नहीं लौटेंगे, और हमें विश्वास था कि वे हमें आगे जाने देंगे।

हमने उनके साथ विनम्रतापूर्वक व्यवहार किया। शायद इसे भय समझकर उन्होंने इसका तुरंत फायदा उठाया, विशेषकर ज्ञानेमा किले के प्रभारी सेनापति मगबुन ने। उनका विनम्र स्वभाव, जिसका उन्होंने पहले खूब प्रदर्शन किया था, अचानक अहंकार में बदल गया।

"तुम्हें मेरा सिर काटना होगा," उसने क्रूर चेहरे के साथ कहा, "या फिर, मैं तुम्हारा सिर काट दूंगा, इससे पहले कि मैं तुम्हें एक कदम भी आगे बढ़ने दूं।"

"मेरा सिर काट दो!" मैं चिल्लाया, अपने पैरों पर उछलते हुए और अपनी राइफल में एक कारतूस डालते हुए।

"मेरा सिर काट दो!" चंदेन सिंह ने अपनी मार्टिनी-हेनरी से अधिकारी की ओर इशारा करते हुए दोहराया।

"हमारे सिर काट दो!" ब्राह्मण और डॉ. विल्सन के दो ईसाई नौकरों ने गुस्से से चिल्लाते हुए कहा, जबकि वे एक विनचेस्टर और दो गौरखा कुकरी (बड़े चाकू) पकड़े हुए थे।

“नहीं, नहीं, नहीं, नहीं! सलाम, सलाम, सलाम!” मगबुन ने घबराए हुए आदमी की तरह तेज़ी से चिल्लाया।

“सलाम, सलाम,” उसने फिर से दोहराया, ज़मीन पर झुकते हुए, जीभ बाहर निकालते हुए, और अपनी टोपी हमारे पैरों पर बड़े ही विनम्र ढंग से रखते हुए। “चलो दोस्तों की तरह बात करते हैं।”

मगबुन के सैनिक, जो अपने सरदार से कम बहादुर थे, लापरवाही से इधर-उधर हिलते रहे ताकि हमारी गोलीबारी की स्थिति में वे अपने वरिष्ठ अधिकारियों के पीछे छिप सकें। लेकिन फिर उन्होंने सोचा कि इतनी सुरक्षा के बावजूद भी वे सुरक्षित नहीं हैं, इसलिए वे उठ खड़े हुए। एक-एक करके तिब्बती सैनिक धीरे-धीरे आधा दर्जन कदम चले, ताकि हमें यह यकीन दिला सकें कि डर के कारण वे नहीं गए थे, और फिर भाग निकले।

मगबुन और बचे हुए अधिकारी शांत हो गए। हमने दो घंटे तक दोस्ताना अंदाज़ में बातचीत और बहस की, लेकिन कोई नतीजा नहीं निकला। मगबुन खुद फैसला नहीं कर पा रहे थे। वे अपने अधिकारियों से सलाह लेंगे और अगली सुबह से पहले हमें जवाब नहीं दे पाएंगे। इस बीच, अगर हम उनके तंबू के पास डेरा डालें, तो वे हमारी सुविधा और सुरक्षा का पूरा ख्याल रखेंगे। ज़ाहिर है, मैं अच्छी तरह जानता था कि यह समय पाने की एक चाल है, ताकि रकास्टाल झील के उत्तर में स्थित बारका और आसपास के सभी शिविरों में सैनिक भेजे जा सकें। मैंने उन्हें खुलकर अपनी आशंकाएं बताईं, लेकिन साथ ही यह भी कहा कि बल प्रयोग करने से पहले मैं तिब्बती अधिकारियों के साथ निष्पक्ष व्यवहार करना चाहता हूं। मैंने मगबुन को फिर से याद दिलाया और उन्हें साफ-साफ समझा दिया कि हम सिर्फ शांतिपूर्ण यात्री हैं, लड़ने नहीं आए हैं; कि मैं उनसे या उनके आदमियों से जो भी खरीदूंगा, उसके लिए दस गुना कीमत चुकाऊंगा और ऐसा करने में मुझे खुशी होगी; लेकिन साथ ही, जो भी मेरे दल के किसी सदस्य के एक बाल को भी छूने की हिम्मत करेगा, उसे सावधान रहना चाहिए! मगबुन ने कहा कि वह सब कुछ भली-भांति समझ गया है। उसने मित्रता की शपथ ली और मित्रवत होने के नाते उसने हमें अपने शिविर के पास रात बिताने के लिए आमंत्रित किया। सूर्य और कुंजुक

सुम (त्रिमूर्ति) की कसम खाकर उसने शपथ ली कि वह हमें किसी भी प्रकार से हानि नहीं पहुँचाएगा। उसने विनम्रतापूर्वक हमसे विदा ली और चला गया।

मैं और डॉक्टर आगे बैठे थे। उनके पीछे चंदन सिंह, ब्राह्मण और दो ईसाई थे। सामान ढोने वाले पीछे थे। जब मगबुन चला गया, तो मैंने अपने साथियों को देखने के लिए पीछे मुड़ा। क्या नज़ारा था! वे सब रो रहे थे, हर कोई अपना चेहरा हाथों में छिपाए हुए था। काची की आँखों से आँसू बह रहे थे, डोला सिसक रहा था, जबकि डाकू और मेरे यहाँ काम करने वाला दूसरा तिब्बती, जिसने उस मौके पर भेष बदल लिया था, अपने बोझ के पीछे छिपे हुए थे। हालाँकि स्थिति गंभीर थी, फिर भी मैं अपने आदमियों के डर को देखकर हँसे बिना नहीं रह सका।

हमने अपने तंबू गाड़ दिए। मैं अंदर बैठकर अपने उपकरणों से लिए गए अवलोकन नोट कर रहा था और अपनी डायरी लिख रहा था, तभी काची दबे पांव अंदर आया, जाहिर तौर पर बहुत परेशान लग रहा था। वह इतना दुखी था कि मुश्किल से बोल पा रहा था।

“गुरुजी!” उसने फुसफुसाते हुए कहा। “गुरुजी! तिब्बतियों ने आपके कुलियों के पास एक आदमी भेजा है जो उन्हें धमकी दे रहा है कि अगर वे आपके प्रति वफादार रहे तो उन्हें मार देंगे। उन्हें रात के समय आपको छोड़कर जाना होगा। अगर आपने उन्हें रोकने की कोशिश की तो उन्हें आपको जान से मारने का आदेश है।”

जिस समय इस दूत को मेरे कुलियों के साथ साजिश रचने के लिए भेजा गया था, उसी समय मगबुन के अन्य दूत मेरे शिविर में आग जलाने के लिए बड़ी मात्रा में सूखा गोबर लेकर आए। इन लोगों ने मुझे मगबुन की मित्रता की नई घोषणाएँ फिर से सुनाईं। फिर भी, तिब्बती अधिकारी ने मदद के लिए हर दिशा में सैनिक भेजे। मैंने उन्हें जाते हुए देखा। एक संदेशवाहक करदम और तकलाकोट की ओर गया, दूसरा बारका की दिशा में बढ़ा, तीसरा पश्चिम की ओर घोड़े दौड़ाता हुआ चला गया।

मेरे सामान ढोने वाले मुझे छोड़कर जाने की तैयारी कर रहे थे। मैंने तम्बू के एक छेद से छुपकर उन्हें देखा। वे मेरे सामान से अपने कंबल और कपड़े अलग करने, आपस में राशन बाँटने और मेरा सामान फेंकने में व्यस्त थे। मैं उनके पास गया, धैर्यपूर्वक उनसे सामान दोबारा पैक करवाया और चेतावनी दी कि विद्रोह करने या भागने की कोशिश करने वाले किसी भी व्यक्ति को मैं गोली मार दूँगा।

जब डॉक्टर और मैं भरपेट भोजन कर रहे थे, तब चंदन सिंह को हमारी ओर से युद्ध की तैयारियों का जिम्मा सौंपा गया। उन्होंने बड़ी सावधानी से राइफलों को साफ किया और गोला-बारूद तैयार किया। वे लड़ने के लिए बेताब थे। ब्राह्मण, जिनकी वफादारी पर हम भरोसा कर सकते थे, पूरी स्थिति में शांत और संयमित रहे। वे दार्शनिक थे और कभी किसी बात की चिंता नहीं करते थे। उन्होंने हमारी रक्षा की तैयारियों में सक्रिय रूप से भाग नहीं लिया, क्योंकि उन्हें मृत्यु का भय नहीं था। उनका तर्क था कि केवल ईश्वर ही उन्हें मार सकते हैं, और देश की सारी बंदूकें मिलकर भी उन्हें तब तक नहीं मार सकतीं जब तक कि ईश्वर की इच्छा न हो। और यदि ईश्वर का ही निर्णय है कि उन्हें मरना है, तो इसके विरुद्ध विद्रोह करने का क्या लाभ? दोनों धर्मांतरित,

अच्छे ईसाइयों की तरह, अधिक व्यावहारिक थे और उन्होंने अपनी कुकरी के बड़े-बड़े ब्लेडों को तेज धार देने में जरा भी देर नहीं की, ताकि वे तेज धार वाले तख़्ते जैसे तेज हो जाएं।

अंधेरा होते ही मैंने अपने शिविर से थोड़ी दूरी पर एक पहरेदार तैनात कर दिया। ऐसा लग रहा था कि अगर तिब्बतियों को मौका मिला तो वे हमारे तंबू पर हमला कर सकते हैं। हममें से एक ने पूरी रात तंबू के बाहर पहरा दिया, जबकि अंदर मौजूद लोग अपने कपड़ों में ही लेटे रहे, उनके पास भरी हुई राइफलें रखी थीं। मैं यह नहीं कह सकता कि डॉ. विल्सन या मैं बहुत असहज महसूस कर रहे थे, क्योंकि तिब्बती सैनिक, अपनी भद्दी बंदूकों, लंबे भालों और रत्नजड़ित तलवारों और कटारों के साथ, खतरनाक से कहीं अधिक आकर्षक लग रहे थे।

फुटनोट:

[1] लंबे बालों वाला एक प्रकार का बैल।

[2] फ्यूज़ी द्वारा दागी जाने वाली पुरानी मस्कट, जिसमें बैरल को टिकाने के लिए एक प्रोंग होता है।

अध्याय VI

एक उच्च तिब्बती अधिकारी से मुलाकात

अगली सुबह तड़के हमें दूर से आती घोड़ों की घंटियों की झंकार सुनाई दी और हम जाग गए। तंबू से बाहर झाँकने पर मैंने देखा कि सामान लादे हुए टट्टुओं की एक लंबी कतार थी, जिनके साथ कई घुड़सवार सैनिक बंदूकें और भाले लिए चल रहे थे। यह स्पष्ट था कि कोई उच्च अधिकारी आ रहा था। इस अग्रिम दल में उनके अधीनस्थ अधिकारी और सामान शामिल थे। वे हमारे तंबू से काफी दूर तक चक्कर लगाकर गए और ज्ञानेमा किले पर उतरे। अन्य सैनिक और संदेशवाहक लगातार सभी दिशाओं से समूहों में आ रहे थे। एक दल के नेता का, सैनिकों के एक बड़े दल के साथ, हार्दिक सलाम के साथ स्वागत किया गया। मैंने अनुमान लगाया कि वह कोई महत्वपूर्ण व्यक्ति होगा।

कुछ समय बाद हमें संदेश मिला कि नवप्रवेशित बारका तरजुम हमसे मिलने की इच्छा रखते हैं। उनका पद किसी सामंती राजकुमार के समान था। हमने उत्तर दिया कि हम नाश्ता कर रहे हैं और उनसे बात करने के लिए हम उन्हें बुला लेंगे। हमारे अनुभव ने हमें सिखाया था कि तिब्बती अधिकारियों को कमतर समझना बेहतर होता है, क्योंकि तब वे अधिक विनम्र और उनसे व्यवहार करना आसान होता है। ग्यारह बजे हमने किले में एक दूत भेजा और कहा कि हमें तरजुम से मिलकर प्रसन्नता होगी। वे तुरंत अपने साथ बड़ी संख्या में लोगों को लेकर आ गए। वे एक आकर्षक व्यक्तित्व थे, जिन्होंने चीनी शैली के हरे रेशमी कपड़े का लंबा कोट पहना हुआ था, जिसकी बड़ी आस्तीनें ऊपर की ओर मुड़ी हुई थीं, जिससे उनकी कोहनी तक की भुजाएँ दिखाई दे रही थीं। उन्होंने चीनी अधिकारियों जैसी टोपी पहनी हुई थी और भारी, लंबे काले जूते पहने थे, जिनके तलवों के नीचे बड़े-बड़े कील लगे हुए थे। उनका लंबा, पीला, कोणीय चेहरा कई मायनों में उल्लेखनीय था। वह गरिमामय और शांत था। हालांकि कुछ कमजोर थे, फिर भी उनके चेहरे की बनावट सुंदर थी। उनके लंबे बाल कंधों तक लहराते हुए थे। उसके बाएँ कान में मैलाकाइट के गहनों और लटकन से जड़ी एक बड़ी बाली लटक रही थी। उसकी कांपती उंगलियों में तिब्बती कपड़े का एक छोटा सा बंडल था, जिसे वह दोनों हाथों से रुमाल की तरह इस्तेमाल करता था। जब भी वह किसी प्रश्न का उत्तर देने में असमर्थ होता, तो वह बेमतलब ही अपनी नाक पोंछता था। तरजुम और उसके साथी खूब झुककर अभिवादन कर रहे थे, और हमेशा की तरह वहाँ भाषा का खूब प्रदर्शन हो रहा था।

हमने अपने मुख्य तंबू के बाहर चटाइयाँ बिछवाईं। डॉक्टर और मैं एक चटाई पर बैठ गए और तरजुम से हमारे सामने वाली चटाई पर बैठने को कहा। उनके अनुयायी उनके चारों ओर बैठ गए। तिब्बत में यह सर्वविदित है कि यदि आप कोई प्रतिष्ठित व्यक्ति हैं, या चाहते हैं कि लोग आपकी महत्ता को पहचानें, तो आपके सिर पर छाता होना अनिवार्य है। सौभाग्य से, हमेशा सतर्क रहने वाले डॉक्टर के पास दो छाते थे, और उन्हें हमारे सिर पर सुलगा दिया गया। तरजुम स्वयं अपने सचिव द्वारा पकड़े गए एक विशाल छाते के नीचे छाया में थे।

तरजुम के मुंह से निकली दोस्ती की बड़ी-बड़ी बातों के बावजूद, मैंने उसके चेहरे को देखकर यकीन कर लिया था कि उसकी बातें सच्ची नहीं हैं और उस पर भरोसा करना सुरक्षित नहीं होगा। वह कभी हमारी आंखों में आंखें डालकर नहीं देखता था। उसकी निगाहें हर समय ज़मीन पर टिकी रहती थीं और वह बनावटी लहजे में बोलता था। मुझे वह आदमी शुरू से ही पसंद नहीं आया और चाहे वह दोस्त हो या न हो, मैंने अपनी भरी हुई राइफल हमेशा अपनी गोद में रखी।

लंबे-लंबे, बोझिल भाषणों, बनावटी तारीफों और हर रिश्तेदार के हालचाल पूछने के बाद, बार-बार नाक साफ करने और ज़ोर-ज़ोर से खांसने के बाद, जो हमेशा तब शुरू हो जाता था जब हम पूछते थे कि क्या उन्होंने अभी तक तय किया है कि हमें क्या करने की अनुमति दी जानी चाहिए, आखिरकार, जब मेरा सब्र लगभग खत्म हो चुका था, तो पिछले दिन की हमारी बातचीत फिर से शुरू हुई। हमने घंटों बहस की। हमने आगे जाने की अनुमति मांगी। वे अभी भी अनिश्चित थे कि वे हमें जाने देंगे या नहीं। मामले को सरल बनाने और अन्य सहायता आने से पहले अपना फैसला जल्दी लेने के लिए, डॉक्टर ने केवल हम आठ लोगों को मानसरोवर जाने की अनुमति मांगी। वह (डॉक्टर) स्वयं सद्भावना के प्रमाण के रूप में बाकी दल के साथ ज्ञानमा में ही रहेंगे। उन्होंने इस प्रस्ताव को भी अस्वीकार कर दिया, सीधे तौर पर नहीं, बल्कि पाखंडी बहाने और देरी करके। उनका मानना था कि हम रास्ता नहीं ढूंढ पाएंगे, और अगर ढूंढ भी लिया तो हमें वह ऊबड़-खाबड़ और जलवायु बहुत कठोर लगेगी; कि डाकू हम पर हमला कर सकते हैं, इत्यादि। यह सब बहुत थकाने वाला था। तिब्बती लोग भी अप्रिय होते जा रहे थे। मैंने मामले को संकट की स्थिति में लाने का फैसला किया।

राइफल को अभी भी सेफ्टी लॉक में पकड़े हुए, मैंने उसे अपनी गोद में रखा और उसका मुंह तरजुम की ओर घुमाकर जानबूझकर अपना हाथ ट्रिगर पर रख दिया। वह असहज हो गया। उसके चेहरे पर आशंका के भाव दिखाई दिए।

अब तक ज़मीन पर टिकी उसकी आँखें पहले अस्थिर हुईं, फिर पीड़ा भरी नज़रों से मेरी राइफल की नली पर टिक गईं। उसने अपना सिर हिलाकर दाएं-बाएं निशाना चूकने की कोशिश की। मैंने राइफल को उसके हर हरकत के साथ चलाया। तरजुम के नौकर अपने मालिक के डर को पूरी तरह समझते थे। निस्संदेह वह बेचारा पीड़ा में था; उसकी आवाज़, जो कुछ पल पहले तेज़ और अपमानजनक थी, अब बहुत विनम्र हो गई थी। उसने बड़ी विनम्रता से कहा कि वह हर तरह से हमें खुश करने के लिए तैयार है।

उन्होंने धीमी आवाज़ में और झुककर गहरी संवेदना व्यक्त करते हुए कहा, “मैं देख रहा हूँ कि आप अच्छे लोग हैं। मैं आपकी आगे की यात्रा के लिए अपनी आधिकारिक स्वीकृति नहीं दे सकता, लेकिन यदि आप चाहें तो जा सकते हैं। मैं इससे अधिक कुछ नहीं कह सकता। आपमें से आठ लोग पवित्र मानसरोवर झील की ओर जा सकते हैं। बाकी लोग यहीं रहेंगे।”

अपना अंतिम निर्णय देने से पहले, उन्होंने कहा कि वह अपने अधिकारियों के साथ एक और परामर्श करना पसंद करेंगे।

हमने इसे तुरंत स्वीकार कर लिया।

इसके बाद तरजुम ने डॉक्टर को तिब्बती कपड़े का एक रोल भेंट किया।
मैंने सुबह स्नान किया था और मेरा तुर्की तौलिया तंबू के बाहर सूखने के लिए फैला हुआ था। तरजुम, जो हमारी सभी चीजों में बड़ी दिलचस्पी दिखाते थे, उन्हें इसका गांठदार कपड़ा विशेष रूप से पसंद आया। उन्होंने अपने बच्चे को यह अद्भुत कपड़ा दिखाने के लिए बुलवाया और जब वह आया तो उन्होंने तौलिया लड़के की पीठ पर शॉल की तरह डाल दिया। मैंने तुरंत उसे उपहार के रूप में देने की पेशकश की, अगर वह इसे स्वीकार करे। उनकी खुशी का कोई ठिकाना नहीं रहा और हमारे संबंध, जो कुछ मिनट पहले थोड़े तनावपूर्ण थे, अब एकदम दोस्ताना हो गए। हमने उन्हें अपने तंबू के अंदर बुलाया और उन्होंने उत्सुकता से हर चीज का निरीक्षण किया और अनगिनत सवाल पूछे। वे अब काफी खुशमिजाज और मनोरंजक भी हो गए थे। तिब्बतियों को शराब की बहुत लत होती है। उन्होंने तुरंत पूछा कि क्या मेरे पास उन्हें देने के लिए कुछ है; उन्हें इससे ज्यादा कुछ नहीं चाहिए था। चूंकि मैं कभी भी नशीले पदार्थ नहीं रखता, इसलिए मैं उन्हें व्हिस्की, वाइन या बीयर नहीं दे सका; लेकिन उन्हें निराश न करने की इच्छा से, मैंने मिथाइलेटेड स्पिरिट की एक बोतल निकाली (जिसे मैं अपने हाइप्सोमेट्रिकल उपकरण में ईंधन के रूप में इस्तेमाल करता था)। उन्होंने इसे खुशी-खुशी पी लिया, जाहिर तौर पर इसके गले में जलन पैदा करने वाले गुणों को पसंद करते हुए। उन्होंने और भी माँगी। तरजुम ने एक बीमारी की शिकायत की जिससे वह कुछ समय से पीड़ित थे। डॉक्टर ने उन्हें उचित दवा दे दी। सभी अधिकारियों को छोटे-छोटे उपहार दिए गए। फिर वे चले गए।
दोपहर में बारका तरजुम की ओर से एक दूत आया। उसके पास हमारे लिए खुशखबरी थी। तरजुम ने हमें यह समझाने की कोशिश की कि, "चूंकि हमने उनके और उनके अनुयायियों के प्रति बहुत दयालुता दिखाई थी, इसलिए वे हमें अपना निजी मित्र मानते हैं। चूंकि हम मानसरोवर झील और महान केलास पर्वत के दर्शन के लिए बहुत उत्सुक थे, और इतनी दूर आने में पहले ही कई कठिनाइयों और भारी खर्च का सामना कर चुके थे, इसलिए उन्होंने हमारे दल के आठ लोगों को इन पवित्र स्थानों पर जाने की अनुमति दे दी। उनके लिए आधिकारिक सहमति देना संभव नहीं था, लेकिन उन्होंने फिर से कहा कि यदि हम चाहें तो जा सकते हैं।"
यह खबर सुनकर मुझे स्वाभाविक रूप से बहुत खुशी हुई। केलास पहुँचने के बाद, मुझे पूरा विश्वास था कि मैं आसानी से और आगे बढ़ सकता हूँ।
उसी शाम हमारे शिविर में मौजूद एक गद्दार चुपके से उस तंबू के नीचे से निकला जिसमें मेरे आदमी सो रहे थे और तरजुम से मिलने गया। इसमें कोई शक नहीं कि उसने तरजुम को बताया कि मैं न तो डॉक्टर का भाई हूँ और न ही कोई हिंदू तीर्थयात्री। उसने खुलासा किया कि मैं एक साहब हूँ और ल्हासा जा रहा हूँ। बाद में जो मैंने सुना, उससे ऐसा लगा कि तरजुम को अपने मुखबिर पर पूरी तरह विश्वास नहीं हुआ; लेकिन, उसके मन में नए संदेह पैदा होने पर, उसने रात में एक संदेश भेजा, जिसमें उसने हमसे विनती की कि हम उसी रास्ते से लौट जाएँ जिससे हम आए थे।
"अगर वाकई तुम्हारे दल में कोई साहब है, जिसे तुमने मुझसे छुपा रखा है, और मैं तुम्हें जाने देता हूँ, तो ल्हासा के अधिकारी मेरा सिर काट देंगे। अब तुम मेरे दोस्त हो, और तुम ऐसा होने नहीं दोगे।"

मैंने दूत से कहा, "तरजुम से कहो कि वह मेरा मित्र है, और मैं उसके साथ मित्र जैसा व्यवहार करूंगा।"
सुबह हमने देखा कि तीस घुड़सवार, पूरी तरह से हथियारों से लैस, हमारे तंबू से लगभग सौ गज की दूरी पर तैनात थे। अपने डरे हुए आदमियों के साथ आगे बढ़ना और इस टुकड़ी का पीछा करना निश्चित रूप से मुसीबत खड़ी कर देता। बेहतर था कि हम कोई और रणनीति अपनाएँ।
सशस्त्र बलों और उनके वरिष्ठ अधिकारियों के आश्चर्य के बीच, डॉक्टर चंदेन सिंह और मैं, हाथों में राइफल लिए, दृढ़ता से सैनिकों की टुकड़ी की ओर बढ़े। हमारे पीछे कांपते हुए कुली आए। मगबुन और तरजुम के अधिकारी अपनी आँखों पर विश्वास नहीं कर पा रहे थे। सैनिकों ने तुरंत घोड़ों से उतरकर अपने हथियार नीचे रख दिए, यह दिखाने के लिए कि उनका लड़ने का कोई इरादा नहीं है। हम उनकी ओर ध्यान दिए बिना आगे बढ़ गए। मगबुन मेरे पीछे दौड़ा। उसने मुझसे एक पल रुकने की विनती की। अधिकारी के कोट की ढीली तहों से सुंदर कढ़ाई वाले कपड़े के जूतों की एक जोड़ी निकाली गई, और उसने मुझे ये शब्द कहते हुए भेंट की:
"यद्यपि तुम्हारा चेहरा धूप से झुलसा हुआ और काला है, और तुम्हारी आँखें दुख रही हैं" (वास्तव में ऐसा नहीं था, लेकिन मैंने बर्फ से बचाव के लिए चश्मा पहना हुआ था), "तुम्हारे चेहरे से पता चलता है कि तुम अच्छे परिवार से हो। तुम अपने देश में एक उच्च अधिकारी होगे। तुम्हारी नेक भावनाएँ यह भी दर्शाती हैं कि तुम अपने लिए हमें दंडित नहीं होने दोगे, और अब तुम्हें वापस जाते देखकर हमारा दिल प्रसन्न है। मैं तुम्हें ये जूते भेंट करता हूँ, ताकि अपने वतन की लंबी और कठिन यात्रा में तुम्हारे पैर न दुखें।"
बात तो साफ-सुथरी थी, हालांकि तर्क देने का तरीका थोड़ा अजीब था। मैंने जूते स्वीकार कर लिए। मगबुन और उसके अंगरक्षक ने ज़मीन पर झुककर सलाम किया।
आगे कोई बातचीत किए बिना हम मगबुन से निकल गए और अपने कदमों के निशान पर चलते हुए पश्चिम-दक्षिण-पश्चिम दिशा में आगे बढ़ गए, मानो हमने वापस मुड़ने और देश छोड़ने का फैसला कर लिया हो।
हम पहाड़ी की चोटी पर पहुँचे और दूसरी तरफ़ चले गए। मेरे साथी ढलान से नीचे उतर गए, लेकिन मैं एक बड़े पत्थर के पीछे छिपकर ज्ञानेमा के लोगों को अपनी दूरबीन से देखने लगा। जैसे ही मेरा आखिरी साथी दर्रे के दूसरी तरफ़ गायब हुआ, घुड़सवार सैनिक अपने घोड़ों पर सवार हो गए और धूल के बादल उड़ाते हुए हमारे पीछे सरपट दौड़ने लगे। यही तो मुझे उम्मीद थी। मैं जल्दी से अपने साथियों के पास पहुँचा। मैदान में पहुँचकर मैंने फिर से अपनी दूरबीन उठाई और उस पहाड़ी की क्षितिज रेखा को देखा जिससे हम अभी-अभी नीचे उतरे थे। लगभग तीस सिर चट्टानों के बीच से झाँकते हुए दिखाई दे रहे थे। सैनिक स्पष्ट रूप से घोड़ों से उतर गए थे और हमारी गतिविधियों पर नज़र रख रहे थे। मुझे इस बात पर गुस्सा आया कि वे खुलेआम हमारा पीछा नहीं कर रहे थे। मैंने अपनी राइफल से आठ सौ गज की दूरी पर निशाना साधा, ज़मीन पर लेट गया और एक आकृति पर निशाना साधा जो मुझे दूसरों की तुलना में ज़्यादा साफ़ दिखाई दे रही थी।
डॉक्टर ने मेरे कंधे से राइफल छीन ली।

उन्होंने अपनी सामान्य शांति के साथ कहा, "आपको गोली नहीं चलानी चाहिए; आप किसी को मार सकते हैं।"
मैं तो बस उन कायरों को सबक सिखाना चाहता हूँ।
"यह सब तो ठीक है। लेकिन तिब्बत में हर आदमी इतना कायर है कि यह सबक बार-बार दोहराना पड़ेगा," विल्सन ने अपनी अचूक बुद्धिमत्ता के साथ उत्तर दिया।
मैंने अपनी राइफल कंधे पर टांग ली और मन बना लिया कि जिस महान कार्य को मैं लगभग शुरू ही कर चुका था, उसे किसी और समय शुरू करूंगा।
जब हम मैदान का लगभग एक मील का रास्ता तय कर चुके थे, तभी हमारा रहस्यमयी दल दर्रे को पार करके पूरी रफ्तार से पहाड़ी से नीचे आ गया। मैंने अपने सैनिकों को रुकने का आदेश दिया। सैनिक भी एकदम रुक गए। मैंने दूरबीन से उन्हें देखा। ऐसा लग रहा था जैसे वे आपस में चर्चा कर रहे हों। अंत में पाँच सैनिक पूरी गति से उत्तर की ओर भागे, शायद उस दिशा में पहरा देने के लिए। तीन सैनिक वहीं रुके रहे, और बाकी, मानो घबराकर, फिर से पहाड़ी पर चढ़ गए और चोटी के पार गायब हो गए।
हमने अपनी यात्रा फिर से शुरू की। तीनों घुड़सवार पहाड़ियों की तलहटी के पास, हमसे एक मील दक्षिण की ओर चल रहे थे। अपने टट्टुओं पर झुके हुए, शायद उन्हें लगा कि वे हमें बिना देखे ही पार कर रहे हैं। जब हमने देखा कि हम लामा चोक्तेन स्थित अपने पुराने शिविर की ओर जा रहे हैं, तो वे हमारी राह छोड़कर हमसे आगे निकल गए।
जब शाम को हम लामा चोक्तेन पहुंचे तो दो चरवाहे हमारा स्वागत करने आए। फिर एक और चरवाहा प्रकट हुआ।
उन्होंने कहा, “हमारी भेड़ें बहुत दूर हैं। हम भूखे हैं। हम गरीब हैं। क्या हम आपके शिविर के पास रुककर वह भोजन उठा सकते हैं जिसे आप फेंकने वाले हैं?”
"ज़रूर," मैंने जवाब दिया। "लेकिन ध्यान रखना कि तुम और कुछ न उठा लो।"
ये सीधे-सादे लोग, यह सोचकर कि मैं उन्हें नहीं पहचानता, अपने टट्टुओं को लामा चोक्तेन चौकी पर छोड़कर चरवाहों का वेश बनाकर हमसे दोस्ती करने की कोशिश कर रहे थे, ताकि हमारी गतिविधियों का पता लगा सकें। दरअसल, वे ग्यानेमा के तीन सिपाही ही थे, जो वेश बदलकर आए थे।
हिमालय की ओर बढ़ते हुए हर कदम पर मेरा हृदय भारी होता गया। मैं नई योजनाएँ बना रहा था, लेकिन योजनाएँ बनाना और उन्हें अमल में लाना दो अलग-अलग बातें थीं।
मेरी योजनाएँ कितनी बार विफल हुईं! सफलता के सारे संकेत मिलने के बावजूद मुझे कितनी बार नए सिरे से शुरुआत करनी पड़ी! अब हालात पूरी तरह से बिगड़ चुके थे। मेरे निरंतर संघर्ष के बावजूद, सफलता की संभावनाएँ दिन-प्रतिदिन कम होती जा रही थीं। असफलता मेरे सामने खड़ी थी।
इस शिविर में डाकू (लुटेरा), जिसने तिब्बतियों के संपर्क में आने के बाद कई बार अपना वेश बदला था, ने तुरंत जाने की घोषणा कर दी। डॉक्टर ने अपनी सामान्य दयालुता से उससे रुकने की विनती की, लेकिन कोई

फायदा नहीं हुआ। हम अच्छी तरह जानते थे कि लुटेरों से भरे इस क्षेत्र में, यह आदमी हमें छोड़कर फिर से लुटेरा बनने ही जा रहा था। डाकू जानता था कि मेरे पास बड़ी रकम है। पिछले दो दिनों से उसका व्यवहार बहुत ही अजीब था। क्या वह अपने कुछ साथियों से मिला था, या उसने सैनिकों से सुना था कि वे आसपास ही हैं?

डाकू ने अपनी पीठ पर कंबलों का एक गट्ठा बाँध रखा था और वह मुझे छोड़कर जाने के लिए तैयार था। मेरे आदमी इस नए खतरे से घबराकर मुझे इसकी सूचना देने आए। मैंने उसे बुलवाया। उसने सीधे-सीधे बोलते हुए और अपनी नज़रें ज़मीन पर टिकाए हुए कहा:

मैं जा रहा हूँ, साहब।

मैंने पूछा, "कहाँ?"

"मेरे कुछ दोस्त यहीं आसपास रहते हैं, और मैं उनके पास जा रहा हूँ।"

"बहुत बढ़िया, जाओ," मैंने शांत भाव से अपनी राइफल उठाते हुए उत्तर दिया।

उसका बोझ इतनी जल्दी उतर गया कि इसके बारे में बताने में जितना समय लगता है, उससे भी कम समय में वह शांत हो गया। उसने अपना काम फिर से हमेशा की तरह शुरू कर दिया। इसी तरह एक-दो और उपद्रवी कुलियों को भी होश में लाया गया।

मुझे बाद में पता चला कि इस घटना के दो दिन बाद सीमा के पास डाकुओं के एक गिरोह ने व्यापारियों के एक दल पर हमला कर दिया था।

एक और कष्टदायक वापसी यात्रा! हम कुछ मील चले और शिरलांगडू नामक एक तेज़ बहने वाली नदी के किनारे डेरा डाला। यहाँ से, कुछ कठिनाई से, रात के समय पर्वत श्रृंखला को पार करना और जासूसों और पहरेदारों से बचते हुए पहाड़ों को पार करके मानसरोवर झील तक पहुँचने का प्रयास करना संभव था। मैंने यह प्रयास करने का निश्चय किया। तीस लोगों के इतने बड़े समूह के साथ जाना जोखिम भरा प्रतीत हुआ, इसलिए मैंने केवल चार या पाँच लोगों को अपने साथ ले जाने का निर्णय लिया। पर्याप्त भोजन ले जाने की कठिनाई के कारण अकेले जाना असंभव था। फिर भी, यदि सबसे बुरी स्थिति आती, तो मैंने पूरी तरह अकेले जाने और तिब्बतियों से भोजन प्राप्त करने की संभावना पर भरोसा करने का संकल्प लिया।

सारा सामान फिर से व्यवस्थित किया गया। कपड़े और आराम की चीजें, खाने-पीने की अच्छी चीजें और विलासिता की अतिरिक्त वस्तुएं पीछे छोड़ दी गईं ताकि मेरे वैज्ञानिक उपकरणों के लिए जगह बन सके। विज्ञान के लिए समर्पित प्रत्येक पाउंड वजन का मतलब था कि ल्हासा तक ले जाने के लिए हमारे पास भोजन की मात्रा एक पाउंड कम हो जाएगी। जो भी चीज़ें बिल्कुल आवश्यक नहीं थीं, उन्हें पीछे छोड़ना पड़ा।

दोपहर में दो तिब्बती जासूस हमेशा की तरह भिखारियों के वेश में शिविर में आए। उन्होंने भोजन मांगा और उस पर अड़े रहे। उनका व्यवहार बेहद अपमानजनक था। यह हमारे लिए असहनीय हो गया। जोहारी बिजिंग और ईसाई रसोइया रुबसो ने सबसे पहले उनसे खुलकर लड़ाई शुरू कर दी। उन्होंने उन्हें घूंसे मारे

और लात मारी, जिससे वे एक गहरी खाई में गिरकर नदी में जा गिरे; फिर शिविर में मौजूद अन्य लोगों की मदद से उन पर पत्थर बरसाए।

फुटनोट:

[3] शुद्ध अल्कोहल.

[4] अध्याय I देखें।

अध्याय VII

एक रोमांचक रात्रि यात्रा

मेरी उड़ान का निर्धारित समय रात 9 बजे था। पांच लोगों को अच्छे इनाम का लालच देकर मेरे पीछे आने के लिए राजी किया गया था।

निर्धारित समय पर कोई नहीं आया। मैं उनकी तलाश में निकल पड़ा। एक व्यक्ति ने जानबूझकर अपने पैरों को घायल कर लिया था और वह अपाहिज हो गया था, दूसरा मरने का बहाना बना रहा था, और बाकी लोगों ने मेरे साथ आने से साफ इनकार कर दिया। सभी डर और ठंड से कांप रहे थे।

उन्होंने मुझसे विनती करते हुए कहा, "अगर आप चाहें तो हमें मार डालिए, साहब, लेकिन हम आपका अनुसरण नहीं करेंगे।"

सुबह के 3 बजे तक, बोझ उठाने के लिए एक भी आदमी को राजी करने के सभी प्रयास व्यर्थ साबित हुए। मुझे यात्रा शुरू करने का विचार छोड़ना पड़ा।

मेरी संभावनाएं पहले से भी ज्यादा निराशाजनक हो गईं। मुझे फिर से उसी ठंडे और सुनसान दर्रे की ओर लौटना पड़ा, जिससे होकर मैं तिब्बत में दाखिल हुआ था!

"आप अवसादग्रस्त हैं, श्रीमान लैंडोर," डॉक्टर ने टिप्पणी की।

मैंने यह बात मान ली। पीछे हटना मेरे लिए दिल में छुरा घोंपने जैसा था। मेरी एकमात्र इच्छा किसी भी कीमत पर आगे बढ़ना थी, और यह केवल मेरे अच्छे दोस्त, डॉक्टर की वजह से ही था कि मैंने अनिच्छा से ही सही, जबरदस्ती आगे बढ़ने से खुद को रोका था। मेरा खून खौल रहा था। मेरे साथियों की कायरता ने उन्हें मेरी नज़रों में इतना घृणित बना दिया था कि मैं उनकी ओर देखना भी बर्दाश्त नहीं कर पा रहा था।

इस निराशाजनक यात्रा में मैं अपने दल से आगे अकेला चल रहा था। ऊबड़-खाबड़ रास्ता छोटा और आसान लग रहा था। मैंने अपने शिविर के लिए एक उपयुक्त स्थान ढूंढ लिया। मेरे सामने और चारों ओर ऊँचे, बर्फीले पहाड़ खड़े थे। सामने वही लुम्पिया दर्रा था जिसे पार करके मैं तिब्बत में दाखिल हुआ था, जब मेरा मनोबल बुलंद था और मुझे पवित्र शहर ल्हासा की ओर अपने पूरे अभियान को ले जाने की उम्मीद थी। अब मुझे उन पहाड़ों को देखकर घृणा हो रही थी।

यह कहना मुश्किल है कि तूफान तब आते हैं जब कोई उदास होता है, या फिर तूफान आने पर कोई उदास हो जाता है। इस बार, जब मैं सचमुच बहुत उदास था, और तंबू लगाने से पहले ही, दोपहर भर तेज चल रही हवा दस गुना बढ़ गई। बादल काले और डरावने हो गए, और जल्द ही बर्फ के छोटे-छोटे टुकड़े गिरने लगे।

डॉक्टर ने मुझसे पूछा, "तुम क्या करने वाले हो?" मैंने जवाब दिया, "मुझे लगता है कि तुम्हें गरब्यांग वापस लौटना चाहिए, नए लोगों को भर्ती करना चाहिए और फिर से शुरुआत करनी चाहिए।"

"नहीं, डॉक्टर। इस पीछे हटने वाले सफर को जारी रखने के बजाय मैं मरना पसंद करूँगी। मैंने आज रात अकेले ही निकलने का फैसला किया है। मुझे पूरा विश्वास है कि मुझे बेहतर सफलता मिलेगी। मैं पर्वत श्रृंखला पार करने का रास्ता खोज लूँगी।"
"नहीं, नहीं, यह असंभव है, श्रीमान लैंडोर!" डॉक्टर ने आँखों में आँसू लिए कहा। "इसका मतलब है कि जो भी इसे करने की कोशिश करेगा, उसकी मौत हो जाएगी।"
मैंने उनसे कहा कि मैं जाने के लिए पूरी तरह दृढ़ संकल्पित हूं।
बेचारा डॉक्टर हक्का-बक्का रह गया। उसे पता था कि मुझे समझाने की कोशिश करना सरासर बेकार है। मैं अपने सामान को व्यवस्थित करने के लिए तंबू में गया, ताकि पीठ पर ले जाने वाला भार जितना हो सके उतना हल्का हो जाए। मेरे वैज्ञानिक उपकरण, पैसे और कारतूस पहले से ही इतना वज़नदार थे कि उन्हें उठाना आसान था।
जब मैं अपनी यात्रा की तैयारी कर रहा था, तभी काची राम तम्बू में दाखिल हुआ। वह असमंजस में दिख रहा था।
"आप क्या कर रहे हैं, महोदय?" उसने पूछा। "डॉक्टर ने कहा है कि आप आज रात अकेले निकलेंगे, पर्वत श्रृंखला पार करेंगे और अकेले ही ल्हासा जाएंगे।"
"हाँ यह सच है।"
"ओह, महोदय, खतरे और जोखिम बहुत अधिक हैं! आप नहीं जा सकते।"
मुझे पता है; लेकिन मैं कोशिश करूंगा।
"ओह, महोदय, तो मैं आपके साथ चलूंगा।"
"नहीं, काची। तुम्हें बहुत कष्ट सहना पड़ेगा। अब जब तुम्हारे पास मौका है, तो अपने माता-पिता के पास वापस जाओ।"
"नहीं, महोदय; आप जहाँ जाएँगे, मैं भी वहीं जाऊँगा। छोटे लोग कभी कष्ट नहीं सहते। अगर सहते भी हैं, तो कोई फर्क नहीं पड़ता। केवल महान लोगों के कष्ट ही ध्यान देने योग्य होते हैं। अगर आप कष्ट सहेंगे, तो मैं भी सहूँगा। मैं आऊँगा।"
काची के दर्शन ने मुझे प्रभावित किया। उसने जो कहा, वही उसका अर्थ था। मैंने उसे अपने साथ ले जाने का फैसला किया।
यह एक संयोग था। काची राम के शोका कुलियों में पाँच घनिष्ठ मित्र थे। शिविर में शाम के समय वे अक्सर हिमालय के उस पार रह गई अपनी प्रेमिकाओं की याद में विचित्र प्रेम गीत गाते थे।
काची अत्यधिक उत्साह में जल्दी से चला गया। वह कुछ ही मिनटों में वापस आ गया।

"आप कितने कुली लेंगे, महोदय?"
कोई नहीं आएगा।

“ओह, मैं ले आऊंगा,” उसने आत्मविश्वास से कहा। “क्या पाँच काफी होंगे?”
"हां," मैंने अविश्वास से बुदबुदाया।
जब काची उत्साह से भरा हुआ लौटा और अपनी विशिष्ट अंग्रेजी में बोला, तो मेरे संदेह को और भी गहरा झटका लगा:
"पांच शोका आते हैं, महोदय। फिर आप, महोदय, मैं, महोदय, पांच कुली, महोदय, रात का काम शुरू करते हैं। घड़ी क्या है?"
"वाह, काची," मैं खुद को रोक नहीं पाया और बोला, "तुम तो बड़े होशियार लड़के हो!"
"स्मार्ट, महोदय?" उसने नया शब्द सुनकर तीखे स्वर में पूछा। वह अंग्रेज़ी सीखने के लिए बेहद उत्सुक था और वर्तनी को लेकर उसका जुनून सवार था। "स्मार्ट! इसका क्या अर्थ है? इसे कैसे लिखते हैं?"
"स्मार्ट। इसका मतलब है 'तेज, बुद्धिमान'।"
"स्मार्ट," उसने गंभीरता से दोहराया, और मैंने उसे इस उद्देश्य से जो किताब दी थी, उसमें उसने नया सीखा हुआ शब्द लिख लिया। काची निस्संदेह, कुछ छोटी-मोटी कमियों के बावजूद, एक महान व्यक्तित्व था। वह अत्यंत बुद्धिमान, तेज और नेक इरादों वाला व्यक्ति था। उसका कभी न खत्म होने वाला हंसमुख स्वभाव और सीखने तथा उपयोगी बनने की उसकी प्रबल इच्छा सचमुच मन को प्रसन्न कर देती थी।
मेरी किस्मत पलट गई थी। कुछ मिनट बाद चंदन सिंह, इस बात से बिल्कुल अनजान कि कोई मेरे साथ आया है, तम्बू में दाखिल हुआ और घृणा भरे लहजे में बोला:
"शोका केकड़ा, साहब! हुन्या लोग बुरा केकड़ा। हज़ूर, हम, दो आदमी जल्दी लहस्सा गियो।" (शोका लोग बुरे हैं। हुन्या लोग बहुत बुरे हैं। महोदय और मैं, हम दोनों अकेले ही जल्दी से लहस्सा चले जाएंगे।)

एक और साहसी और मेहनती व्यक्ति आने के लिए उत्सुक था। उसने दावा किया कि उसे मृत्यु का भय नहीं है। बेचारे की बातें कितनी सच थीं, यह हम बाद में जानेंगे।
चंदेन सिंह को खेलकूद का बहुत शौक था। जब वह किसी चीज़ पर अपनी राइफल से निशाना साध पाता, तो उसकी खुशी चरम पर पहुँच जाती थी, हालाँकि उसका निशाना कभी सटीक नहीं लगता था। कुछ ही दिन पहले तीन मील दूर खड़े जंगली घोड़े (कियांग) पर गोली चलाने की कोशिश में कई कारतूस बर्बाद करने के लिए उसे खूब डांट पड़ी थी और सज़ा भी मिली थी। लेकिन खाना बनाना या मेरी चीज़ों को साफ-सुथरा रखना जैसे सामान्य काम उसे बिल्कुल पसंद नहीं थे और वह हमेशा ये काम दूसरों को सौंप देता था।
कुष्ठ रोगी मानसिंह, दुर्भाग्यवश चंदन सिंह की ही जाति का होने के कारण, मेरे सेवक का सेवक बन गया। दोनों हिंदू अक्सर आपस में झगड़ते और लड़ते रहते थे, लेकिन दिल से वे पक्के दोस्त थे। संदेशवाहक ने वादों और बीच-बीच में मार-पीट के ज़रिए अंततः अपने शिष्य को हमारे नए अभियान में शामिल होने और आगे आने वाले खतरों का सामना करने के लिए राजी कर लिया।

शाम आठ बजे तक मैंने उन सभी लोगों को इकट्ठा कर लिया था जिन्होंने मेरे साथ आने का वादा किया था। उनमें मेरा भारवाहक काची और छह कुली शामिल थे।

हमने इस शिविर का नाम "शैतान का शिविर" रखा, क्योंकि हवा इतनी भयानक थी कि हमारे तंबुओं को हिला रही थी, और भयंकर तूफान के कारण बर्फ भी हमारे आश्रयों में घुस रही थी। रात भर हवा और भी तेज होती गई। ईंधन के लिए न तो लकड़ी मिली, न गोबर, न ही काई। हमारे तंबू समुद्र तल से 16,900 फीट की ऊंचाई पर लगे थे। पर्वत श्रृंखला की चोटी तक पहुंचने के लिए हमें दो हजार फीट और चढ़ना पड़ता। ऐसे मौसम में चढ़ाई की मुश्किलें दस गुना बढ़ गई थीं, हालांकि तिब्बती पहरेदारों की नजरों से बचने के लिए, जो हमारी गतिविधियों पर नजर रख रहे थे, इस तूफानी रात से बेहतर मौका और कोई नहीं हो सकता था। मैंने डॉक्टर से बात की कि वह मेरा सारा सामान और उन लोगों को, जिन्होंने मेरे साथ आने से मना कर दिया था, गरब्यांग वापस ले जाए। उसे अगले दिन दोपहर तक हमारे सभी तंबू लगे रहने देने थे, ताकि तिब्बती यह मान लें कि हम सब उनके नीचे शरण लिए हुए हैं। इससे मुझे तंबू छोड़ने का पता चलने और मेरा पीछा करने से पहले लंबी पैदल यात्रा करने का समय मिल जाएगा। हमारे छोटे से दल के लिए आगे बढ़ना कठिन होगा, लेकिन हम अपने साथ केवल एक छोटा सा तंबू ही ले जाएंगे, जिसका वजन लगभग चार पाउंड होगा। वैसे भी, तिब्बतियों द्वारा पकड़े जाने के डर से हम कई दिनों तक तंबू नहीं लगा पाएंगे। जैसे ही उन्हें पता चलेगा कि हम चले गए हैं, वे निश्चित रूप से हमारी तलाश शुरू कर देंगे। हमें रात में लंबी दूरी तय करनी होगी, और आम यात्रियों की तरह घाटियों से होकर आगे बढ़ने के बजाय ज्यादातर पर्वत श्रृंखला की चोटी पर ही रहना होगा। हमें दिन में किसी एकांत स्थान पर छिपकर थोड़ी-बहुत नींद लेनी होगी। आग जलाने का विचार छोड़ना ही पड़ेगा क्योंकि, भले ही इतनी ऊंचाई पर जहां हमें डेरा डालना पड़ा, वहां ईंधन मिलने की बहुत कम संभावना हो, फिर भी हर कोई जानता है कि आग की रोशनी और धुएं का गुबार दिन और रात दोनों समय दूर-दूर से दिखाई देता है। हमने रवाना होने से पहले इन सभी बातों पर चर्चा कर ली थी, और इसके अलावा, हम पूरी तरह से जानते थे कि अगर तिब्बती हम पर कब्ज़ा कर लेते, तो हम उनसे लड़ने के लिए बहुत कम थे, और हमारे बचने की संभावना बहुत कम थी। वास्तव में, सभी परिस्थितियों का आकलन करते हुए, हम इस निष्कर्ष पर पहुँचे थे कि शैतान शिविर छोड़ने के क्षण से ही हमारी जान की कोई कीमत नहीं रह गई थी।

हमें इस बात की पूरी जानकारी थी कि हम क्या करने जा रहे हैं, फिर भी हो सकता है कि हमने शुरुआत ही न करके मूर्खता की हो, लेकिन दृढ़ संकल्प की कमी का आरोप हम पर उचित रूप से नहीं लगाया जा सकता। दयालु डॉक्टर अपने साथ पिछले शिविर से कुछ लाइकेन (प्याले जैसी एक प्रजाति) लाए थे, जिनसे वे अब मेरे लिए कुछ चपातियाँ (भारत की पारंपरिक रोटी) पकाने के लिए आग जलाने की कोशिश कर रहे थे। अफसोस! चार घंटे की कड़ी मेहनत और माचिस की चार पूरी पेटियाँ जलाने के बाद भी आग की एक झलक भी नहीं दिखी।

आधी रात को मैंने चंदेन सिंह और काची को आदमियों को लाने के लिए भेजा। दो कांपते हुए तम्बू में आए, बाकी उठ नहीं रहे थे। मैं खुद गया और उन्हें एक-एक करके उनके सामान के पास ले गया। सब बच्चों की तरह रो रहे थे। तभी मुझे पता चला कि जल्दबाजी और हड़बड़ी में मैंने एक बोझ ज़्यादा उठा लिया था। अब दुविधा खड़ी हो गई! भागने के लिए सब कुछ तैयार था और परिस्थितियाँ अनुकूल थीं। इस समय एक भी देरी घातक साबित हो सकती थी। मुझे एक और आदमी चाहिए था।

जब मैं एक और स्वयंसेवक की तलाश में गया, तो कुलियों के तंबू में सुनाई देने वाली आहें और कराहें दयनीय थीं। ऐसा लग रहा था मानो वे सब मरने वाले हों और यही उनकी आखिरी पीड़ा हो। यह सब सिर्फ मेरे पीछे आने के लिए चुने जाने के डर से हो रहा था।

अंततः, धमकियों और वादों के बाद, जोहारी बिजेसिंग को आने के लिए राजी किया गया। लेकिन बोझ इतना भारी था कि वह आधा ही उठा सका। परेशानी से बचने के लिए, मैंने अपने बोझ के साथ-साथ बाकी आधा बोझ भी खुद उठाने की सहमति दे दी।

हमने अपनी तूफानी लालटेन निकाली और दोपहर 2 बजे, जब आंधी अपने चरम पर थी, धूल और बर्फ को नुकीली कीलों की तरह हमारे चेहरों पर मार रही थी, जब हवा और ठंड हमारी हड्डियों के मज्जे तक चुभ रही थी, तब मुट्ठी भर चुपचाप खड़े हुए लोग, आधे जमे और लड़खड़ाते हुए, बर्फीले तूफान का सामना करने के लिए शिविर से बाहर निकले। मैंने अपने आदमियों को एक साथ रहने का आदेश दिया और हम तुरंत पहाड़ की ओर चल पड़े, उन जगहों से बचते हुए जहाँ हमें तिब्बती जासूसों के होने का संदेह था।

भागने के लिए इससे बेहतर रात हम चुन ही नहीं सकते थे। इतना अंधेरा था कि हमें अपने सामने कुछ इंच से ज़्यादा कुछ दिखाई नहीं दे रहा था। डॉक्टर चुपचाप, उदास मन से, मेरे साथ कुछ सौ गज तक आए। मैंने उनसे तम्बू में वापस जाने का आग्रह किया। वे रुक गए और मेरा हाथ पकड़ लिया। टूटी हुई आवाज़ में उस भले आदमी ने मुझे आशीर्वाद दिया और विदा ली।

डॉ. विल्सन ने फुसफुसाते हुए कहा, "तुम्हारी यात्रा के खतरे इतने बड़े और इतने असंख्य हैं कि केवल ईश्वर ही तुम्हारा मार्गदर्शन कर सकता है। जब मैं ठंड, भूख और उन कठिनाइयों के बारे में सोचता हूँ जिनका तुम्हें सामना करना पड़ेगा, तो मैं तुम्हारे लिए कांप उठता हूँ।"

मैंने कहा, "अलविदा, डॉक्टर।"

"अलविदा," उसने दोहराया। "अच्छा...." और उसकी आवाज़ लड़खड़ा गई। हम अलग हो गए।

दो-तीन कदम ही थे कि अंधेरा हमें अलग कर दिया। विदाई के उनके मार्मिक शब्द मेरे कानों में उदासता से गूंज रहे थे, और मुझे इस अच्छे दोस्त की वफादारी और विचारशीलता याद आ रही थी।

ल्हासा की यात्रा एक बार फिर गंभीर परिश्रम के साथ शुरू हुई। थोड़ी ही देर में हमारे कान, उंगलियां और पैर की उंगलियां लगभग जम गईं, और तेज़ हवा से उड़ती बर्फ हमारे चेहरों पर बेरहमी से पड़ रही थी। हमारी आंखों में दर्द हो रहा था। ऐसा लग रहा था मानो हम अंधे हो गए हों, क्योंकि हमें कुछ दिखाई ही नहीं दे रहा

था। पैरों से रास्ता टटोलते हुए, हम बिना कुछ बोले और थके-हारे, पहाड़ की ढलान पर धीरे-धीरे ऊपर चढ़ते गए। जैसे-जैसे हम ऊँचाई पर पहुँचते गए, ठंड बढ़ती गई और हवा और भी चुभने वाली हो गई। हर कुछ मिनटों में हमें रुकना पड़ता और खुद को गर्म करने और ताज़ी हवा लेने के लिए एक-दूसरे के करीब बैठना पड़ता। हवा इतनी विरल थी कि हम अपने भारी बोझ के साथ मुश्किल से ही आगे बढ़ पा रहे थे।

हमें एक सीटी की आवाज़ सुनाई दी और दूर से आती कुछ धुंधली आवाज़ें सुनाई दीं। मेरे साथी मेरे चारों ओर जमा हो गए, फुसफुसाते हुए बोले "डाकू! डाकू!" (डाकू! डाकू!), और फिर बर्फ पर लेट गए। मैंने अपनी राइफल में गोलियां भरीं और आगे बढ़ गया, अंधेरे में दुश्मन को पहचानने की व्यर्थ कोशिश करता रहा। मैंने एक हाथ से अपना कान ढक लिया। सुनो!... सुनो!... एक और तीखी सीटी!

मेरे शोकास बहुत डरे हुए थे। ऐसा लग रहा था जैसे आवाज़ सीधे हमारे सामने से आ रही हो। हमने तुरंत अपना रास्ता बदल लिया और धीरे-धीरे ऊपर की ओर बढ़ते हुए सूर्योदय के समय पहाड़ की चोटी के पास पहुँच गए। तब भी ज़ोरदार बर्फ़बारी हो रही थी। आख़िरी कोशिश में हम पठार की चोटी पर पहुँच गए।

यहां हमें अपेक्षाकृत सुरक्षित महसूस हुआ। पूरी तरह थक चुके हम लोगों ने अपना बोझ बर्फ पर रख दिया और एक-दूसरे के करीब लेट गए, ठंड से बचने के लिए हमने अपने ऊपर जितने भी कंबल उपलब्ध थे, सब ओढ़ लिए।

अध्याय आठ

भूखे भगोड़े

दोपहर 1 बजे हम पूरी तरह भीगे हुए उठे, क्योंकि तूफान थमने के बाद निकले सूरज ने हमारे ऊपर जमी बर्फ की मोटी परत को पिघला दिया था। मेरे अनुमान के अनुसार, इस शिविर की ऊंचाई 18,000 फीट थी। दक्षिण-पूर्व से आती हवा चाकू की तरह चुभ रही थी, और हमें न केवल उस दिन, बल्कि तिब्बत में रहने के पूरे समय हर दिन इसका सामना करना पड़ा। यह हवा हर दोपहर एक बजे से बहुत तेज और नियमित रूप से चलने लगती थी, और शाम को लगभग आठ बजे ही कभी-कभी धीमी होकर धीरे-धीरे बंद होती थी। हालांकि, अक्सर इस समय हवा धीमी होने के बजाय और तेज हो जाती थी, और पूरी रात भयानक ताकत से चलती रहती थी।

जब हम अकड़न और जकड़न के साथ दोबारा चलने की तैयारी कर रहे थे, तभी अचानक आसमान घने भूरे बादलों से घिर गया और ताज़ा बर्फ़ गिरने लगी। आग जलाने की कोई गुंजाइश नहीं थी, इसलिए हम भूखे-प्यासे और ठंड से ठिठुरते हुए 70° (बी.एम.) के कोण पर चलना शुरू किया। हम कमर तक ठंडे पानी में डूबे एक नाले में से गुज़रे और छह मील की दूरी तक लगातार ऊँचाई पर चढ़ते हुए, आखिरकार उस पठार के उत्तर-पूर्व में स्थित एक और ऊँचे पठार पर पहुँचे जहाँ हमने सुबह डेरा डाला था। इस दूसरे पठार की ऊँचाई 18,960 फीट थी। इस ऊँचे पठार पर एक-दूसरे के पास स्थित चार विशाल झीलें देखकर मैं आश्चर्यचकित रह गया। बादलों से छनकर आती सूरज की किरणें आसपास के पहाड़ों की बर्फ़ से ढकी चोटियों पर पड़ीं, जिससे झीलों का पानी चाँदी जैसा चमक उठा और हमारे सामने एक अद्भुत और सुंदर दृश्य प्रकट हुआ।

हम इतने भूखे और थके हुए थे कि सुंदर नज़ारों की हमें ज़्यादा परवाह नहीं थी। हम बस यही सोच रहे थे कि जितनी जल्दी हो सके, कोई ऐसी जगह मिल जाए जहाँ हम अपने थके हुए शरीर को आराम दे सकें, चाहे पठार के चारों ओर की ऊँची पहाड़ियों की छाँव में हो या ज़मीन में बने गड्ढों में। मैं पठार पार करके उत्तर-पूर्व की ओर कम ऊँचाई पर उतरना चाहता था, जहाँ शायद हमें ईंधन मिल जाए, लेकिन मेरे सैनिक, जो आधे भूखे और थके हुए थे, आगे नहीं जा सकते थे। उनका बोझ, जो अब पूरी तरह भीग चुका था, सामान्य परिस्थितियों से कहीं ज़्यादा भारी था। इतनी ऊँचाई पर हवा कम होने के कारण हम सब हाँफ रहे थे। जैसे ही हम बड़ी झील और समूह के सबसे पूर्वी जलक्षेत्र के बीच एक थोड़ी सुरक्षित जगह पर पहुँचे, मेरे सैनिक गिर पड़े और बोले कि वे आगे नहीं बढ़ सकते। मुझे उनकी चिंता हुई। उन्होंने ठंडा खाना खाने से मना कर दिया, क्योंकि उनका मानना था कि इससे उनकी मौत हो जाएगी। मुझे समझ नहीं आ रहा था कि अगर मैं उन्हें ठीक से खाना न खिलाऊँ तो वे अगले दिन की यात्रा के लिए पर्याप्त ताकत कैसे जुटा पाएँगे। उन्हें यह आश्वासन देकर कि वे मरेंगे नहीं, मैंने अंततः उन्हें थोड़ा सा सत्तू (आटा) और गुड़ (मीठा पेस्ट) खाने के लिए मना लिया। दुर्भाग्य से, जैसे ही उन्होंने मिश्रण का कुछ हिस्सा खाया और ठंडा पानी पिया, लगभग सभी को पेट में तेज दर्द होने लगा, जिसकी शिकायत वे पूरी रात करते रहे।

इन पर्वतारोहियों के अनुभव ने उन्हें सिखाया था कि अत्यधिक ऊंचाई पर ठंडा भोजन करना, बिल्कुल भोजन न करने से भी अधिक खतरनाक होता है। मुझे अपने उस अनुचित समय पर दिए गए, हालांकि अच्छे इरादे से दिए गए, सलाह पर खेद हुआ। अक्सर लोग दूसरों को अपने अनुभव के आधार पर आंकते हैं। व्यक्तिगत रूप से, मैंने कभी भी गर्म या ठंडे भोजन के, चाहे वह प्रचुर मात्रा में हो या कम, उच्च ऊंचाई पर, समुद्र तल पर या मध्यम ऊंचाई पर, कोई अलग प्रभाव नहीं देखा।

सूर्यास्त के तुरंत बाद ठंड बहुत बढ़ गई। बर्फ़बारी भी ज़ोरों से हो रही थी। हमारे गीले कपड़े और कंबल जमने लगे थे। मैंने एक छोटा सा दीपक जलाया, जिसके चारों ओर हम सब सटकर बैठ गए और अपने जमे हुए कपड़ों से जैसे-तैसे आश्रय बना लिया। मैंने आग पर गाढ़ा शोरबा पकाने की कोशिश भी की, लेकिन ऊँचाई के कारण पानी को ठंडा होने में बहुत समय लगा, उबलने में तो और भी ज़्यादा समय लगा। जब शोरबा हल्का गर्म हुआ ही था कि लौ बुझ गई, और मेरे पास दोबारा लौ जलाने के लिए और शराब खरीदने के पैसे नहीं थे। इसलिए खाना पकाना छोड़ना पड़ा, और जैसे-जैसे रात और ठंडी होती गई, हम सब अपने-अपने कंबलों के नीचे दुबक कर सो गए। हमने अपने सामान से एक सुरक्षात्मक दीवार बना ली थी। मेरे साथियों ने अपने सिर कंबलों से ढक लिए, लेकिन मैं कभी भी उनकी सोने की शैली नहीं अपना सका, क्योंकि मुझे घुटन महसूस होती थी। मैं हमेशा बिना सिर ढके सोता था, क्योंकि इससे न केवल मुझे सांस लेने में आसानी होती थी, बल्कि मैं तिब्बतियों के अचानक हमले की स्थिति में सतर्क रहना चाहता था। रात भर मेरे साथी कराहते-कराहते रहे और उनके दांत किटकिटाते रहे। ठंड से कान सुन्न हो जाने के कारण मुझे कई बार तेज दर्द से नींद खुली; मेरी आंखों को भी तकलीफ हुई क्योंकि पलकें बर्फ की तरह जम गई थीं। हर बार जब मैंने पलकें खोलने की कोशिश की तो एक अजीब सी बेचैनी हुई, मानो पलकें टूट रही हों। भीषण ठंड में पलकें बंद होते ही तुरंत जम जाती थीं।

अंततः सूरज निकला। रात अंतहीन सी लग रही थी। जब मैंने उठकर बैठने के लिए कंबल उठाने की कोशिश की, तो वह मुझे असाधारण रूप से भारी और कड़ा लगा। इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं! वह जम कर सख्त हो गया था, गत्ते की तरह कड़ा था, और उस पर एक फुट मोटी बर्फ की परत जमी हुई थी। रात के दौरान तापमान 24 डिग्री तक गिर गया था।

मैंने अपने आदमियों को बुलाया। उन्हें जगाना मुश्किल था। वे पूरी तरह बर्फ के नीचे दबे हुए थे।

"उता! उता! उता!" (उठो! उठो! उठो!) मैंने एक-एक करके उन्हें हिलाते हुए और उनके कंबलों पर जमी बर्फ को झाड़ते हुए पुकारा।

"बहुत बर्फ है," एक आदमी ने कहा, और उसने अपनी नाक कंबल से बाहर निकालकर अपनी आँखों को मला, जो हमारे चारों ओर बर्फ की सफेद चमक से चुभ रही थीं। "सलाम साहब," उसने तब कहा, जब पहले आश्चर्य से उबरकर उसने मुझे देखा, और फिर बड़े ही सलीके से अपना हाथ माथे पर रख लिया।

बाकी लोगों का व्यवहार भी कुछ ऐसा ही था। हमेशा की तरह, काची सबसे आखिर में जागी।

"ओह, काची," मैंने चिल्लाकर कहा, "उठो!"

"ओह, बहियोह!" (ओह, पिता!) उसने जम्हाई लेते हुए अपनी बाहें फैलाईं। आधा सोया हुआ, आधा जागा हुआ, वह जैसे किसी सम्मोहन में हो, चारों ओर देखने लगा और अस्पष्ट शब्द बुदबुदाने लगा।
"सुप्रभात महोदय। अरे... बहुत बर्फ़ गिरी है। अरे... देखिए महोदय, वहाँ दो कियांग हैं! 'कियांग' को अंग्रेज़ी में क्या कहते हैं?"

जंगली घोड़ा।
"'Wild' की स्पेलिंग w-i-l-d है?"
"हाँ।"
यहां तकिए के नीचे से नोटबुक निकाली गई और अंग्रेजी शब्द को विधिवत लिख लिया गया।
ये शोका लोग बड़े अजीब प्राणी हैं! एक आम यूरोपीय, जो आधा भूखा और ठंड से कांप रहा हो, ऐसी कठिन परिस्थितियों में वर्तनी के सही नियमों पर शायद ही ज्यादा ध्यान देगा।
बेचारा कुष्ठ रोगी मानसिंह बुरी तरह पीड़ित था। वह पूरी रात कराहता रहा। मैंने उसे अपनी एक चादर दी थी, लेकिन भीषण ठंड के कारण उसके शरीर में रक्त संचार बुरी तरह प्रभावित हो गया था। उसका चेहरा पीला और मुरझाया हुआ था, जिस पर पीड़ा के कारण गहरी लकीरें पड़ गई थीं। उसके पैर इतने जम गए थे कि उसे खड़े होने में काफी समय लग गया।
फिर भी शोकास ने कुछ नहीं खाया क्योंकि बर्फ गिरती जा रही थी। हम उत्तर-पूर्व की ओर चल पड़े। एक मील समतल चलने के बाद, हम उबड़-खाबड़, ढीली मिट्टी और नुकीली चट्टानों से होते हुए एक खड़ी ढलान पर उतरने लगे। हमारी गति तेज़ थी, लेकिन कष्टदायक। अपनी दूरबीन से नीचे के इलाके को देखते हुए, मैंने उत्तर-पूर्व की घाटी में दूर झाड़ियाँ और लाइकेन देखे, साथ ही एक तंबू और कुछ भेड़ें भी। यह दुर्भाग्यपूर्ण था, क्योंकि हमें छिपने के लिए अपना रास्ता बदलना पड़ा। हम फिर से पठार की चोटी पर चढ़ गए और बिना किसी को पता चले उसके शिखर के चारों ओर घूमकर एक पूर्वी मार्ग अपनाया। सूर्यास्त के समय हमने उस स्थान से नीचे उतरना शुरू किया। हमने नदी को बिना किसी बड़ी कठिनाई के पार कर लिया। ज़मीन में एक अच्छी तरह से सुरक्षित गड्ढा चुनकर, मैंने पिघली हुई बर्फ के एक तालाब के किनारे अपना छोटा सा तंबू लगा दिया। हम सभी आग जलाने के लिए लाइकेन और झाड़ियाँ इकट्ठा करने निकल पड़े, और प्रत्येक व्यक्ति शिविर में ईंधन के कई ढेर लेकर आया। देखते ही देखते हमने तीन बड़ी आग जला लीं, और न केवल हम बढ़िया खाना बना पाए और गरमागरम चाय पीकर अपनी पिछली परेशानियों को भुला पाए, बल्कि हमने अपने कपड़े और कंबल भी सुखा लिए। इन आग की गर्मी से जो राहत मिली, वह अद्भुत थी। अपनी इस खुशी में हम अब तक झेली गई कठिनाइयों और कष्टों को भूल गए। कुछ सत्तू को छोड़कर, पिछले अड़तालीस घंटों में यह हमारा पहला ठोस भोजन था। इन दो दिनों में हमने बीस मील का सफर तय किया था, और हममें से प्रत्येक का औसत वजन साठ पाउंड से अधिक था।

अब हम 16,500 फीट की ऊंचाई पर थे, जो हमारे ठंडे और ऊंचे शिविर स्थलों के बाद काफी कम लग रही थी। प्रतिक्रिया सुखद थी, और जहाँ तक मेरा सवाल था, स्थिति गहरे अवसाद से बदलकर अपेक्षाकृत प्रसन्नता और संतोष की हो गई थी।

हमारे सामने, उत्तर-पूर्व दिशा में, एक ऊँचा पर्वत था।—पूर्व की ओर आगे बढ़ने पर दो पर्वत श्रृंखलाओं के बीच एक संकरी घाटी दिखाई दे रही थी, जबकि एक नदी एक सुरम्य दर्रे से होकर मांगशान पर्वत की दिशा में बह रही थी।

मेरे लिए घाटी के पूर्व की ओर बढ़ना आवश्यक था, क्योंकि ऐसा करने से हम परेशानी, समय और परिश्रम से बच जाते, हालांकि संभवत: हमें तिब्बती लोगों, विशेषकर लुटेरों के गिरोहों का सामना करना पड़ सकता था। नारी खोरसुम प्रांत का यह हिस्सा डाकुओं से भरा हुआ बताया जाता था। इसलिए हमें सावधानी से आगे बढ़ना था, खासकर इसलिए क्योंकि मेरे साथी काफी डरे हुए लग रहे थे। ऊबड़-खाबड़ इलाके में हम मुश्किल से आधा मील ही आगे बढ़े थे कि मैं अपने साथियों के पीछे रुककर अपने प्रिज्मेटिक कंपास से दिशा का अवलोकन करने लगा, तभी मेरे साथी अचानक जमीन पर लेट गए और हाथों और घुटनों के बल रेंगते हुए पीछे हटने लगे।

"डाकू! डाकू!" (डाकू! डाकू!) वे फुसफुसाए, जैसे ही मैं उनके पास पहुंचा।

बहुत देर हो चुकी थी। हमारी पहचान हो चुकी थी और कई डाकू, बंदूकों और तलवारों से लैस होकर, तेज़ी से हमारी ओर बढ़ रहे थे। मेरा अनुभव हमेशा से यही रहा है कि ऐसे मामलों में भाग जाना ही सबसे बुरा होता है, क्योंकि डर दिखाना किसी को आप पर हमला करने के लिए और भी उकसाता है। इसलिए मैंने अपनी मैनलिचर राइफल लोड कर ली। मेरे सहायक ने भी मार्टिनी-हेनरी राइफल लोड कर ली। मैंने शोका सैनिकों को आदेश दिया कि वे अपने-अपने हथियारों के पास बैठ जाएं और स्थिर रहें। मैं और मेरा सहायक तेज़ी से पास आ रहे उस गिरोह की ओर धीरे-धीरे बढ़े, जो अब सौ गज से भी कम दूरी पर था। मैंने उन्हें रुकने के लिए चिल्लाया। चंदन सिंह ने उन्हें वापस जाने का इशारा किया। उन्होंने हमारी चेतावनियों पर ध्यान नहीं दिया और और भी तेज़ी से हमारी ओर बढ़ने लगे। निस्संदेह उन्होंने सोचा होगा कि हम केवल शोका व्यापारी हैं और उन्हें आसान शिकार मिल जाएगा। उन्होंने हमले की एक अच्छी योजना बना रखी थी। जब वे हम पर हमला करने के लिए तैयार हुए, और काफी करीब पहुँचकर, वे चारों ओर से हम पर हमला करने के स्पष्ट इरादे से अलग हो गए।

"दुशु! दुशु!" (वापस जाओ! वापस जाओ!) मैंने गुस्से से उन पर चिल्लाते हुए अपनी राइफल कंधे पर उठाई और सरदार पर निशाना साधा। चंदन सिंह ने भी ऐसा ही किया और दूसरे आदमियों में से एक को निशाना बनाया। ऐसा लगा कि इसका उन पर अच्छा असर हुआ, क्योंकि उन्होंने तुरंत हास्यास्पद सलाम किया और भाग निकले। चंदन सिंह और मैं उनका पीछा करते हुए कुछ दूर तक गए ताकि उन्हें रास्ते से पूरी तरह हटा सकें। हम पास ही एक टीले से उन पर नज़र रख रहे थे और हमने पाया कि थोड़ी दूरी पर इन लुटेरों के कई साथी थे, साथ ही लगभग तीन हज़ार भेड़ें भी थीं, जो शायद उनकी पिछली लूट का नतीजा थीं। हमने उन्हें

इशारा किया कि वे हमारे रास्ते से हट जाएं, और आखिरकार, अपनी भेड़ों को आगे धकेलते हुए, वे उस दिशा में चले गए जिस ओर मैंने उन्हें इशारा किया था। जब वे हमसे दूर हो गए, और मेरे शोकास, जिन्हें लगा था कि उनका अंत निकट है, अपने डर से कुछ हद तक उबर गए, तो हम अपनी यात्रा पर आगे बढ़े और उन दो पर्वत श्रृंखलाओं के बीच की संकरी घाटी में प्रवेश किया जिनका मैंने पहले ही उल्लेख किया है।

नदी के किनारे बने अनेक शिविरों से यह स्पष्ट था कि हम अब एक व्यस्त क्षेत्र में थे। सुबह की सफलता ने हमारा मनोबल बढ़ा दिया था और हम नदी के बाएँ किनारे पर प्रसन्नतापूर्वक आगे बढ़ते रहे। एक खड़ी चढ़ाई हमें 16,400 फीट की ऊँचाई पर स्थित एक पठार पर ले आई, जहाँ से हमें हिम पर्वतमाला का सुंदर दृश्य दिखाई दिया, जो मांगशान पर्वत से लिप्पू दर्रे तक पूर्व से पश्चिम की ओर फैली हुई थी, और उससे आगे उत्तर-पूर्व में नीमो नांगिल की चार ऊँची चोटियाँ थीं, जिनकी ऊँचाई क्रमशः 25,360 फीट, 22,200 फीट, 22,850 फीट और 22,670 फीट थी। यह पठार धीरे-धीरे ढलान वाला था और इसमें कई गहरी दरारें थीं, जो जल प्रवाह को गक्कॉन नदी में ले जाती थीं।

इस पठार के निचले हिस्से पर, और फिर नदी के किनारे-किनारे, एक पगडंडी ज्ञानेमा से करदम और डोगमार होते हुए तकलाकोट तक जाती थी, और एक दूसरी कम इस्तेमाल होने वाली पगडंडी इस स्थान के दक्षिण-दक्षिण-पश्चिम में स्थित मंगशान तक जाती थी। पठार का किनारा समुद्र तल से 15,800 फीट ऊपर था, और नदी उससे 550 फीट नीचे थी।

यह हमारे लिए एक खतरनाक जगह थी, क्योंकि इस समय तक तिब्बतियों को पता चल चुका होगा कि मैं भाग निकला हूँ और उनके देश में काफी अंदर आ चुका हूँ। मुझे पता था कि सैनिक और जासूस सभी रास्तों की रखवाली कर रहे होंगे और हमारी तलाश कर रहे होंगे। यह रास्ता बाकी रास्तों की तुलना में अधिक व्यस्त होने के कारण और भी असुरक्षित था। हमें पकड़े जाने से बचने के लिए बहुत सावधानी बरतनी पड़ी। तिब्बत में वातावरण इतना साफ होता है कि चलती हुई वस्तुएं बहुत दूर से भी स्पष्ट रूप से दिखाई देती हैं। मैंने अपनी दूरबीन से हर जगह देखा, लेकिन कोई दिखाई नहीं दिया, इसलिए हम आगे बढ़ गए। मेरे साथियों ने सोचा कि कई छोटी नदियों में से किसी एक में उतरना अधिक सुरक्षित होगा, जहाँ हम कम खतरे में होंगे, लेकिन हम अभी एक नदी के किनारे ही पहुँचे थे कि हमें नीचे घाटी से कुछ आवाज़ें सुनाई दीं।

पेट के बल रेंगते हुए, मैं और मेरा भारवाहक पठार के किनारे से नीचे झाँके। लगभग पाँच सौ फीट नीचे तिब्बती बस्ती थी, जहाँ कई याक और टट्टू चर रहे थे। किसी का ध्यान खींचे बिना, मैंने उन्हें कुछ देर तक देखा। वहाँ कई सैनिक थे, जो शायद मेरी निगरानी के लिए तैनात थे। मैंने दूरबीन से कुछ ज्ञानेमा सैनिकों को पहचान लिया। हमने रात होने तक छिपने के लिए एक जगह चुनना उचित समझा। अंधेरा होने के बाद हम नदी (15,250 फीट) तक उतरे, उसे पार किया और ऊँची चट्टानों के बीच एक संकरी घाटी से होते हुए एक अच्छी तरह से छिपी हुई जगह पर पहुँचे, जहाँ हम रुक गए। अपने साथियों के पीछे-पीछे, मैं बाईं ओर की चट्टान पर एक-एक करके चढ़ता गया और एक छोटा सा प्राकृतिक चबूतरा मिला, जो ऊपर उभरे एक विशाल पत्थर से ढका हुआ था। यह जगह डेरा डालने के लिए काफी सुरक्षित लग रही थी। हमने तंबू लगाने

की हिम्मत नहीं की और रात में किसी भी अप्रत्याशित घटना की आशंका में हमने अपने सारे सामान को दफना दिया। बिना किसी बाधा के, हम किसी भी क्षण अपने पीछा करने वालों से छिप सकते हैं या उनके आगे भाग सकते हैं। मौका मिलने पर हम बाद में अपना सामान लेने के लिए वापस आ सकते हैं।

अब जब सब कुछ सुचारू रूप से चल रहा था, मुझे एक दुखद सच्चाई का पता चला। मुझे तेज़ी से आगे बढ़ना ज़रूरी था। ज़रा सोचिए, मुझे कितना आश्चर्य हुआ जब मैंने पाया कि हमारे पास राशन खत्म हो गया था। अपने अभियान दल से निकलने से पहले, मैंने अपने साथियों को दस दिनों का भोजन ले जाने का आदेश दिया था। इस काम के लिए नियुक्त डॉक्टर ने मुझे आश्वासन दिया था कि हमारे पास इतना भोजन है कि हम पूरे दस दिनों तक आराम से रह सकते हैं। अब, किसी अज्ञात कारण से, हमारे पास केवल एक साधारण भोजन के लिए ही पर्याप्त भोजन बचा था। हमारे पास बस कुछ दाने नमक ही बचा था।

"तुमने उसका क्या किया?" मैंने गुस्से से पूछा, क्योंकि तुरंत मेरे दिमाग में यह बात कौंध गई कि मेरे मालवाहकों ने बेईमानी की है। मैंने हर आदमी को एक पौंड नमक लेने का आदेश दिया था।

"जी साहब; लेकिन हम उसे लेना भूल गए," उन सभी लोगों ने एक स्वर में कहा।

हमने जो कठिनाइयाँ और थकान झेली थीं, और सर्वेक्षण, फोटोग्राफी, रेखाचित्रण और लेखन का काम असामान्य असुविधा और जोखिम भरी परिस्थितियों में जारी रखने की चिंता और कठिनाई के बाद, अपनी योजनाओं को विफल होते देखना मेरे लिए सचमुच एक बड़ा झटका था। हम अभी भी मानसरोवर से तीन-चार दिन की दूरी पर थे, जहाँ मुझे ताज़ा रसद मिलने की उम्मीद थी। मेरे पास फिर से दो विकल्प थे: या तो हार मानकर भारत लौट जाना या तिब्बती सैनिकों द्वारा बंदी बना लिया जाना, जिनसे मैं अब तक सफलतापूर्वक बचता आ रहा था। हालाँकि आमतौर पर मुझे शारीरिक पीड़ा नहीं होती, लेकिन कभी-कभी मैं मानसिक तनाव से ग्रस्त हो जाता हूँ। मैं अस्वस्थ और उदास महसूस कर रहा था। मेरे मानसिक कष्टों में शारीरिक कष्ट को जोड़ने के लिए, गक्कोन नदी को पार करते समय, अर्ध-अंधेरे में पत्थरों पर कूदते हुए, मैं फिसल गया और लगभग चार फीट ठंडे पानी में गिर पड़ा। उस समय हवा बहुत तेज़ चल रही थी। अंधेरा होने के बाद, थर्मामीटर 26 डिग्री तक गिर गया। जब मैं अपने गीले कपड़ों में बैठा अपनी स्थिति पर चर्चा कर रहा था, तो मुझे इतनी ठंड और थकावट महसूस हुई कि मुझे लगा कि मैं पूरी तरह से गिर जाऊँगा। मुझे तेज़ बुखार आ गया और मैं लगभग बेहोश हो गया। मेरे दांत किटकिटा रहे थे और बुखार चरम पर था, मेरी सारी परेशानियां असलियत से कहीं ज्यादा बड़ी लग रही थीं। हार निश्चित लग रही थी, मेरी स्थिति निराशाजनक थी। अचानक मेरे मन में एक योजना कौंधी। मेरे चार आदमियों को भेस बदलकर, दो व्यापारियों के वेश में और दो भिखारियों के वेश में, तकला किले (स्थानीय भाषा में तकला खार या तकलाकोट) में जाना चाहिए और दुश्मनों से भोजन खरीदना चाहिए। हम शिविर में तब तक छिपे रहेंगे जब तक वे वापस नहीं आ जाते। मैंने अपने साथियों से बात की, और कुछ हिचकिचाहट के बाद, चार शोकाओं ने इस साहसी कर्तव्य को निभाने का जिम्मा उठाया। पकड़े जाने पर उनका सिर कलम कर दिया जाता, और संभवतः उससे पहले उन्हें

क्रूर यातनाएं दी जातीं। हालांकि इन आदमियों ने अंततः मुझे धोखा दिया, फिर भी उस विशेष अवसर पर उन्होंने जो साहस और वफादारी दिखाई, उसके लिए मैं उनकी प्रशंसा किए बिना नहीं रह सकता।

रात के दौरान मेरे साथियों ने मेरा बहुत ख्याल रखा। तिब्बती सैनिकों के अचानक हमले के डर से हम सो नहीं पाए। हमने घंटों शोका लोगों से डाकुओं और तिब्बतियों द्वारा की जाने वाली बर्बर यातनाओं की कहानियाँ सुनीं। तब मुझे ज़रा भी अंदाज़ा नहीं था कि आगे क्या होने वाला है। सुबह होते ही उजाला हो गया, तो हमने काफी मात्रा में बिछुआ इकट्ठा किया, जो इस शिविर के पास बहुतायत में था, और उसे अच्छी तरह उबालकर हमने एक पौष्टिक भोजन बनाया, हालाँकि वह उतना स्वादिष्ट नहीं था। उस समय तो वह भोजन बुरा नहीं लगा, और अगर हमारे पास नमक होता तो हम अपने इस कांटेदार भोजन को स्वादिष्ट और आसानी से पचाने योग्य बना लेते। हमने नमक की कमी को पूरा करने के लिए उसमें दुगनी मात्रा में काली मिर्च मिला दी। खैर, यह जानकर राहत मिली कि जब तक हमारे शिविर के पास बिछुआ है, हम कम से कम भूख से तो नहीं मरेंगे।

अध्याय 9

विद्रोह का प्रयास

मेरे आदमियों के लिए अब खाने-पीने का सारा सामान घटकर चार पौंड आटा, दो पौंड चावल और दो पौंड सत्तू रह गया था। यह हमने उन चार आदमियों को दे दिया जिन्हें तकलाकोट में प्रवेश करने की कोशिश करनी थी। उनकी यात्रा लंबी और थका देने वाली थी। हमारे पास सहारा लेने के लिए बिछुआ घास काफी मात्रा में थी। मेरे पास डिब्बाबंद खाने का थोड़ा सा सामान था, लेकिन मैंने इसे आने वाले बुरे दिनों के लिए बचाकर रखने का इरादा किया था, जिनसे मुझे डर था कि वे मेरे लिए आने वाले हैं।

मैंने चारों शोकाओं को ध्यानपूर्वक निर्देश दिए कि वे भेस बदलकर एक-एक करके तिब्बती किले में प्रवेश करें और संदेह से बचने के लिए, एक बार में थोड़ी-थोड़ी मात्रा में ही आवश्यक राशन खरीदें। जब एक बार में पर्याप्त राशन इकट्ठा हो जाए, तो एक व्यक्ति तुरंत हमारे शिविर के लिए वापस रवाना हो जाए। बाकी लोग कुछ कदम अलग-अलग चलें। एक निश्चित स्थान पर वे चारों फिर से मिलें और एक साथ हमारे पास लौट आएं। अलग-अलग भेस तैयार करना और सारी व्यवस्था करना बहुत रोमांचक काम था। अंत में, बार-बार विदाई और हौसला बढ़ाने वाले शब्दों के बाद, चारों संदेशवाहक अपने खतरनाक मिशन पर निकल पड़े। हमारे चारों ओर सब कुछ शांत लग रहा था, इतना शांत कि मैंने अपना सेक्स्टेंट और कृत्रिम क्षितिज निकाला और खगोलीय अवलोकन कर रहा था, तभी हमारे शिविर के उत्तर में दर्रे पर सौ से अधिक याकों का एक झुंड दिखाई दिया और धीरे-धीरे हमारी ओर बढ़ने लगा। क्या हम पकड़े गए? क्या तरजुम के आदमी अपने जानवरों के साथ आ रहे थे? समय बर्बाद नहीं किया जा सकता था। उपकरण और कंबल जल्दी से हटाकर छिपा दिए गए। हमें देखकर रुके हुए जानवरों की ओर रेंगते हुए, हमने उन्हें अगले नाले की ओर भगाने के लिए उन पर पत्थर फेंके। हम ठीक समय पर ऐसा करके अपने छिपने की जगह पर लौट आए थे कि हमने दर्रे की चोटी पर और दूसरी तरफ, कई तिब्बतियों को उन याकों का पीछा करते देखा जिन्हें हमने भगा दिया था। तिब्बती हमसे कुछ सौ गज नीचे से गुजरे, जाहिर तौर पर उन्हें हमारी मौजूदगी का बिल्कुल भी पता नहीं था। वे शायद हमारे पदचिह्नों की तलाश कर रहे थे, क्योंकि वे बार-बार झुककर जमीन की जांच कर रहे थे।

दोपहर बाद मैं ज्ञानेमा सड़क पर छानबीन करने गया, इस उम्मीद में कि तकलाकोट आने-जाने वाले तिब्बतियों को छुपकर देख सकूँ। मुझे कोई सैनिक नहीं दिखा। हजारों भेड़-बकरियों और याकों को अपने आगे हांकते हुए डाकुओं का एक बड़ा गिरोह एक दिलचस्प नजारा था। डाकू टट्टुओं पर सवार थे और अपने सरदार के आदेशों का तुरंत पालन कर रहे थे, जो कर्कश आवाज में, लगातार अपना प्रार्थना-चक्र घुमाते हुए आदेश दे रहा था। वे तेजी से आगे बढ़ रहे थे, औरतें और मर्द अपने टट्टुओं पर सवार थे। मर्दों के पास बंदूकें और तलवारें थीं। हर टट्टू अपने सवार के अलावा, काठी के पीछे खाने के थैले भी लादे हुए था। मैंने चट्टानों के पीछे से उस लंबे जुलूस को देखा और जब आखिरी घुड़सवार, जो मुझसे सिर्फ बीस गज की दूरी से गुजरा, बाकी काफिले के साथ चला गया, तो मुझे थोड़ी राहत मिली। मैं वापस लौट आया। मुझे लगा

कि यह शिविर उतना सुरक्षित नहीं है जितना मैंने पहले सोचा था, इसलिए मैंने अपने आदमियों की मदद से एक कच्ची खाई खोदी और उस चबूतरे के चारों ओर एक दीवार खड़ी कर दी, जिसके नीचे हम रहते थे। ये दीवारें हमें आने-जाने वाले तिब्बतियों की नज़र से बचाती थीं और रात के हमले की स्थिति में किलेबंदी का काम करती थीं। हमारा सारा सामान शिविर से थोड़ी दूरी पर गाड़ दिया गया था।

एक और लंबा, उबाऊ दिन बीत गया था। हमने नमक का आखिरी दाना भी इस्तेमाल कर लिया था। एक और दिन सिर्फ बिछुआ खाकर गुजारा करना पड़ा, और तीसरा और चौथा दिन भी इसी भोजन पर! बिछुआ से हम कितने तंग आ गए थे! दिन अंतहीन लग रहे थे, क्योंकि अपने शिविर के ऊपर एक चोटी पर लेटे हुए, मैं घंटों तक अपनी दूरबीन से गक्कोन नदी के ऊपर फैले लंबे पठार को अपने अपेक्षित संदेशवाहकों की तलाश में देखता रहा। हर बार जब मुझे दूर से कोई आदमी दिखाई देता, तो मेरा दिल उछल पड़ता, लेकिन दूरबीन से देखने पर वे जोगपा (डाकू), या डोगपा (तस्करों की खानाबदोश जनजातियाँ), या हुमली या जुमली निकले, जो ग्यानेमा और गारटोक जा रहे थे। जैसे-जैसे समय बीतता गया और संदेशवाहक नहीं आए, हमें उनकी सुरक्षा पर संदेह होने लगा। क्या वे हमें धोखा देकर कभी वापस नहीं लौटेंगे? या उन्हें जोंग पेन (किले के स्वामी) ने पकड़ लिया था और कैद करके यातना दी थी?

मेरे भारतीय नौकर ने बिच्छू बूटी खाने से इनकार कर दिया। उसने कहा कि लगातार एक ही चीज़ खाने से बेहतर है कि कुछ भी न खाया जाए। उसने कहा कि वह दस दिन तक उपवास कर सकता है और खाने की कमी को सोने से पूरा कर लेगा।

सुबह के समय जब सूरज की रोशनी उस पर पड़ती थी, तो मेरा किला काफी आरामदायक रहता था। अक्सर जब चट्टान काफी गर्मी सोख लेती थी, तो वह इतनी गर्म हो जाती थी कि हमें दोपहर में ही उसे छोड़ना पड़ता था, जब थर्मामीटर 120°, 122° और यहाँ तक कि 124° तक पहुँच जाता था। दोपहर 1 बजे से रात 10 बजे तक दक्षिण-पूर्व से तेज़ ठंडी हवा चलती थी, जो हमारी हड्डियों तक पहुँच जाती थी। यह हवा इतनी ठंडी होती थी कि जैसे ही सूरज पहाड़ों के पीछे छिपता था, तापमान अचानक 60° तक गिर जाता था, और रात भर गिरते-गिरते 40°, 34° और 32° तक पहुँच जाता था। एक रात भयंकर आंधी और बर्फ़ीला तूफ़ान आया। हवा इतनी तेज़ थी कि जब हम उसकी ओट में सो रहे थे, तो हमारी दीवार हम पर गिर पड़ी। जिन घंटों में हम आराम करने की उम्मीद कर रहे थे, वे हमें हुए नुकसान की मरम्मत में बिताने पड़े।

अगली सुबह हम अपने भोजन के लिए बिछुआ इकट्ठा कर रहे थे, तभी दूर से आती हुई घोड़ों की घंटियों की झंकार सुनाई दी। हमने जल्दी से आग बुझाई, अपना सामान छिपाया और अपनी किलेबंदी के पीछे भाग गए। मैंने अपनी राइफल उठा ली। चंदन सिंह ने मार्टिनी लोड की। एक शोका, जो हमारे किले तक समय पर पहुँचने के लिए बहुत दूर था, कुछ चट्टानों के पीछे छिप गया। ऐन मौके पर! आधा दर्जन सैनिक, जिन पर लाल झंडे लगे हुए थे, खुशी-खुशी पहाड़ी पर चढ़ रहे थे, हमसे कुछ ही गज आगे। वे निस्संदेह मुझे खोज रहे थे। उन्होंने हर दिशा में देखा, लेकिन सौभाग्य से उनकी नज़र कभी भी किले की दीवारों पर नहीं पड़ी, जिनके पीछे हम छिपे हुए थे। शायद वे किसी घाटी में एक बड़ा यूरोपीय तंबू देखने की उम्मीद कर रहे थे, और

उन्होंने कभी सपने में भी नहीं सोचा था कि हम वहाँ होंगे। हमने अपनी राइफलों से उन पर अच्छी तरह से निशाना साधा, लेकिन हमें गोली चलाने की ज़रूरत नहीं पड़ी। वे आगे बढ़ गए। जैसे-जैसे वे दर्रे के दूसरी ओर ओझल होते गए, उनके घोड़ों की घंटियों की आवाज़ धीमी होती गई। ये घुड़सवार संभवतः तरजुम द्वारा इस मार्ग की रक्षा के लिए भेजे गए सैनिक थे। अब वे अपने स्वामी के पास वापस जा रहे थे, इस बात से संतुष्ट होकर कि अंग्रेज उस क्षेत्र में नहीं है।

हमने उस जगह का नाम "आतंक शिविर" रख दिया, क्योंकि वहाँ हमारे साथ कई भयानक घटनाएँ घटीं। एक और थका देने वाला दिन धीरे-धीरे समाप्त हो रहा था, और दूतों के लौटने का कोई आभास नहीं था। दो लोग कुछ मील दूर स्थित करदम नामक बस्ती में जाने के लिए स्वेच्छा से आगे आए। वहाँ वे तिब्बतियों से भोजन प्राप्त करने का प्रयास करेंगे। उनमें से एक का वहाँ एक मित्र था। वह उससे इतना राशन खरीदने की कोशिश करेगा जिससे हम कुछ और दिन आगे बढ़ सकें।

तीर्थयात्रियों का वेश धारण करके, जो वेश धारण करना मुश्किल नहीं था, क्योंकि हाल ही में हुई कठिन पैदल यात्रा के कारण उनके कपड़े फट चुके थे, वे लोग चल पड़े और पूरे दिन बाहर रहे। देर रात लौटने पर उन्होंने एक रोचक कहानी सुनाई। डोगपा जनजाति से मिलने पर, वे साहसपूर्वक उनके शिविर में घुस गए और भोजन खरीदने की इच्छा जताई। दुर्भाग्य से डोगपा लोगों के पास अपने लिए पर्याप्त भोजन नहीं था और वे कुछ भी नहीं दे सके। संयोगवश, मेरे साथियों को सूचना मिली कि लांडो प्लेंकी (तिब्बतियों ने मुझे यही नाम दिया था) बड़ी संख्या में सैनिकों के साथ तिब्बत गया है। तकलाकोट और अन्य स्थानों पर भी भारी उत्साह का माहौल था, क्योंकि अंग्रेज के पास तिब्बती सैनिकों के पास आने पर खुद को अदृश्य करने की विचित्र शक्ति थी। तिब्बत में कई जगहों पर उसके बारे में सुना गया था। उसे पकड़ने के लिए सभी दिशाओं में सैनिक भेजे गए थे। कई बार उसके पदचिह्नों का पता लगाया गया और उनका पीछा किया गया। फिर भी वह कभी नहीं मिला। तकलाकोट से ल्हासा (सोलह दिन की यात्रा) और पश्चिमी तिब्बत के एक बड़े बाजार गार्टोक में दूतों को जल्दबाजी में भेजा गया था, जिसमें इस विचित्र आक्रमणकारी को पकड़ने में सहायता के लिए सैनिकों की मांग की गई थी, जिसके बारे में यह भी कहा जाता था कि उसके पास नदियों को पार करते समय पानी पर चलने और जब चाहे पहाड़ों के ऊपर उड़ने की शक्ति थी।

जब मुझे पहाड़ों पर चढ़ने और नदियों को पार करने के दौरान हुए हमारे संघर्ष और कष्ट याद आए, तो तिब्बतियों द्वारा मेरे बारे में दिया गया यह विवरण, जो अब मुझे दोहराया जा रहा था, मुझे लगभग क्रूरतापूर्ण विडंबनापूर्ण लगा। मुझे खुशी थी कि तिब्बतियों ने मुझे ऐसी अलौकिक शक्तियाँ प्रदान कीं, क्योंकि इससे वे हमारे बहुत करीब नहीं आ पाएँगे।

तीन और लंबे दिन हमारे दूतों के भाग्य को लेकर असहनीय चिंता में बीत गए। हमें डर था कि उन्हें पकड़ लिया गया होगा और उनका सिर कलम कर दिया गया होगा। हम हताशा में अपने किले में लौट आए थे। रात के 10 बज रहे थे। हम थक चुके थे और सोने के लिए तैयार थे। नाले के तल पर जल रही हमारी आग धीरे-धीरे बुझ रही थी। हमारे चारों ओर प्रकृति मृत्यु की तरह शांत और स्थिर थी। अचानक मुझे पास आते कदमों की

आहट सुनाई दी। हमने अपनी दीवार में बने संकरे छेदों से झाँकते हुए सुना। क्या ये तिब्बती हमें सोते समय आश्चर्यचकित करने की कोशिश कर रहे थे या अंततः मेरे आदमी लौट रहे थे?

हम उस घाटी पर नज़र रखे हुए थे जहाँ से आवाज़ें आ रही थीं—जी हाँ, हल्की-हल्की आवाज़ें और कदमों की आहट। आखिरकार चार लड़खड़ाते हुए लोग सावधानी से रेंगते हुए शिविर में पहुँचे। धुंधली रोशनी में हम तब भी यह नहीं बता पाए कि वे हमारे संदेशवाहक थे या नहीं।

मैंने चिल्लाकर पूछा, "कौन है?" (वहाँ कौन है?)

“डोला!” एक आवाज़ आई। हमने उनका खुशी से और गर्मजोशी से अभिवादन किया, लेकिन हमारी खुशी ज़्यादा देर तक नहीं टिकी। उन आदमियों ने कोई जवाब नहीं दिया। वे काफी थके हुए और डरे हुए लग रहे थे। मैंने उनसे उनकी परेशानी का कारण पूछा। रोते हुए और मेरे पैर पकड़ते हुए, उन्होंने पहले तो मुझे बताने से इनकार कर दिया। वाकई, जो खबर वे लाए थे वह बहुत गंभीर थी।

"महाराज, आपके दिन गिने-चुने हैं!" अंततः डोला चिल्लाई। "आपके लिए इस देश से ज़िंदा निकलना नामुमकिन है!... वे आपको मार डालेंगे! तकलाकोट के जोंग पेन ने कहा है कि उसे किसी भी कीमत पर आपका सिर चाहिए।"

"इतनी दूर की मत सोचो, डोला," मैंने उसे दिलासा देने की कोशिश करते हुए कहा। "पहले मुझे बताओ, तुम तकलाकोट कैसे पहुँचे?"

"ओह साहब, हमने आपकी योजना का पालन किया। रास्ते में हमें बहुत कष्ट सहना पड़ा। पैदल यात्रा लंबी और कठिन थी, और हमें बहुत कम भोजन मिला। हम दो दिन तक दिन-रात चलते रहे, मुख्य मार्ग से दूर रहे, और जब भी कोई दिखाई देता तो छिप जाते थे। जब हम तिब्बती किले के पास पहुँचे, तो हमने पहाड़ी की तलहटी में नेपाल के शोकाओं के कुछ तंबू देखे। ब्रिटिश क्षेत्र के किसी भी शोका को तिब्बत में प्रवेश करने की अनुमति नहीं थी। उस तरफ से देश में प्रवेश करने वाले किसी भी व्यक्ति को गिरफ्तार करने के लिए एक गार्ड दिन-रात कड़ी निगरानी रख रहा था। दो फकीर, जो पवित्र मानसरोवर झील की तीर्थयात्रा पर थे, खतरे से अनजान, लिप्पू दर्रा पार कर तकलाकोट की ओर बढ़ गए थे। उन्हें तुरंत पकड़ लिया गया और उन पर आप, महोदय, भेष बदलकर होने का आरोप लगाया गया। चूंकि तिब्बती इस बात को लेकर पूरी तरह से निश्चित नहीं थे कि भेष बदले हुए अंग्रेज कौन है, इसलिए उन्होंने दोनों को बुरी तरह से दंडित किया, लगभग जान से मार डाला। उनका क्या हुआ, यह हम जान नहीं पाए। तिब्बतियों को बाद में पता चला कि आप दूसरे दर्रे से तिब्बत में प्रवेश कर चुके हैं, और हर तरफ सैनिक भेजे गए हैं।" आपको ढूंढने के लिए सही दिशा।

“तकलाकोट पहुँचते ही,” डोला सिसकते हुए बोला, “हम पर टूट पड़े, हमें बुरी तरह पीटा गया और गिरफ्तार कर लिया गया। उन्होंने हमसे कड़ी पूछताछ की। हमने बताया कि हम जौहरी व्यापारी हैं, जिनके पास खाने की कमी हो गई थी और हम राशन खरीदने तकलाकोट आए थे। उन्होंने हमें पीटा और बुरा बर्ताव किया, तब जाकर आपके मित्र ज़ेनिराम, जो चोंगुर (नेपाल में) के मुखिया हैं, हमारी मदद के लिए आए और हमारे लिए तीस रुपये की ज़मानत दी। तब हमें तिब्बती सैनिकों की निगरानी में उनके तंबू में रहने की अनुमति दी गई।

हमने चुपके से उनसे राशन खरीदा और उसे पैक किया। रात में ज़ेनिराम ने हमारी रखवाली कर रहे सैनिकों को अपने तंबू में फुसलाकर बुलाया और उन्हें चोक्ती (एक प्रकार की शराब) पिलाई, जिससे वे नशे में चूर हो गए। हम चारों एक-एक करके अपने सामान के साथ भागने में सफल रहे। तीन रातों तक हम लगातार चलते रहे, दिन में छिपते रहे। अब हम आपके पास लौट आए हैं, महोदय।"

डोला एक-दो मिनट के लिए रुक गई।

"महोदय," उसने आगे कहा, "तकलाकोट में हमें बताया गया है कि एक हज़ार से ज़्यादा सैनिक हर जगह आपकी तलाश कर रहे हैं। ल्हासा और सिगात्ज़ से और भी सैनिकों के आने की उम्मीद है, जहाँ जोंग पेन ने जल्दबाज़ी में दूत भेजे हैं। वे आपसे डरते हैं, महाराज, लेकिन उन्हें ल्हासा से आदेश मिला है कि आपको किसी भी कीमत पर पकड़ लें। वे कहते हैं कि आप जब चाहें अदृश्य हो सकते हैं। रोज़ाना झाड़-फूंक की जाती है और प्रार्थनाएँ की जाती हैं, ताकि भविष्य में आपको देखा जा सके और गिरफ़्तार किया जा सके। एक बार पकड़े जाने पर, वे आप पर ज़रा भी दया नहीं करेंगे। आपका सिर कलम कर दिया जाएगा। जोंग पेन आपसे नाराज़ है, क्योंकि आपने गरब्यांग से उसे चुनौती भरे संदेश भेजे थे। उसने सैनिकों को आदेश दिया है कि आपको ज़िंदा या मुर्दा वापस लाएँ। जो भी आपका सिर लाएगा, उसे पाँच सौ रुपये का इनाम मिलेगा।"

"मुझे बिल्कुल भी अंदाजा नहीं था कि मेरा सिर इतना कीमती है!" मैं खुद को रोक नहीं पाया और खुशी से चिल्ला उठा। "मैं भविष्य में इसका बहुत ख्याल रखूंगा।"

तिब्बत में पांच सौ रुपये बहुत बड़ी संपत्ति मानी जाती है। जिसके पास इतनी रकम होती है, वही अमीर कहलाता है।

मेरे आदमियों ने इस पूरे मामले को बहुत गंभीरता से लिया।

मैंने राशन लाने वाले चारों आदमियों को अच्छा इनाम दिया, लेकिन इससे मेरे सभी शोकाओं को यह कहने से नहीं रोका जा सका कि खतरा इतना बड़ा है कि उन्हें मुझे वहीं छोड़कर जाना होगा। ऐसे मौकों पर अपील करना बेकार है। मैंने साफ कह दिया कि शिविर छोड़ने की कोशिश करने वाले किसी भी आदमी को मैं गोली मार दूंगा। अब मेरे पास दस दिन का राशन था, इसलिए मैंने अपने आदमियों को बताया कि सूर्योदय होते ही हमें आगे बढ़ना होगा।

रूठे और बड़बड़ाते हुए, शोका लोग किलेबंदी वाले कोने से निकलकर नीचे नाले की ओर चले गए। उन्होंने कहा कि उन्हें वहीं सोना ज़्यादा पसंद है। मुझे उन पर शक हुआ। मैं सोने के बजाय जागता रहा, उन्हें देखता और सुनता रहा। मेरा भारतीय नौकर अपने कंबल में लिपट गया और हमेशा की तरह जल्दी ही सो गया। शोका लोगों ने आग जलाई, उसके चारों ओर बैठ गए और सिर सटाकर धीमी आवाज़ में उत्तेजित होकर सलाह-मशविरा करने लगे। गरमागरम बहस में कुछ लोग अपनी कल्पना से ज़्यादा ज़ोर से बोल रहे थे। रात बहुत शांत थी और जगह आवाज़ के लिए अनुकूल थी, इसलिए मैंने कुछ ऐसी बातें सुनीं जिनसे मैं सतर्क हो गया। मुझे जल्द ही यकीन हो गया कि वे मेरा सिर बेचने की योजना बना रहे थे... हाँ... और पैसे आपस में बाँटने की!

वे लोग एक-दूसरे के करीब आ गए और इतनी धीमी आवाज़ में बोलने लगे कि मैं कुछ और सुन नहीं सका। फिर बारी-बारी से उन्होंने एक छड़ी पर एक हाथ दूसरे के ऊपर रखा, जब तक कि उसका अंत न आ गया; फिर हर आदमी ने उसे अपने पड़ोसी को दे दिया, जिसने भी वही किया; यह एक अजीब तरह की लॉटरी थी, जो शोका लोगों में आम थी। अंत में, भाग्य द्वारा चुने गए व्यक्ति ने एक ढेर से एक बड़ा गोरखा चाकू निकाला और उसकी म्यान खोली। मुझे वह क्षण अच्छी तरह याद है जब टिमटिमाती आग की छोटी सी लौ से रोशन चेहरों के साथ, सभी पुरुषों ने मेरी झोपड़ी की ओर देखा। जिस दीवार के पीछे मैं घुटनों के बल बैठा था, उस दरार से देखने पर उनके चेहरे विकृत और भयानक लग रहे थे। वे यह सुनने के लिए कान लगा रहे थे कि क्या हम सो रहे हैं। फिर एक को छोड़कर बाकी सभी ने अपने कंबलों में खुद को लपेट लिया, अपने सिर और शरीर को पूरी तरह से ढक लिया। अब जो एक व्यक्ति मुझे दिखाई दे रहा था, वह कुछ देर आग के पास बैठा रहा, मानो गहरी सोच में डूबा हो। वह बीच-बीच में अपना सिर मेरी झोपड़ी की ओर घुमाता और सुनता। अंत में वह उठा और अपने पैरों से आग बुझा दी। वह एक सुहावनी रात थी, और जैसे ही लाल रंग की लौ बुझी, तारे गहरे नीले आकाश में हीरे की तरह चमक उठे।

मैंने अपनी राइफल की नली दीवार पर टिका दी, मेरी निगाहें नीचे खड़े काले व्यक्ति पर टिकी हुई थीं। झुका हुआ गद्दार धीरे-धीरे कुछ गज रेंगता हुआ मेरे घर की ओर बढ़ा, हर बार किसी लुढ़कते पत्थर की आवाज सुनकर रुकता रहा। अब वह मुझसे सिर्फ दो-तीन गज दूर था। वह हिचकिचाता हुआ प्रतीत हुआ। पीछे हटते हुए और उछलने के लिए तैयार, मैंने अपनी निगाहें दीवार के ऊपर टिकाए रखीं। मैंने कुछ देर इंतजार किया, लेकिन वह आदमी जल्दी में नहीं था। मैं अधीर हो गया।

मैं धीरे से उठा, हाथ में राइफल लिए, और जैसे ही मैंने दीवार के ऊपर अपना सिर उठाया, मैंने खुद को दूसरी तरफ खड़े आदमी के सामने पाया। मैंने बिना देर किए अपनी मैनलिचर राइफल का मुंह उसके चेहरे के पास कर दिया। हैरान शोका ने अपना चाकू गिरा दिया, घुटनों के बल बैठ गया और मुझसे माफी मांगी। उसे मेरी राइफल के बट से जोरदार प्रहार पड़ा। मैंने सोचा कि बेहतर होगा कि मैं यह सुनिश्चित कर लूं कि रात में कोई और गड़बड़ी न हो। दो आदमियों ने शिविर से रेंगकर भागने की कोशिश की, लेकिन मैंने उन्हें देख लिया और समय रहते रोक दिया। आखिरकार सूरज निकला, और रात अपने सभी कष्टों और चिंताओं के साथ समाप्त हो गई।

फुटनोट:

[5] अंग्रेजी मानचित्रों पर आमतौर पर "शिगात्ज़े" कहा जाता है।

अध्याय X

दुश्मनों और लुटेरों के बीच

टेरर कैंप के ऊपर पहाड़ी पर अपनी आखिरी टोही यात्रा के दौरान मैंने अपने टेलीस्कोप की सहायता से, हमसे लगभग तीन मील उत्तर में तिब्बती गार्डों का एक शिविर देखा था।

सुबह हमने दफनाए गए सामान का मुख्य हिस्सा खोदकर निकाला और चलने की तैयारी की। मेरे साथियों में से एक, नट्टू, आगे आया और उसने दावा किया कि वह मुझे सीधे मानसरोवर झील तक ले जा सकता है। वह इस काम को करने के लिए उत्सुक लग रहा था, और उसने कहा कि जिस रास्ते से वह जाता है, उस रास्ते से तिब्बतियों द्वारा देखे जाने का कोई खतरा नहीं होगा, इसलिए हम दिन के समय ही चल सकते हैं।

इस आदमी के नेतृत्व में, हम नाले में आगे बढ़ने लगे। शोकाओं की आगे बढ़ने की तत्परता देखकर मैं चकित रह गया। थोड़ी ही देर में मुझे यकीन हो गया कि नट्टू जानबूझकर हमें उस जगह ले जा रहा है जहाँ मैं बिल्कुल नहीं जाना चाहता था। जब मैंने विरोध किया और उस दिशा में आगे बढ़ने से रोका, तो शोकाओं ने विद्रोह कर दिया और अपना बोझ नीचे रखकर भागने की कोशिश की। चंदेन सिंह ने संकरे नाले में तुरंत उनका रास्ता रोक दिया। मैंने दूसरी तरफ से उन्हें भागने से रोका। उन्हें आत्मसमर्पण करना पड़ा। उन्हें वहीं पर कड़ी सजा दी गई। गहन पूछताछ में उन्होंने कबूल किया कि उन्होंने मुझे तिब्बती गार्ड के हवाले करने की साजिश रची थी, ताकि वे खुद तिब्बतियों द्वारा दी जाने वाली यातनाओं से बच सकें। रात में जो कुछ हुआ था, उसके बाद उन्हीं लोगों द्वारा किया गया यह विश्वासघात, जिनके प्रति मैं इतना दयालु था, मेरे लिए असहनीय था। मैंने चंदेन सिंह द्वारा दी गई एक छड़ी का इस्तेमाल उनकी पीठ और पैरों पर बेधड़क किया - नट्टू को सबसे ज्यादा चोटें लगीं, क्योंकि वह निस्संदेह साजिश का सरगना था।

एक ऊंचे स्थान पर चढ़कर मैंने एक और खोज की। हमारे उत्तर में तैनात पहरेदारों के अलावा, पूर्व और पश्चिम दोनों ओर तिब्बती सैनिकों ने हमारा रास्ता रोक रखा था। दिन के समय बिना देखे आगे बढ़ना असंभव था। मैंने दक्षिण वापस जाने से साफ इनकार कर दिया। मैंने अपने साथियों से परामर्श किया, जो अब अपनी किस्मत को स्वीकार कर चुके थे। वे मेरे साथ मैयुम दर्रे (ल्हासा जाने वाली सड़क पर) तक चलने के लिए सहमत हुए, जहाँ तक पहुँचने में हमें पंद्रह से अठारह कदम लगने थे। वे मेरे लिए याक और भोजन की व्यवस्था करने का प्रयास करने के लिए भी सहमत हुए, और उसके बाद मुझे उन्हें विदा करना था।

जिस पहाड़ी की चोटी पर मैं चढ़ा था, वहाँ से मैंने सावधानीपूर्वक दिशा का जायजा लिया था। रात में, अपने चमकदार कंपास की सहायता से, मैंने अपने साथियों को ज्ञानमा-तकलाकोट मार्ग से लगभग 1500 फीट की औसत ऊँचाई पर स्थित पर्वत श्रृंखला पर आगे बढ़ाया।

रात अंधेरी और तूफ़ानी थी। फिसलन भरी ज़मीन के कारण हमें आगे बढ़ने में बहुत कठिनाई हुई। जहाँ ज़मीन फिसलन भरी नहीं थी, वहाँ भी हमें ढीले पत्थरों पर पैर रखकर चलना पड़ा। हम दूर तक कुछ देख नहीं पा रहे थे। हालाँकि ढलान के कोण से हम अच्छी तरह जानते थे कि हम एक गहरी खाई के किनारे चल

रहे हैं, फिर भी हमें नीचे कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था सिवाय एक बहुत ही चमकदार लकीर के जो बहुत नीचे तक फैली हुई थी—निस्संदेह वह नदी ही थी।

मैं पानी की चमक का कारण नहीं बता सका। ऐसा नहीं लग रहा था कि यह तारों या चंद्रमा के प्रकाश के परावर्तन से आ रही है, क्योंकि उस समय आकाश में बादल छाए हुए थे। नदी का रंग अजीब सा हरा था, जो बिजली के डिस्चार्ज से उत्पन्न प्रकाश जैसा लग रहा था। ज़्यादा खतरनाक जगहों पर हमें लंबी दूरी तक चारों हाथों-पैरों के बल चलना पड़ा। फिर भी हम पूरी तरह सुरक्षित महसूस नहीं कर रहे थे, क्योंकि हमें ढलान से पत्थरों के लुढ़कने की आवाज़ सुनाई दे रही थी, और उन्हें तल तक पहुँचने में लगने वाले समय से हम समझ गए थे कि हम एक असाधारण ऊँचाई वाली खाई के ऊपर से जा रहे हैं। चलना इतना कठिन और कष्टदायक था कि हमें लगभग तीन मील की दूरी तय करने में चार घंटे लग गए। हम इतने थक गए थे कि बीच-बीच में हमें ठंड से काँपते हुए लेटकर आराम करना पड़ता था। नुकीले पत्थरों से लगे कटों से हमारे हाथों से खून बह रहा था। मैंने अपने साथियों को इकट्ठा किया। बेचारा मानसिंग, कुष्ठ रोगी, गायब था। जब हमने उससे आखिरी बार बात की थी, तो वह अपने बोझ के नीचे कराह रहा था, और वह बार-बार ठोकर खाकर गिर रहा था। दो लोगों को खोज में भेजा गया, लेकिन एक घंटे के बाद भी वे उसे नहीं ढूंढ पाए। तब वफादार चंदन सिंह और शोका डोला को उसकी मदद के लिए भेजा गया। एक और घंटे की चिंता के बाद दोनों उस बदकिस्मत कुली को लेकर लौटे। बेचारे के हाथ-पैर बुरी तरह से कट गए थे। दर्द इतना असहनीय था कि वह सीधा खड़ा नहीं हो पा रहा था। वह थकान से बेहोश होकर गिर पड़ा था, और अंधेरे में संयोग से चंदन सिंह की नज़र उसके बेसुध शरीर पर पड़ी। उसकी जान जाने के अलावा, उसका जाना मेरे लिए बहुत बड़ी बात होती, क्योंकि वह मेरा बिस्तर और कैमरे ढोता था।

ओले और बारिश शुरू हो गई। ठंड बहुत तेज़ थी। हम लगातार चढ़ाई करते रहे, चंदन सिंह और मैं उस बेचारे कुष्ठ रोगी की मदद कर रहे थे। बर्फ पिघलने से बने एक गड्ढे के किनारे-किनारे चलने से सफ़र थोड़ा आसान हो गया। हम तेज़ हवा से बच गए, जो ओलों को हमारे चेहरों पर ज़ोर से मार रही थी। हमने धीरे-धीरे लगभग तीन मील और तय किए। इसी दौरान तूफ़ान थम गया और आसमान एकदम साफ़ हो गया। जब हम दर्रे (17,000 फीट से ज़्यादा ऊँचा) पर पहुँचे, तो एक अजीबोगरीब दृश्य ने हम सबको चकित कर दिया। बड़े तारे और ग्रह, इतनी चकाचौंध भरी चमक के साथ, जैसा मैंने अपने जीवन में पहले कभी नहीं देखा था, आकाश में तेज़ी से और अचानक झटकों के साथ इधर-उधर झूलते हुए, छोटे-छोटे वृत्त बनाते हुए, हर बार अपनी सामान्य स्थिति में लौटते हुए दिखाई दिए। यह नज़ारा इतना अजीब था कि पहले तो मुझे लगा कि मेरी नज़र कमज़ोर हो गई है, लेकिन मेरे साथियों ने भी वही नज़ारा देखा। इससे भी ज़्यादा अजीब बात यह थी कि क्षितिज के पास के तारे पर्वत श्रृंखला के पीछे गायब होते और फिर से दिखाई देते हुए दिखाई दे रहे थे। क्षितिज के निकट स्थित खगोलीय पिंडों का दोलन कम तीव्र था, लेकिन उनके द्वारा निर्धारित चाप का कोण हमारे सिर के ठीक ऊपर स्थित तारों द्वारा निर्धारित चाप के कोण से लगभग दोगुना था। विशेष रूप से कुछ क्षणों में, इन तारों का दोलन इतना तीव्र था कि तारा अपने सामान्य स्वरूप के बजाय आकाश की गहरे नीले

रंग की पृष्ठभूमि पर प्रकाश की एक निरंतर लकीर के रूप में दिखाई देने लगा। यह विचित्र प्रकाशीय भ्रम, जो तूफान के थमने के तुरंत बाद शुरू हुआ, कुछ समय तक बना रहा। धीरे-धीरे दोलन कम तीव्र होते गए, और तारे और ग्रह अंततः अपनी सामान्य स्थिरता में लौट आए, और अत्यंत चमक और सुंदरता से जगमगा उठे।
हमने दर्रा पार किया और सीधे उसके उत्तरी किनारे पर रुक गए। मेरे साथियों को असहनीय दर्द हो रहा था। उनके पैरों की हालत बहुत खराब थी। न्यूनतम तापमान 12 डिग्री फ़ारेनहाइट था। हमने अपना तम्बू नहीं लगाया और जब हम सोने गए तो हमारे और स्वर्ग के बीच केवल एक कंबल था। सुबह उठने पर हमने पाया कि थर्मामीटर 30 डिग्री तक चढ़ गया था। हम घने कोहरे से घिरे हुए थे, जिससे हमारी हड्डियाँ तक काँप रही थीं। मेरी मूंछों, पलकों और बालों से बर्फ की बूंदें लटक रही थीं। मेरे गाल और नाक पर बर्फ की एक पतली परत जम गई थी, जो साँस के जमने और चेहरे पर जमने के कारण बनी थी।
ऊँची पर्वत श्रृंखलाओं पर रात्रिकालीन पदयात्रा के दौरान, स्वाभाविक रूप से हमें अनेक रोमांचक अनुभव हुए और हम कई बार जान बचाकर भागे। धूल और बर्फ के लगातार तूफानों में, हम एक के बाद एक पर्वत श्रृंखलाओं को पार करते रहे, रात में यात्रा करते और दिन में छिपते, हमेशा ऊँची जगहों पर डेरा डालते। हमने काफी कठिनाइयों का सामना किया। मैंने अपने साथियों को राकास्टल, या शैतान की झील की ओर अग्रसर किया। एक दिन, 17,550 फीट की ऊँचाई पर पहुँचकर, हमें लाफान-चो और माफान-चो नामक दो विशाल जलराशि का शानदार दृश्य दिखाई दिया, जिन्हें गैर-तिब्बती लोग आमतौर पर राकास्टल और मानसरोवर झीलों के नाम से जानते हैं।
झीलों के उत्तर में भव्य तिज़े पर्वत, पवित्र केलास पर्वत स्थित था, जो गंगरी पर्वत श्रृंखला की अन्य सभी बर्फीली चोटियों से लगभग 2000 फीट ऊँचा था। यह श्रृंखला उत्तर-पश्चिम से दक्षिण-पूर्व तक फैली हुई थी। इस स्थान से हम लामा चोक्तेन की तुलना में पर्वत के आधार के चारों ओर की पट्टी को अधिक स्पष्ट रूप से देख सकते थे, जिसके बारे में किंवदंती है कि यह शिव के सिंहासन को गिराने के प्रयास में राक्षसों (राक्षसों) द्वारा बुनी गई रस्सी से बनी थी।
टीज़, महान पवित्र शिखर, अपने अनोखे आकार के कारण बेहद आकर्षक था। यह किसी मंदिर की विशाल छत जैसा दिखता था। शायद इसमें घुमावदार आकृतियों की सुंदरता का अभाव था। टीज़ कोणीय था—बेहद कोणीय। इसकी ऊँचाई, इसके आधार का चटख रंग और इसकी ढलानों को ढकने वाली बर्फ की मोटी चादरें निश्चित रूप से इसे एक विशेष आकर्षण प्रदान करती थीं। अन्यथा, यह मुझे बेहद ही अनाकर्षक लगा—कम से कम उस बिंदु से जहाँ से मैंने इसे देखा और जहाँ से इसका पूरा चेहरा दिखाई दे रहा था। जब बादल छंट जाते और इसका आकार बदल देते, तो टीज़ एक चित्रकार के नज़रिए से अपने सबसे सुंदर रूप में दिखाई देता। इन परिस्थितियों में, मैंने इसे सुंदर पाया है, विशेष रूप से सूर्योदय के समय, जब इसका एक भाग लाल और पीले रंग से रंगा होता है, और इसकी चट्टानी संरचना सुनहरे रंग की चमकदार पृष्ठभूमि के सामने भव्य रूप से खड़ी होती है। अपनी दूरबीन से मैं स्पष्ट रूप से देख सकता था, विशेष रूप से पूर्वी भाग में, वह दर्रा जहाँ से होकर श्रद्धालु पर्वत के आधार पर परिक्रमा करते हैं। मुझे बताया गया कि कुछ तीर्थयात्री वास्तव में

आधार के ठीक ऊपर, पहले वर्णित गहरे रंग की चट्टान की पट्टी के ठीक ऊपर, बर्फीली चट्टान पर परिक्रमा करते हैं। दक्षिण-पश्चिम दिशा में, एक निचली चोटी के शीर्ष पर, एक विशाल ओबो (पत्थर का पिरामिड) दिखाई दे रहा था।

तिज़े की परिक्रमा में आमतौर पर तीन दिन लगते हैं। कुछ लोग इसे दो दिनों में पूरा कर लेते हैं, और अनुकूल परिस्थितियों में तो एक दिन में भी यह संभव हो जाता है। तीर्थयात्रियों द्वारा यात्रा के दौरान कुछ प्रार्थनाएँ करना और बलिदान चढ़ाना आम बात है। कुछ कट्टरपंथी लोग सर्प की दिशा में यात्रा करते हैं, हर कदम पर ज़मीन पर लेट जाते हैं। कुछ लोग हाथों और घुटनों के बल चलते हैं, और कुछ लोग पीछे की ओर चलते हैं।

तिज़े, जिसे केलास भी कहा जाता है, की ऊँचाई 21,830 फीट है, और इसके पश्चिम में स्थित नंदीफू की ऊँचाई 19,440 फीट है। पवित्र पर्वत के उत्तर-पश्चिम में 20,460 फीट, 19,970 फीट और 20,280 फीट ऊँची अन्य चोटियाँ दिखाई देती हैं।

जब मैं इस दृश्य का रेखाचित्र बना रहा था, तभी एक हिम तेंदुआ हमारे सामने से फुर्ती से उछलता हुआ निकला। जीव-जंतुओं की भरमार प्रतीत हो रही थी। मैंने एक-दो बार थार (पहाड़ी बकरी) की तस्वीर खींची, और हमने कई सारे कियांग (जंगली घोड़े) देखे। हमें रूबर्ब मिला, जो 17,000 फीट की ऊंचाई पर भी खूब फल-फूल रहा था, और उसी स्थान पर और उसी ऊंचाई पर पीले फूलों की भी प्रचुर मात्रा मिली। 19,000 फीट की ऊंचाई पर मैंने सफेद और काले रंग की छोटी तितलियों के दो जोड़े पकड़े। उन्हें उड़ने में काफी कठिनाई हो रही थी।

झीलों के पास पहुँचते ही वातावरण नमी से भरा हुआ प्रतीत हुआ। सूरज डूबते ही ज़ोरदार ओस पड़ी, जिससे हमारे कंबल और कपड़े भीग गए। हम 16,550 फीट की ऊँचाई पर एक संकरी, दलदली धारा में थे, जहाँ से हम पिछली पर्वत श्रृंखला से तेज़ी से नीचे उतरे थे। पर्वत श्रृंखला की चोटी से हमने डेविल्स लेक के आसपास से धुएँ के कई गुबार उठते देखे थे। हमने अनुमान लगाया कि हमें फिर से बहुत सावधानी से आगे बढ़ना होगा।

हमने अपना खाना पकाया। आधी रात को, अधिक सुरक्षा के लिए, हमने पठार की चोटी पर उत्तर-पूर्व दिशा में अपना शिविर स्थानांतरित कर दिया। सुबह हमने सुंदर द्वीपों से सजी शैतान झील के शानदार नीले पानी के ऊपर अपनी यात्रा जारी रखी।

"महोदय, क्या आपको वह द्वीप दिखाई दे रहा है?" नट्टू ने झील में एक बंजर चट्टान की ओर इशारा करते हुए कहा। "उस पर," उसने आगे कहा, "एक साधु लामा रहते हैं, जो एक संत पुरुष हैं। वे कई वर्षों से वहाँ अकेले हैं और तिब्बती लोग उनका बहुत आदर करते हैं। वे लगभग पूरी तरह से मछली और कभी-कभार हंस के अंडे खाकर अपना जीवन यापन करते हैं। केवल सर्दियों में, जब झील जम जाती है, तभी तट से संपर्क स्थापित हो पाता है और उनके लिए त्साम्बा की आपूर्ति की जाती है। शैतान की झील में न तो नावें हैं और न ही लकड़ी की कमी के कारण बेड़ा बनाने का कोई साधन है। साधु एक गुफा में सोते हैं, लेकिन आम तौर पर बुद्ध से प्रार्थना करने के लिए बाहर आते हैं।"

अगली रात, जब सब कुछ शांत था, उत्तर से बहने वाली एक हल्की हवा ने हमें साधु की टूटी-फूटी कराहों की धुंधली और अस्पष्ट आवाजें सुनाईं।
मैंने शोकास से पूछा, "यह क्या है?"
"यह एक संन्यासी की ईश्वर से प्रार्थना है। हर रात वह चट्टान की चोटी पर चढ़ता है और वहां से महान बुद्ध से प्रार्थना करता है।"
मैंने पूछा, "उसने कैसे कपड़े पहने हैं?"
"खाल में।"
दोपहर ढलते ही हमारे साथ एक रोचक घटना घटी। हम एक नाले के पास पहुँचे जहाँ कई पुरुष और महिलाएं, सैकड़ों याक और भेड़ें तथा लगभग तीस टट्टू मौजूद थे।
शोका लोग घबरा गए और तुरंत उन लोगों को डाकू घोषित कर दिया। मैंने कहा कि वे डाकू नहीं थे। काची का मानना था कि डाकुओं और ईमानदार लोगों में फर्क करने का एकमात्र तरीका उनकी बातचीत सुनना है। उसने कहा कि डाकू आमतौर पर बातचीत करते समय बहुत जोर से चिल्लाते हैं और उनकी भाषा सभ्य नहीं होती, जबकि संपन्न तिब्बती लोग विनम्रता और शालीनता से बात करते हैं। मैंने सोचा कि एकमात्र उपाय यही है कि जाकर उन लोगों से बात की जाए, जिससे उनकी आवाज के लहजे से पता चल जाएगा कि वे कौन हैं और क्या हैं। लेकिन यह मेरे शोका लोगों को रास नहीं आया। हम एक अजीब स्थिति में फंस गए थे। अपनी यात्रा जारी रखने के लिए हमें या तो तिब्बती शिविर से होकर गुजरना था या फिर एक पहाड़ के चारों ओर दक्षिण की ओर मार्च करना था, जिसमें काफी परेशानी, थकान और समय की बर्बादी होती। हम रात होने तक इंतजार करते रहे, छुपकर नीचे तिब्बतियों को देखते रहे। जैसा कि उनकी प्रथा है, सूर्यास्त के समय वे अपने तम्बुओं में चले गए। अपने आदमियों को पीछे छोड़कर, मैं रात में रेंगते हुए उनके शिविर में घुसा और एक तंबू में झाँका। आदमी बीच में जल रही आग के चारों ओर ज़मीन पर बैठे थे, जिस पर दो बर्तनों में चाय उबल रही थी। एक बूढ़े आदमी के चेहरे पर मंगोलियाई भाव स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहे थे, जो आग की रोशनी से पड़ रही गहरी छाया में उसकी नुकीली गाल की हड्डियों और उभरे हुए झुर्रीदार माथे पर और भी निखर रहे थे। वह व्यस्तता से अपने प्रार्थना-चक्र को बाएँ से दाएँ घुमा रहा था और यंत्रवत रूप से 'ओम्ने मणि पद्मे हुन' का जाप कर रहा था, जो संस्कृत से लिए गए शब्द हैं और बुद्ध के कमल के फूल से पुनर्जन्म का संकेत देते हैं, जिसका शाब्दिक अर्थ है, "हे भगवान, कमल के फूल से निकला रत्न।" दो-तीन अन्य आदमी, जिनके चेहरे मैं ठीक से नहीं देख सका, क्योंकि वे नीचे झुके हुए थे, पैसे गिन रहे थे और भारतीय निर्मित कई वस्तुओं की जाँच कर रहे थे, जो निस्संदेह शोकासियों से जब्त की गई थीं।
बिना देखे निकलने का सबसे अच्छा रास्ता खोजकर, मैं अपने आदमियों के पास वापस गया और आधी रात को तिब्बती शिविर से होते हुए उनका नेतृत्व किया। हम शिविर से लगभग एक मील आगे बढ़े। एक सुरक्षित जगह चुनकर, जहाँ हमें लगा कि हम बिना पकड़े जाने के डर के आराम कर सकते हैं, हमने अपना सामान रखा और कुछ घंटे सोने की कोशिश की। सूर्योदय होते ही हम चौंक गए जब हमने देखा कि हमारा शिविर

लुटेरों के एक गिरोह से घिरा हुआ है। पिछली रात के हमारे दोस्त हमारे पदचिह्नों का पीछा करते हुए आए थे और हमें शोका व्यापारी समझकर एक छोटी-सी लूटपाट करने आए थे। पास आने पर उनका स्वागत कुछ खास गर्मजोशी से नहीं हुआ। उनका तुरंत पीछे हटना गरिमापूर्ण तो नहीं था, लेकिन बहुत तेज़ था।

हम संकरी घाटी से होते हुए डेविल्स लेक के किनारे की ओर बढ़े और पानी के किनारे से लगभग आधा मील दूर रुककर खाना पकाया। इस बिंदु पर मैंने देशांतर और क्वथनांक थर्मामीटर से सही ऊँचाई मापी। वायुमंडल का तापमान 64° फ़ारेनहाइट था और पानी 185° पर उबल रहा था।

मैंने अभी-अभी अपने औजार पैक किए थे और अपने साथियों से कुछ दूरी पर धूप में लेटा हुआ था, तभी मुझे कुछ हिलता हुआ दिखाई दिया। उछलकर उठते ही मैंने देखा कि एक हट्टा-कट्टा तिब्बती मेरे से कुछ ही गज की दूरी पर ज़मीन पर रेंगता हुआ आ रहा था, जिसका मकसद शायद मेरी राइफल छीनना था। वह इतना तेज़ नहीं था। उसे बस मेरी मैनलिचर राइफल के बट से एक ज़ोरदार चोट मिली। मैंने उसे पहचान लिया; वह उन्हीं डाकुओं में से एक था जिन्हें हमने सुबह देखा था। वे हमारा पीछा करते हुए हम पर नज़र रख रहे थे। पहले तो वह चौंक गया और दया की भीख मांगने लगा, फिर उस डाकू ने मासूमियत का दिखावा करते हुए हमसे अपने तंबू में उसके और उसके दोस्तों के साथ रात बिताने का अनुरोध किया। उसने कहा कि वे हमारा शाही स्वागत करेंगे। लुटेरों की मेहमाननवाज़ी से अच्छी तरह वाकिफ होने के कारण हमने उसका निमंत्रण ठुकरा दिया। वह डाकू थोड़ा सहमा हुआ और निराश होकर चला गया। हमने शैतान झील के किनारे-किनारे अपनी यात्रा जारी रखी। सैकड़ों खरगोश हमारे चारों ओर उछल-कूद कर रहे थे। वे इतने असंख्य थे कि मैंने अपनी राइफल से गोलियों के कारतूसों का इस्तेमाल करके कई को मार गिराया। चारों ओर ऐसे संकेत थे जिनसे पता चलता था कि किसी अतीत में झील का जलस्तर वर्तमान से कहीं अधिक रहा होगा।

दिन के समय चलते हुए, हमें कई तिब्बती मिले, जिनमें से कुछ डोगपा थे और कुछ जोगपा, दोनों ही लुटेरों के खानाबदोश गिरोह थे। जब उन्होंने हमें पास आते देखा तो वे आम तौर पर अपनी भेड़ों और याकों को आगे-आगे भगाते हुए भाग गए। हमें दो तिब्बती महिलाएं मिलीं, जो बहुत गंदी थीं। उनके चेहरे पर काली मरहम लगी हुई थी, जो त्वचा की सुरक्षा के लिए और तेज़ हवा में फटने से बचाने के लिए थी। उन्होंने भेड़ की खाल के लंबे, फटे-पुराने और गंदे वस्त्र पहने हुए थे। उनके उलझे हुए बाल इतने गंदे थे कि उनसे घिनौनी बदबू आ रही थी। मैंने उन्हें हमारे पास न आने का आदेश दिया।

बाद में, चंदेन सिंह के हाथ से राइफल छीनने की कोशिश करने वाले चार तिब्बतियों को चंदेन सिंह ने ऐसी मार मारी जिसे वे शायद ही कभी भूल पाएंगे। इसके बाद हम दिन के बाकी समय अकेले रह गए। शाम को चंदेन सिंह ने शिविर के पास आए एक काले भेड़िये पर गोली चलाई। मैंने झील के तल से लगभग सौ फीट ऊपर, पहाड़ की ढलान में दबे हुए विशाल जीवाश्मों की एक परत देखी, जिन्हें उनके आकार और वजन के कारण मैं खोदकर निकाल नहीं सका।

हमें लगभग पूरा यकीन था कि जिन कई जोगपाओं से हम मिले थे, वे हर समय हम पर नज़र रख रहे थे, और उनकी रात में सोते हुए अजनबियों पर हमला करने की आदत को जानते हुए, हम आमतौर पर एक साधारण

चाल चलते थे। सूर्यास्त से पहले हम डेरा डालने का नाटक करते थे, और आग जलाकर उन्हें यह सोचने देते थे कि हम रात के लिए रुके हैं, फिर अंधेरा होने पर आग जलती छोड़कर भाग जाते थे। कई मील तक ठोकर खाते हुए चलने के बाद, आखिरकार हमें पहाड़ी की ऊँची चोटी पर एक जगह मिली, जहाँ हमने खुद को सुरक्षित समझा। रात भर भारी बर्फबारी हुई, और हमेशा की तरह हम अपनी मूंछों, पलकों और बालों से बर्फ की बूंदें लटकती हुई देखकर उठे। इसके अलावा हम वास्तव में खुश और स्वस्थ महसूस कर रहे थे।

यह मेरा सौभाग्य था कि मैंने कई बिंदुओं से यह सुनिश्चित कर लिया कि राकस और मानसरोवर झीलों के बीच की पर्वत श्रृंखला निरंतर है और दोनों झीलों के बीच कोई प्रत्यक्ष संपर्क नहीं है। लगभग मध्य में स्थित एक छोटे से गड्ढे को छोड़कर, पूरी श्रृंखला की औसत ऊंचाई 1000 फीट है - यह तथ्य स्वयं ही उस सिद्धांत को खारिज कर देता है जो कुछ लोगों का मानना है कि दोनों झीलें इस पर्वत श्रृंखला को पार करने वाली एक चौड़ी नहर से जुड़ी हुई हैं। मैंने स्थानीय लोगों से पता लगाया कि झीलों के बीच कोई प्रत्यक्ष संपर्क नहीं है, हालांकि पर्वत श्रृंखला में स्थित गड्ढे से यह संभावना बनती है कि बहुत पुराने समय में इनके बीच कोई संबंध रहा होगा। पर्वत श्रृंखला के मध्य में स्थित इस गड्ढे का सबसे निचला बिंदु झीलों के तल से तीन सौ फीट से अधिक ऊपर है।

अध्याय XI

अजनबी संगति में

रकास्टल के तट से निकलने से ठीक पहले मुझे एक बड़ा सौभाग्य प्राप्त हुआ। डाकुओं के एक अन्य गिरोह ने हमें देख लिया था, जो हमारा पीछा कर रहे थे। मैंने दूरबीन से उन्हें हमारी ओर आते हुए देखा। वे लगभग बीस याक अपने आगे तेज़ी से ले जा रहे थे। डाकू टट्टुओं पर सवार थे। हम उनसे लगभग डेढ़ मील आगे थे और शैतान झील के किनारे के पास थे। हमने उन्हें पहाड़ी से तेज़ी से हमारी ओर आते देखा। यह स्पष्ट था कि वे हमारा पीछा कर रहे थे। जब मैंने रुकने का आदेश दिया तो मेरे साथी दहशत में आ गए।

लुटेरों का गिरोह पास आया और उन्होंने याकों को दो महिलाओं के भरोसे छोड़ दिया। जब वे एक पंक्ति में हमारी ओर घोड़े दौड़ाते हुए आए, तो चंदेन सिंह और मानसिंह को छोड़कर मेरे सभी आदमी भय से कांप उठे।

अब डाकू मुझसे सौ गज दूर थे। एक हाथ में भरी हुई राइफल और दूसरे हाथ में कैमरा लिए मैं उनका सामना करने के लिए आगे बढ़ा, यह जानते हुए कि उनकी पुरानी शैली की माचिस वाली बंदूकों से कारतूस जलाने और गोली चलाने में उन्हें काफी समय लगता था। इसके अलावा, उनके हथियार भारी और बोझिल होने के कारण घोड़े पर सवार होकर गोली चलाना उनके लिए लगभग असंभव था।

मैंने अपने दो लेंस वाले कैमरे से उन पर फोकस किया और तब तक इंतजार किया जब तक वे मेरे काफी करीब नहीं आ गए। मैंने तब तस्वीर खींची जब वे मुझसे सिर्फ तीस गज दूर थे और अपने टट्टुओं से उतरते हुए उन पर से छलांग लगा रहे थे। कैमरा अपना काम पूरा कर चुका था, इसलिए मैंने उसे तुरंत जमीन पर रख दिया और राइफल कंधे पर रख ली। मैंने उन्हें अपने हथियार नीचे रखने के लिए चिल्लाकर कहा। अपनी बात को और प्रभावी बनाने के लिए मैंने अपनी मैनलिचर राइफल से उन पर निशाना साधा।

मुझे नहीं लगता कि कहीं इतने डरपोक डाकू मिल सकते थे। ऐसे लोग तभी बहादुर होते थे जब उनके लिए साहस दिखाना आसान होता था। उन्होंने जल्दी से अपने कंधों से बंदूकें उतारकर ज़मीन पर फेंक दीं। उनकी रत्नजड़ित तलवारें भी हथियारों के बगल में रख दी गईं। डाकू घुटनों के बल बैठ गए और दोनों हाथों से अपनी टोपियाँ उतारकर, प्रणाम और समर्पण के संकेत में जीभ बाहर निकाल लीं। मैं उनकी उस हास्यास्पद मुद्रा की एक और तस्वीर लेने से खुद को रोक नहीं पाया।

चंदेन सिंह, जिसे सामान की देखभाल का जिम्मा सौंपा गया था, ने मानसिंह को ज़िम्मेदारी दी थी और अब वह मार्टिनी-हेनरी राइफल लेकर मेरे बगल में खड़ा था, तभी एक महिला घोड़े पर सवार होकर वहाँ आ पहुँची। वह अपने आदमियों की कायरता पर स्पष्ट रूप से क्रोधित थी। मुझे उसका यह गुस्सा अच्छा लगा। वह अपने घोड़े से कूदी, ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाई, मेरे सामने घुटने टेके आदमियों पर मुट्ठियाँ लहराईं और अंत में क्रोध से आग बबूला होकर उन पर थूक दिया। इस तरह लुटेरों के गिरोह को कोसते हुए, वह बार-बार मेरे सामान की ओर इशारा कर रही थी; लेकिन उसकी बातों का आज्ञाकारी भीड़ पर कोई खास असर नहीं हुआ।

मैं उसके पास गया, उसकी पीठ थपथपाई और चुप रहने के बदले उसे एक रुपया देने की पेशकश की। उसने सिक्का पकड़ा और उसे अपनी खाल पर रगड़ा ताकि चांदी चमकने लगे। वह तुरंत शांत हो गई और सिक्के को तब तक रगड़ती रही जब तक वह पूरी तरह चमक नहीं गया। फिर उसने अपनी तेज निगाहों से मेरी आँखों में देखा और धन्यवाद व्यक्त करने के लिए अपनी जीभ बाहर निकाली।

तिब्बती भाषा अच्छी तरह जानने वाले काची और डोला को मेरी ओर से डाकुओं से बात करने के लिए बुलाया गया; लेकिन ये दोनों शोका इतने भयभीत थे कि वे मुश्किल से चल पा रहे थे, बोलना तो दूर की बात थी। हालाँकि, कुछ देर बाद, यह देखकर कि मैंने इन खूंखार लोगों को कितनी अच्छी तरह काबू में कर रखा है, वे अनुवाद करने में सक्षम हो गए।

मैंने कहा, "मैं उनसे कुछ याक और कुछ टट्टू खरीदना चाहता हूँ। मैं उनके लिए अच्छी कीमत चुकाऊँगा।"

"वे कहते हैं कि वे ऐसा नहीं कर सकते। अगर तरजुम को पता चला तो वह उनका सिर काट देगा। वे सिर्फ एक या दो याक ही बेचेंगे।"

"बहुत बढ़िया। वे कितना पैसा चाहते हैं?"

"दो सौ चांदी के रुपये। लेकिन," डोला ने आगे कहा, "महोदय, उन्हें चालीस रुपये से अधिक मत दीजिए। यह उनकी कीमत से कहीं अधिक है। एक अच्छे याक की कीमत दस से सोलह रुपये होती है।"

लगभग तीन-चार घंटे की सौदेबाजी के बाद, जिसके दौरान डाकुओं ने धीरे-धीरे अपनी रकम दो सौ रुपये से घटाकर चालीस रुपये कर दी, और मेरी रकम बीस रुपये से बढ़कर चालीस रुपये हो गई, अंततः दोनों पक्षों के बीच अत्यधिक उत्साह के बीच हम इस बात पर सहमत हुए कि उनके दो सबसे अच्छे याक मेरे होंगे। काफी दोस्ताना व्यवहार करते हुए, उन्होंने मुझे सामान ढोने के लिए काठी और कई तरह की अनोखी चीजें भी बेच दीं। उन्होंने मुझे चाय और त्साम्बा भी पिलाई। उस गुस्सैल महिला की नज़रें अब भी मेरे सामान पर टिकी रहती थीं। जब उसने मुझे याकों के लिए भुगतान करते देखा और उसे शक हुआ कि मेरे पास काफी पैसा होगा, तो मेरी संपत्ति के लिए उसकी लालसा और भी बढ़ गई। अगर वह मेरी चीज़ों पर एक नज़र रखती थी, तो मैं दोनों नज़रें वहीं रखता था। मैंने इस बात का पूरा ध्यान रखा कि मेरी राइफल कभी मेरे हाथ से दूर न हो, और कोई भी मेरे पीछे से मेरे बहुत करीब न आए।

हमने सभी खरीददारी मिलाकर लगभग पचास रुपये गिने। हर विक्रेता ने एक-एक सिक्का गिनकर उसकी ध्वनि निकाली, और जब पूरी रकम सौंप दी गई, तो सिक्कों को वापस लेकर दोबारा गिना गया ताकि कोई गलती न हो। तिब्बत में समय का कोई मोल नहीं है, और मेरे पाठकों को आश्चर्य नहीं होना चाहिए जब मैं उन्हें बताऊँ कि इतनी कम रकम को गिनने, दोबारा गिनने और ध्वनि निकालने में दो घंटे और लग गए। अंत में हमें दो याक सौंपे गए—एक विशाल, लंबे बालों वाला काला जानवर, बेचैन और शक्तिशाली; दूसरा भी उतना ही काला, मजबूत और बालों वाला, लेकिन कुछ हद तक शांत।

उन्हें पकड़ना, झुंड से अलग करना, उनकी नाक में रस्सियाँ डालना और उनकी पीठ पर सामान ढोने वाली काठी बाँधना - ये सभी काम हमें, नौसिखियों को, सीखने थे। यह वाकई बहुत मेहनत का काम था, लेकिन हमने तब तक संघर्ष किया जब तक हमें सफलता नहीं मिल गई।

जब हम अलग हुए, तो डाकू और मैं अच्छे दोस्त बन चुके थे। डाकुओं का व्यवहार सराहनीय था। मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि तिब्बत में, मैं किसी भी समय किसी अधिकारी के बजाय एक डाकू से निपटना पसंद करूँगा।

एक तरह से मुझे जोगपा लोगों के साथ अपने साक्षात्कार के समाप्त होने पर दुख हुआ, क्योंकि यद्यपि वे निस्संदेह डाकू थे, वे निश्चित रूप से रोचक थे। उनका अनोखा और विचित्र पहनावा, उनका व्यवहार, उनकी बातचीत, उनका असामान्य लेकिन अत्यंत विवेकपूर्ण खान-पान का तरीका और उनका हंसमुख और स्वतंत्र स्वभाव वास्तव में बहुत ताज़गी भरा था। उनका पहनावा तिब्बत का सटीक प्रतिनिधित्व करता था। पुरुषों ने कई प्रकार के कोट और टोपियाँ पहन रखी थीं, संभवतः इसलिए क्योंकि वे उन्हें आसानी से प्राप्त कर लेते थे। कोई भी दो व्यक्ति एक जैसे कपड़े नहीं पहने हुए थे, हालाँकि प्रत्येक व्यक्ति के पहनावे में कुछ प्रमुख विशेषताएँ देखी जा सकती थीं। एक व्यक्ति ने तेंदुए की खाल से सजा हुआ भड़कीला कोट पहन रखा था। दूसरे ने कमरबंद से कसा हुआ एक लंबा, धूसर ऊनी चोगा पहन रखा था। तीसरे ने अंदर की ओर ऊन से बना भेड़ की खाल का ढीला वस्त्र पहन रखा था। चौथे ने लोहे में जड़े चांदी के आभूषणों से सजी चमड़े की बेल्ट से बंधी हुई गहरे लाल रंग की कमीज पहन रखी थी। कमरबंद से सुई रखने का डिब्बा, माचिस की थैली और स्टील, गोलियों की थैली और थैला, और आबनूस, स्टील और चांदी की बारीक कारीगरी से बनी म्यान वाली एक सुंदर कटार लटकी हुई थी। अधिकांश तिब्बती पुरुषों की तरह, जोगपा लोग भी अपनी कमरबंद में तलवार रखते थे। कोट चाहे लंबा हो या छोटा, वह हमेशा ढीला होता था और कमर पर फूला हुआ होता था, ताकि उसमें खाने-पीने के कई कटोरे (पु-कु), नसवार की डिब्बी, पैसों की कई थैलियाँ, त्साम्बा और चाय की ईंटें रखी जा सकें। इसी रिवाज के कारण, पहली नज़र में अधिकांश तिब्बती पुरुष बहुत हट्टे-कट्टे लगते थे, जबकि वास्तव में वे दुबले-पतले होते थे। दिन के समय तिब्बती लोग एक हाथ और छाती का कुछ हिस्सा खुला रखते थे और एक आस्तीन लटकी रहने देते थे। इस प्रथा का कारण यह था कि तिब्बत में दिन गर्म और रातें ठंडी होती थीं, दक्षिण-पश्चिम तिब्बत में सूर्यास्त के समय तापमान कभी-कभी 80 डिग्री, और कभी-कभी 100 डिग्री तक गिर जाता था। तिब्बती लोग हमेशा कपड़ों में ही सोते थे, इसलिए रात में शरीर को ठंड से बचाने वाले वस्त्र तेज़ धूप में बहुत भारी और गर्म हो जाते थे, और इसीलिए यह सरल उपाय अपनाया गया। बैठते समय दोनों भुजाओं को आस्तीनों से बाहर निकाल लिया जाता था, जिससे छाती और पीठ नंगी रहती थी; लेकिन खड़े होते समय, एक भुजा, आमतौर पर बाईं, आस्तीनों में डाल ली जाती थी, ताकि कोट और उसके भारी कपड़े नीचे न गिरें।

जोगपा लोगों का पाचन तंत्र अच्छा था, यह उनके खाने के तरीके से स्पष्ट था। याक बेचने के बाद, वे तम्बा, चूरा (पनीर) और चाय का भरपेट भोजन करने के लिए बैठ गए। उन्होंने अपने कोट से लकड़ी और धातु के पु-कु

(कटोरा) निकाले और उन्हें जल्दी से तम्बा से भर दिया। फिर उन्होंने हमेशा की तरह मक्खन और नमक मिलाकर मथनी में गर्म चाय डाली। अपनी गंदी उंगलियों से उन्होंने कटोरे में मिश्रण को तब तक हिलाया जब तक कि एक पेस्ट न बन जाए, जिसे उन्होंने गोल करके खाया। यही प्रक्रिया बार-बार दोहराई गई। हर बार फिर से भरने से पहले, वे पु-कु को जीभ पर घुमाकर कटोरे को चाटकर साफ करते थे। भोजन के बाद धूप की गर्मी महसूस करते हुए, पुरुषों और महिलाओं ने अपने कुछ वस्त्र उतार दिए, जिससे उनके गले में सजे सोने, चांदी और तांबे के आभूषण दिखाई दिए।

डाकुओं की स्त्रियाँ, बेशक बेहद खूबसूरत नहीं थीं, फिर भी उनमें एक खास आकर्षण था, जो पूरी तरह से उनके जंगलीपन के कारण था। अधिकांश तिब्बती स्त्रियों के विपरीत, उनके दाँत अच्छे थे। उनका रंग विशेष रूप से गहरा नहीं था। केवल उनके गालों, नाक और माथे पर लगी काली मरहम की वजह से ही वे असलियत से ज़्यादा गहरी दिखती थीं, जो बिल्कुल भी शोभा नहीं देती थी। उनके चेहरे की बनावट सुस्पष्ट थी। उनकी आँखें और मुँह भावपूर्ण थे। अनगिनत छोटी-छोटी चोटियों में गुंथे हुए बाल सिर के ऊपर बाँधे हुए थे। एक लाल पगड़ी चोटियों को अपनी जगह पर रखती थी और उसे इस तरह उठाया जाता था कि माथे पर बनी छोटी-छोटी चोटियों की एक और पंक्ति दिखाई दे। हर चोटी का सिरा उसके बगल वाली चोटी से जुड़ा हुआ था। ये स्त्रियाँ मैलाकाइट जड़े सोने के बड़े-बड़े झुमके पहनती थीं।

बच्चे बातूनी थे और बड़ों की तरह व्यवहार करते थे। वे आठ या दस साल की छोटी उम्र में भी अपनी कमर में तलवारें बांधे रहते थे।

एक याक पर रखी टोकरी में मैंने कुछ महीनों के एक शिशु को देखा। जब मैंने उसे सहलाया तो उसकी अंधविश्वासी माँ ने डर के मारे बच्चे को मुझसे छीन लिया और उस बेचारे छोटे बच्चे का चेहरा तब तक धोया और रगड़ा जब तक कि उसकी त्वचा छिल नहीं गई, और कहने लगी कि अजनबियों के छूने से बच्चे मर जाते हैं।

वे लोग भी उतने ही अंधविश्वासी थे। जब मैंने उनसे चावल खरीदने की इच्छा जताई, तो उन्होंने मुझे तब तक उसे छूने नहीं दिया जब तक वह मेरी संपत्ति न बन जाए। जब भी मैंने चावल की बोरी को छूने के लिए हाथ बढ़ाया, उन्होंने आपत्ति जताई और अंत में मुझे थोड़ी दूरी से मुट्ठी भर चावल दिखाए ताकि मैं उसकी गुणवत्ता का अंदाजा लगा सकूं। मैंने पहले केवल मुट्ठी भर चावल ही खरीदे। जब मुझे यकीन हो गया कि चावल अच्छे हैं, तब मैंने बाकी चावल खरीद लिए।

उसी दोपहर हम मानसरोवर की दिशा में लगभग आधा मील आगे बढ़े ही थे कि हमें उन्हीं डाकुओं में से एक ने पकड़ लिया, जिन्हें हमने कुछ देर पहले ही पीछे छोड़ा था। वह बहुत उत्तेजित होकर हमारी ओर घोड़े पर सवार होकर आया। घोड़े से उतरकर उसने अपनी तलवार निकाली और मेरे एक याक का पीछा करने लगा। यह हरकत इतनी अजीब थी कि हम उसके इरादे समझ ही नहीं पा रहे थे। उसने चिल्लाकर कहा कि उसका इरादा किसी को नुकसान पहुँचाने का नहीं है, इसलिए हमने उसे जाने दिया। आखिरकार उसने एक याक को पकड़ लिया और उस बेचारे जानवर से जूझने के बाद उसने अपनी बाहें उसकी गर्दन में डाल दीं और अपना

सिर उसके सींगों के बीच टिका दिया। मैं थोड़ा चिंतित हो गया, मुझे डर था कि कहीं वह याक का गला काटने की चाल तो नहीं चल रहा है। मुझे बहुत आश्चर्य हुआ जब मैंने देखा कि युवा जोगपा ने याक के बालों का एक गुच्छा अपने दाँतों से पकड़ रखा था और उसे नोचने की कोशिश कर रहा था, जबकि बेचारा याक अपने उत्पीड़क को झटकने के लिए जी-जान से कोशिश कर रहा था। अंततः बाल हट गए, और उसके कसकर बंद होठों से बालों का एक गुच्छा लटक रहा था, जोगपा ने जानवर का सिर छोड़ दिया, और अपनी तलवार लहराते हुए, उसकी पूंछ की ओर झपटा।

मुझे लगा कि अब दखल देने का समय आ गया है। मैंने उस आदमी की चोटी पकड़ ली, जबकि वह डरे हुए याक की पूंछ से लिपटा रहा, जो भागते हुए हम दोनों को अपने पीछे घसीटता हुआ अप्रिय गति से ले गया।

हमारी अफरा-तफरी में जोगपा ने याक के रेशमी बालों की एक लंबी लट काट ली। इसे पाकर वह काफी संतुष्ट प्रतीत हुआ, फिर उसने याक को छोड़ दिया और अपनी तलवार म्यान में रख ली। उसने चुराई हुई लटों को जल्दी से अपने कोट में छिपा लिया और फिर हमें झुककर प्रणाम किया, जीभ बाहर निकालकर कहा कि यदि किसी जानवर से विदा लेते समय ऐसी सावधानी न बरती जाए, तो दुर्भाग्य अवश्य आएगा। यहीं पर घटना समाप्त हुई। जोगपा पूरी तरह प्रसन्न होकर चला गया और हम पथरीले मैदान को पार करते हुए उस पहाड़ी तक पहुँचे जो मैदान के आर-पार फैली हुई थी और आगे चलकर दो झीलों को विभाजित करती थी। हम शिखर तक चढ़े, जो 16,450 फीट की ऊँचाई पर स्थित था। यह सुनिश्चित करने के लिए कि पहाड़ी वास्तव में दोनों झीलों के बीचोंबीच फैली हुई है, मैंने उसकी लगभग आधी लंबाई तक भ्रमण किया और पाया कि उत्तरी भाग दक्षिणी भाग से कुछ नीचा प्रतीत होता था; लेकिन दोनों झीलों के बीच के हिस्से में, और उस केंद्रीय गड्ढे को छोड़कर जिसका मैंने पहले ही उल्लेख किया है, वह हर जगह झीलों के तल से कई सौ फीट ऊपर प्रतीत होता था। इस अभियान में कुछ समय की हानि हुई, और जब रात हुई तो हम अभी भी पहाड़ी की चोटी पर ही थे।

हमारे शिविर स्थल से हमने पहाड़ी पर पंद्रह काले तंबू देखे। पूर्व दिशा में, झील के किनारे, एक बड़ा गोम्बा या लामासेरी था, जिसमें एक मंदिर और कई मिट्टी के घर थे। मैंने अनुमान लगाया कि हमारे और गोम्बा के बीच की दूरी केवल आठ मील थी, जो एक सुखद तथ्य था, क्योंकि मुझे उम्मीद थी कि वहाँ से हमें ताज़ा राशन मिल जाएगा जिससे हम अपनी यात्रा में तेज़ी से आगे बढ़ सकेंगे। अब हम ज्ञानेमा सैनिकों के साथ-साथ बारका तारजुम और तकलाकोट के जोंग पेन जैसे परेशान करने वाले अधिकारियों की पहुँच से पूरी तरह बाहर थे। यदि हम रात के दौरान पर्याप्त मात्रा में भोजन प्राप्त कर लें और अगले दिन सुबह जल्दी ही आगे बढ़ जाएँ, तो पीछा करने वालों द्वारा पकड़े जाने का खतरा बहुत कम होगा। शोका लोग तिब्बती बस्ती में प्रवेश करने के विचार से फिर से भयभीत हो रहे थे। मैंने उन्हें दृढ़ता से कहा कि हमें उसी रात टकर गोम्बा और गाँव पहुँचना ही होगा।

हमारे नीचे दो विशाल झीलें थीं। इस शानदार नज़ारे को छोड़ने से पहले मैं इस अद्भुत दृश्य को अंतिम बार निहारने से खुद को रोक नहीं पाया। टूटे-फूटे, खड़ी ढलानों वाले किनारों, पथरीले द्वीपों और फैली हुई

प्रायद्वीपों वाली शैतान झील मुझे उसके बगल में स्थित पवित्र झील से कहीं अधिक मोहक लगी, जिसमें परंपरा के अनुसार महादेव और अन्य सभी देवता निवास करते थे। यद्यपि दोनों झीलों का पानी समान रूप से नीला और निर्मल था, और दोनों के पीछे एक ही भव्य गंगरी पर्वत श्रृंखला थी, फिर भी ब्रह्मा की रचना मानसरोवर अपने पड़ोसी झील की तरह विचित्र रूप से आकर्षक नहीं थी। मानसरोवर में पानी से ऊपर उठती हुई कोई गहरी खाई नहीं थी। यह लगभग बिना किसी गड्ढे के एक पूर्ण अंडाकार थी। झील के किनारे और उसके चारों ओर की पहाड़ियों के बीच लगभग दो मील चौड़ा एक पथरीला, ढलान वाला मैदान था, सिवाय उस पहाड़ी के किनारे के जो इसे राकास्टल से अलग करती है, जहाँ इसका तट थोड़ा अधिक ऊबड़-खाबड़ और खड़ी ढलान वाला था।

झील के ठीक दक्षिण में बर्फ से ढकी ऊँची चोटियों की एक श्रृंखला थी, जहाँ से कई धाराएँ नीचे की ओर बहती थीं। जहाँ हम खड़े थे, वहाँ से हमें स्पष्ट संकेत दिखाई दे रहे थे, जैसा कि रकास्टल के मामले में था, कि झील का जलस्तर एक समय में कम से कम तीस फीट अधिक रहा होगा, जितना कि मेरे वहाँ जाने के समय था। छोटे, गोल, चिकने पत्थरों का ढलानदार तल, जो जलरेखा से डेढ़ से दो मील आगे तक फैला हुआ था, इस बात का पर्याप्त प्रमाण था कि जलस्तर उस बिंदु तक रहा होगा। मेरा मानना है कि झील धीरे-धीरे पीछे हट रही थी।

झील के चारों ओर लामाओं की देखरेख में कई जर्जर झोपड़ियाँ थीं। केवल एक महत्वपूर्ण गोम्बा (मठ) और एक मंदिर ही दिखाई देते थे—अर्थात, टकर गाँव में।

मुझे बताया गया था कि झील के उत्तर-पश्चिम में लामाओं की देखरेख में एक छोटा गोम्बा और सराय (तीर्थयात्रियों के लिए विश्राम गृह) स्थित है, लेकिन मैं इस कथन की सत्यता की पुष्टि नहीं कर सकता, क्योंकि मैंने स्वयं इसका दौरा नहीं किया और तिब्बतियों से इसकी स्थिति और महत्व के बारे में मुझे जो जानकारी मिली वह विरोधाभासी थी।

शैतान झील और मानसरोवर के बीच देश का स्वरूप अचानक बदल गया, और इसी के साथ मौसम और तापमान में भी ज़बरदस्त बदलाव आया। रकास्टल के ऊपर हमेशा एक सुंदर नीला आकाश दिखाई देता था, जबकि मानसरोवर के ऊपर घने काले बादल छाए रहते थे और लगातार बारिश होती रहती थी। बीच-बीच में हवा कुछ मिनटों के लिए बारिश को रोक देती थी, और पानी पर प्रकाश का मनमोहक नज़ारा देखने को मिलता था। फिर नए बादल गरजते हुए ज़ोरदार बिजली के साथ आते थे और दृश्य को फिर से उदास और निराशाजनक बना देते थे।

मानसरोवर की ओर पहाड़ी की ढलान राकास्टल की ओर की ढलान से कहीं अधिक गर्म थी। संभवतः नमी के कारण, हवा सांस लेने में काफी भारी लग रही थी, जबकि शैतान झील के किनारे हवा ताज़ी और हल्की थी। वास्तव में, जब मैं मानसरोवर को याद करता हूँ, तो मुझे यह ख्याल आता है कि यह न केवल देवताओं का, बल्कि तूफानों का भी घर था।

हम लगभग दो मील नीचे मैदान में उतरे और लांगा त्सांगपो या लांगा नदी के एक तीव्र डेल्टा को पार किया; फिर एक मील आगे एक और डेल्टा मिला। चूंकि ये नदियाँ सीधे बर्फ से निकलती थीं, इसलिए पानी बहुत ठंडा था, और दिन के दौरान बर्फ और हिम के पिघलने के कारण अक्सर तीन या चार फीट गहरा होता था।

अध्याय XII

लामाओं के बीच

मानसरोवर के तट पर पहुँचते ही, हमारे सिर पर मंडरा रहे घने बादलों से इतनी मूसलाधार बारिश होने लगी कि पल भर में हम पूरी तरह भीग गए। हम तेज़ी से आगे बढ़ रहे थे, क्योंकि हमारा भारी बोझ अब दो याकों पर लादा हुआ था। रात काफी ढल चुकी थी। अंधेरा इतना घना था कि हम अपने सामने कुछ इंच ही देख पा रहे थे। हम सचमुच एक-दो इंच पानी में चल रहे थे। दक्षिण-पूर्व की तेज़ हवा बारिश और ओलों को हमारे चेहरे और हाथों पर इतनी ज़ोर से मार रही थी कि हमें बहुत दर्द हो रहा था। गीले कपड़ों में हमें ठंड लग रही थी और हमारे दाँत बज रहे थे। हम तेज़ी से, एक-दूसरे के करीब चलते रहे। बीच-बीच में झील पर बिजली की तेज़ चमक दिखाई देती थी, जिसके बाद ज़ोरदार गरज सुनाई देती थी। रोशनी के उन कुछ पलों का फ़ायदा उठाकर हम टकर गाँव और गोम्बा की ओर बढ़ गए।

बारिश से उफनती नदियाँ पार करना बेहद मुश्किल था। ढलान पर पानी इतनी तेज़ी से बह रहा था कि खड़े रहना भी हमारे लिए बड़ी मुश्किल हो रही थी। हम इतने भीग चुके थे कि हमने अपने जूते-कपड़े उतारने की भी ज़हमत नहीं उठाई और कपड़ों समेत ही पानी में छप-छप करते हुए हर धारा को पार किया। तीन बार हम कमर तक ठंडे पानी में डूब गए और फिर कंकड़-पत्थर वाली ढलान पर मीलों तक चलते रहे। हमें अब यह भी दिखाई नहीं दे रहा था कि हम कहाँ जा रहे हैं। तूफान हर मिनट और भी भयानक होता जा रहा था। हम बड़े-बड़े पत्थरों और चट्टानों के बीच लड़खड़ाते हुए आगे बढ़े और फिसलन भरी चट्टानों पर एक-दूसरे पर गिर पड़े। आगे जाकर हम घुटनों तक कीचड़ में धंस गए, जो हमारे पैरों से चिपककर उन्हें सीसे जैसा भारी बना रहा था। ऐसी मूसलाधार बारिश मैंने पहले शायद ही कभी देखी हो।

मैंने काची से पूछा, "क्या तुम्हें पूरा यकीन है कि यह झील देवताओं का निवास स्थान है?" काची ने जवाब दिया, "अरे, शैतान की झील पर भी मौसम इससे बेहतर था।"

"जी महाराज," काची ने उत्तर दिया। "लेकिन आपने देवताओं को क्रोधित कर दिया है, और इसीलिए वे आपकी प्रगति रोकने के लिए बिजली, ओले और बारिश भेजते हैं। आप देवताओं के विरुद्ध जा रहे हैं, महाराज।"

"कोई बात नहीं, काची। बारिश हमेशा नहीं होती रहेगी।"

आधी रात को हमें पता नहीं था कि हम कहाँ हैं; फिर भी हम आगे बढ़ते रहे।

"क्या हम गोम्बा से आगे निकल गए हैं? क्या हम अभी तक वहाँ नहीं पहुँचे हैं?" ये सवाल हम एक-दूसरे से पूछ रहे थे। मुझे लग रहा था कि जिस गति से हम चल रहे थे, हमें उस जगह के पास होना चाहिए था, लेकिन एक घंटे और चलने के बाद भी हम वहाँ नहीं पहुँचे थे। मुझे लगा कि हम लगभग नौ मील चल चुके हैं। मैंने कहा कि हम उसे पार कर चुके हैं, लेकिन शोका लोगों ने ज़ोर देकर कहा कि हम नहीं पहुँचे हैं, इसलिए हम फिर से आगे बढ़ गए।

हम अभी मुश्किल से पाँच सौ गज ही चले थे कि हमें दूर से आती हुई एक कुत्ते के भौंकने की हल्की सी आवाज़ सुनाई दी, जो बहुत सुखद थी। यह उत्तर-पश्चिम दिशा से आ रही थी, और हमने अनुमान लगाया कि यह टकर की ही आवाज़ होगी। हम उस जगह से बहुत दक्षिण की ओर मुड़ गए थे, जिसकी वजह से अंधेरे में हमें वह आवाज़ सुनाई नहीं दी।

भौंकने की आवाज़ सुनकर हम तेज़ी से बस्ती की ओर बढ़े। अचानक पहले कुत्ते के साथ पचास और कुत्ते आ गए, सभी गुस्से में और शोर मचाते हुए; लेकिन आवाज़ से हमें पता चल गया था कि हम गाँव के पास पहुँच रहे हैं, फिर भी अँधेरा और तूफ़ानी मौसम इतना घना था कि हम जगह नहीं ढूँढ पाए। जब हम मिट्टी की झोपड़ियों के पास पहुँचे, तभी हमें यकीन हुआ कि हम आखिरकार पहुँच गए हैं।

तब रात के 2 से 3 बज रहे थे। बारिश अभी भी मूसलाधार हो रही थी। निवासियों में से कोई भी हमें आश्रय देने को तैयार नहीं था। अपना छोटा सा तंबू लगाना तो बिलकुल ही नामुमकिन था, क्योंकि हमारा सारा सामान पहले ही पूरी तरह भीग चुका था।

हमने इतनी ज़ोर से दरवाज़ा खटखटाया कि दरवाज़ा लगभग टूट ही गया। यह एक आश्रयगृह था, तीर्थयात्रियों के लिए सराय, और चूंकि हमने खुद को तीर्थयात्री बताया, इसलिए देश के कानूनों के अनुसार हमें प्रवेश का अधिकार था। नट्टू, जो पहले एक बार दूसरे रास्ते से इस झील तक पहुँच चुका था, हमें इस घर तक ले गया।

अंदर से एक कर्कश आवाज आई, "तुम डाकू हो, वरना इस समय नहीं आते।"

"नहीं, हम नहीं हैं," हमने विनती की। "कृपया खोलिए। हम संपन्न लोग हैं। हम किसी को नुकसान नहीं पहुँचाएँगे और सभी खर्चों का भुगतान हम स्वयं करेंगे।"

"मिड्डू, मिड्डू!" (ऐसा नहीं हो सकता!) "तुम डाकू हो। मैं नहीं खोलूंगा।"

यह दिखाने के लिए कि हम वैसे नहीं थे जैसा उन्होंने सोचा था, चंदेन सिंह और डोला ने दरवाजे पर इतनी धीमी दस्तक दी कि कुंडी खुल गई। अगले ही पल दस अजनबी गर्म आग के चारों ओर बैठे थे और सूखे इमली और गोबर की लौ से अपनी मुरझाई हुई, भीगी हुई चमड़ी सुखा रहे थे। मकान मालिक—जो संयोगवश एक डॉक्टर थे—यह देखकर आश्वस्त हो गए कि हमारा कोई बुरा इरादा नहीं था, और उनकी हथेली में कुछ चांदी के सिक्के मिले। फिर भी, उन्होंने कहा कि काश हम कहीं और जाकर सो जाते। उन्होंने सुझाव दिया कि बगल में एक शानदार खाली झोपड़ी है।

हमारी सहमति मिलने पर, वह हमें उस स्थान पर ले गया, और हमने वहाँ शेष रात - या कहें तो, सुबह का शुरुआती समय बिताया।

हमारा घर पत्थरों और मिट्टी से बना एक मंजिला, सपाट छत वाला मकान था। इसमें दो कमरे थे—पहला कमरा दरवाजे से रोशन होता था, जबकि दूसरा कमरा बड़ा था और उसकी छत में एक चौकोर छेद था जिसका उपयोग हवा आने-जाने, रोशनी आने और आग के धुएं को बाहर निकालने के लिए किया जाता था। आग कमरे के ठीक नीचे बीचोंबीच जल रही थी। छत को सहारा देने वाले बीम और शहतीर हिमालय के भारतीय हिस्से से लाए गए थे, क्योंकि पश्चिमी तिब्बत में लकड़ी नहीं मिलती थी।

इस भवन की देखरेख एक युवा, कुछ हद तक सनकी लामा कर रहे थे, जो अभिवादन करने में बहुत उदार थे और काफी देर तक हमें खुले मुँह से देखते रहते थे। वे विनम्र और ध्यान देने वाले थे। उन्होंने सुबह हमारे कपड़े सुखाने में मदद की और जब भी हम उनसे कुछ माँगते, वे खुशी से झूमते हुए घर से बाहर दौड़ते और हमेशा हमारी ज़रूरत की चीज़ें लाकर देते थे।

रात भर चले भीषण तूफान से हमारा कमरा पानी से भर गया था। फर्श का केवल एक कोना बाकी हिस्सों से थोड़ा सूखा था। हम सब वहीं एक साथ सिमटकर सोए। इन सराय की स्वच्छता का कोई नामोनिशान नहीं था। उस दिन फर्श पर रहने वाले सभी छोटे-मोटे जीव-जंतु पानी से बचने के लिए कमरे के ऊपरी हिस्से में चले गए थे, जिसे हमने भी चुना था, जिससे हमारी तमाम मुसीबतों में एक और मुसीबत जुड़ गई। कीड़ों के झुंड ने हमें बुरी तरह नोंच डाला। यह वाकई एक भयानक समस्या थी, जिससे हमें असहनीय पीड़ा सहनी पड़ी, न केवल उस समय, बल्कि जब भी हम तिब्बती शिविरों के पास रुकते थे।

जब हम सुबह उठे तो कमरा तिब्बती पुरुषों, महिलाओं और बच्चों से भरा हुआ था, जो मिलनसार और दोस्ताना स्वभाव के लग रहे थे।

"टंगा चिक!" (आधे रुपये के बराबर एक चांदी का सिक्का) एक बूढ़ी औरत चिल्लाई, जिसने मेरे नाक के नीचे एक सूखी मछली रख दी और बड़े उत्साह से कहने लगी कि इसे मानसरोवर में पकड़ा गया है और इसे पाने वाला सबसे खुश इंसान बन जाएगा। अन्य महिलाओं ने लाल कपड़े के टुकड़ों में लिपटे हुए अपने गहने, जैसे ब्रोच, अंगूठियां और पीतल या चांदी के झुमके, जिनमें मैलाकाइट जड़ा हुआ था, खोलकर दिखाए।

"गुरमोह सम!" (तीन रुपये!), "दिउ, दिउ, दिउ!" (हाँ, हाँ, हाँ!), "करुगा नी!" (दो दो आने के सिक्के!), "गिउत-चेके!" (चार आने का सिक्का!), और इसी तरह, वे प्रत्येक वस्तु की कीमत एक साथ चिल्ला रहे थे, सभी अपने सामान को बेचने की उत्सुकता में एक साथ बात कर रहे थे।

ये गहने स्थानीय स्तर पर निर्मित थे। कुछ मामलों में मैलाकाइट के टुकड़े मजबूती से जड़े हुए थे, लेकिन आमतौर पर पत्थरों को चिपकाने के लिए एक प्रकार के पेस्ट का इस्तेमाल किया जाता था, और परिणामस्वरूप, गहने दिखने में सुंदर होने के बावजूद, वे जल्दी टूट जाते थे।

कान की बालियां आमतौर पर ब्रोच की तुलना में बेहतर बनी होती थीं। इन सबमें सबसे दिलचस्प, क्योंकि सरल और अधिक विशिष्ट थीं, चपटे चांदी के लॉकेट थे, जिन पर आदिम डिजाइन की नक्काशी की गई थी।

सुबह कई लामा मुझसे मिलने आए और हमें देखकर प्रसन्न हुए; वास्तव में, उन्होंने मुझसे लामा आश्रम और मंदिर में जाकर उनसे मिलने का अनुरोध किया। उन्होंने बताया कि गाँव में बहुत बीमारियाँ फैली हुई हैं और क्योंकि वे मुझे हिंदू चिकित्सक मानते थे, इसलिए वे चाहते थे कि मैं उनकी पीड़ा को कम करने के लिए कुछ कर सकूँ। मैंने उन्हें हर संभव सहायता करने का आश्वासन दिया। लामा आश्रम जाने का यह अनूठा अवसर पाकर मैं बहुत प्रसन्न था। लामाओं से इस मैत्रीपूर्ण मुलाकात के दौरान मैंने अपनी राइफल हाथ में रखी हुई थी। तिब्बती लोग इतने मिलनसार थे कि उन पर भरोसा करना मुश्किल था।

जब मैं अपने घुटन भरे, अंधेरे कमरे से बाहर निकला, तो जिज्ञासु स्थानीय लोगों की भीड़ मेरे पीछे-पीछे चल रही थी। मैंने गाँव का अच्छी तरह से जायज़ा लिया। रात के तूफ़ान के बाद हमें पूरी उम्मीद थी कि मौसम साफ़ हो जाएगा और हमें नीला आसमान दिखाई देगा, लेकिन ऐसा नहीं हुआ। हमारे ऊपर फिर से काले बादल छा गए थे। पवित्र झील का पानी हवा से धीरे-धीरे बह रहा था और किनारे पर सुंदर लहरें बना रहा था। चंदन सिंह और मानसिंह, दो हिंदू, केवल एक धोती पहने हुए, झील के किनारे बैठे हुए थे और जौहरी बीजेसिंह से अपने सिर मुंडवा रहे थे। मुझे यह स्वीकार करना होगा कि जब मैंने उन्हें मेरे सबसे अच्छे उस्तरे का इस्तेमाल करते देखा तो मुझे थोड़ी झुंझलाहट हुई। मैंने अपने गुस्से को यह याद करके दबा लिया कि उनके धर्म के अनुसार, मानसरोवर में होने से उनके सारे पाप धुल जाते हैं। मेरे दो हिंदू सेवक, कैलाश पर्वत की ओर सिर करके, इतनी श्रद्धा से प्रार्थना कर रहे थे कि मैं उन्हें देखने के लिए खड़ा हो गया। उन्होंने बार-बार स्नान किया और अंत में झील के पानी में डुबकी लगाई। ठंड से कांपते हुए बाहर आकर, उन्होंने अपने कपड़ों से एक-एक चांदी का रुपया निकाला और उसे भगवान महादेव को भेंट के रूप में झील में फेंक दिया। फिर, अपने चेहरे और सिर के बाल हटाकर, उन्होंने कपड़े पहने और मुझे सलाम करने आए, और कहा कि अब वे सुखी और पवित्र हैं।

"सभी देवताओं में श्रेष्ठ शिव, मानसरोवर की जलधाराओं में निवास करते हैं!" चंदन सिंह ने काव्यमय भाव से कहा। "मैंने इसके जल में स्नान किया है और इसका जल पिया है। मैंने महान केलस को प्रणाम किया है, जिनके दर्शन मात्र से ही मनुष्य जाति के समस्त पाप धुल जाते हैं। अब मैं स्वर्ग जा रहा हूँ।"

तिब्बतियों की पहुंच से बाहर, संशयवादी मानसिंग ने बुदबुदाते हुए कहा, "अगर हम ल्हासा तक पहुंच जाएं तो मैं संतुष्ट हो जाऊंगा।"

धार्मिक मामलों के ज्ञाता चंदन सिंह ने समझाया कि मानसरोवर की यात्रा पर केवल वे हिंदू तीर्थयात्री ही सिर मुंडवाते हैं जिनके माता-पिता दोनों का देहांत हो चुका होता है। यह शिव को अर्पित एक अर्द्ध-आज्ञा होती है। यदि वे उच्च जाति के होते हैं, तो तीर्थयात्रा के बाद अपने जन्मस्थान पर लौटने पर वे नगर के सभी ब्राह्मणों को भोज देते हैं। चंदन सिंह के अनुसार, मानसरोवर में स्नान करने वाले व्यक्ति को सर्वत्र सम्मान प्राप्त होता था और समस्त विश्व उसकी प्रशंसा और ईर्ष्या करता था।

मानसरोवर झील लगभग छियालीस मील लंबी है। जो तीर्थयात्री परम पवित्रता प्राप्त करना चाहते हैं, वे झील के किनारे-किनारे पैदल चलकर परिक्रमा करते हैं। परिस्थितियों के अनुसार, इस यात्रा में चार से सात दिन लग सकते हैं। एक बार परिक्रमा करने से तीर्थयात्री के सामान्य पाप धुल जाते हैं; दो बार परिक्रमा करने से हत्या का अपराध स्वीकार नहीं होता; और तीन बार परिक्रमा करने से वह व्यक्ति भी ईमानदार और नेक बन जाता है जिसने अपने पिता, माता, भाई या बहन की हत्या की हो। कुछ कट्टरपंथी घुटनों के बल चलकर परिक्रमा करते हैं; अन्य लोग प्रत्येक कदम के बाद ज़मीन पर लेटकर दूरी पूरी करते हैं।

पौराणिक कथाओं के अनुसार, मानसरोवर की रचना ब्रह्मा ने की थी। जो भी इसके जल में स्नान करेगा, उसे महादेव के स्वर्ग में प्रवेश मिलेगा! चाहे अपराधी ने पहले कितने ही अपराध किए हों, इस पवित्र झील में एक डुबकी किसी भी अपराधी की आत्मा और शरीर को शुद्ध करने के लिए पर्याप्त है!

जब वे स्नान करके शुद्ध हो गए, तो मैंने चंदन सिंह को अपनी राइफल लेकर मेरे पीछे गोम्बा में आने का आदेश दिया। मैंने कोई अपराध नहीं किया था, इसलिए मैंने सोचा कि पवित्र स्नान न करना ही बेहतर होगा, हालाँकि तैरने का बहुत मन कर रहा था। लामा इतने विनम्र थे कि मुझे उनकी ओर से विश्वासघात का डर था। अपने साथियों को प्रसन्न करने और शायद अपने लिए सौभाग्य लाने के लिए, मैंने झील में कुछ सिक्के फेंक दिए।

लाल रंग से रंगी दीवारों और सोने के पानी चढ़े तांबे के चपटे गुंबद वाली विशाल वर्गाकार इमारत पानी के किनारे खड़ी थी, और अपनी गंभीर सादगी में सुरम्य और सुंदर दोनों थी।

अंदर से गहरी, कर्कश आवाज़ों में प्रार्थनाओं के बुदबुदाने, घंटियों की झंकार और झांझों की खनक सुनाई दे रही थी। बीच-बीच में ढोल बजता, खोखली सी आवाज़ करता, और कभी-कभार अचानक घंटा बजने से हवा में कंपन होता, जब तक कि पवित्र झील के ऊपर से आवाज़ें धीरे-धीरे मंद न हो जातीं।

चंदेन सिंह और मेरे लामासेरी में प्रवेश करने के बाद, पूरी तरह से खुला हुआ विशाल दरवाजा तुरंत बंद हो गया। हम एक विशाल प्रांगण में थे, जिसकी तीन तरफ स्तंभों द्वारा समर्थित दो स्तर की गैलरी बनी हुई थीं।

यह ल्हाप्रांग, यानी लामा का घर था। मेरे ठीक सामने ल्हा कांग, यानी मंदिर था, जिसका फर्श ज़मीन से लगभग पाँच फीट ऊपर उठा हुआ था। एक बड़ा दरवाज़ा उसमें खुलता था। इस प्रवेश द्वार के दोनों ओर आले बने हुए थे, जिनमें एक बड़े ढोल के पास दो लामा प्रार्थना की किताबें लिए बैठे थे। उनके हाथों में प्रार्थना चक्र और माला थी, जिसके मनके वे हर प्रार्थना के बाद बदलते रहते थे। हमारे आते ही भिक्षुओं ने अपनी प्रार्थनाएँ रोक दीं और उत्तेजित होकर ढोल बजाने लगे। ऐसा लग रहा था जैसे गोम्बा में कुछ हलचल मच गई हो। बूढ़े और जवान लामा अपने कमरों से इधर-उधर भागने लगे, जबकि कई चिब्बी, यानी नौसिखिए (बारह से बीस वर्ष की आयु के लड़के), ऊपरी बरामदे की रेलिंग पर खड़े थे, उनके चेहरों पर स्पष्ट रूप से उत्सुकता और डर के भाव थे। निस्संदेह लामाओं ने हमारे लिए कोई जाल बिछाया था। मैंने चंदन सिंह को सतर्क रहने की चेतावनी दी और उसे मंदिर के प्रवेश द्वार पर पहरा देने के लिए तैनात कर दिया। मैंने अपने दाहिनी ओर बैठे लामा के ढोल पर कुछ चांदी के सिक्के रखे, आदर के प्रतीक के रूप में अपने जूते उतारे और भिक्षुओं को आश्चर्यचकित करते हुए चुपचाप पूजा स्थल में प्रवेश किया। चांदी देखकर और मेरी लापरवाही देखकर लामा, जो प्रांगण में काफी संख्या में मौजूद थे, अचंभित होकर चुपचाप खड़े रहे। अंत में, मठ के प्रमुख लामा, या फादर सुपीरियर, झुककर आगे आए। उन्होंने एक अंगूठा दूसरे के ऊपर रखा और जीभ बाहर निकालकर मंदिर की दीवारों पर स्थापित देवी-देवताओं या पवित्र बौद्ध नायकों की कई मूर्तियों के दर्शन के प्रति अपनी स्वीकृति व्यक्त की। इनमें से सबसे बड़ी मूर्तियाँ लगभग पाँच फीट ऊँची थीं, जबकि अन्य लगभग तीन फीट ऊँची थीं। कुछ लकड़ी से तराशी गई थीं, जिनके वस्त्र और आभूषण कलात्मक ढंग से व्यवस्थित

और निर्मित थे, जबकि अन्य सोने की धातु से बनी थीं। कुछ मूर्तियाँ बैठी हुई थीं और कुछ खड़ी थीं। वे नीले, लाल, सफेद और पीले रंग से रंगे अलंकृत या सादे आसनों पर टिकी हुई थीं। कई लोगों ने प्राचीन चीनी दो पंखों वाली टोपी पहन रखी थी, और उन्हें दीवारों में बने आले में रखा गया था जो कपड़ों, लकड़ी की नक्काशी और छवियों के खुरदुरे चित्रों से सजाए गए थे।

इन मूर्तियों के चरणों में एक लंबी शेल्फ थी, जिस पर सभी आकारों के चमकीले पीतल के पात्रों में त्साम्बा, सूखे मेवे, चूरा, गेहूँ और चावल की आहुति रखी थी, जो भक्तों द्वारा लामाओं के माध्यम से विभिन्न संतों को अर्पित की जाती थी। जौ की कुछ बालियों को मक्खन से बने नकली पत्तों से सजाया गया था, और उन्हें लाल, नीले और पीले रंग से रंगा गया था।

मंदिर की छत लाल ऊनी कपड़े से ढकी हुई थी, जो लामाओं के वस्त्रों के समान थी। उस पर रेशम, ऊन और सूती कपड़े की सैकड़ों पट्टियाँ लटकी हुई थीं, जो विभिन्न रंगों की थीं। छत को लकड़ी के खंभों द्वारा सहारा दिया गया था, जो मंदिर के केंद्र में एक चतुर्भुज बनाते थे। ये खंभे एक रेलिंग से जुड़े हुए थे, जिसके कारण श्रद्धालुओं को विभिन्न मूर्तियों के सामने से गुजरने के लिए बाएँ से दाएँ चक्कर लगाना पड़ता था।

प्रवेश द्वार के सामने वाली दीवार के मध्य भाग में स्थित एक मंदिर में उर्गिन, या कुंजुक-चिक (ईश्वर ही एकमात्र देवता) की मूर्ति स्थापित थी। उसके सामने एक कालीन से ढकी वेदी पर अन्य मूर्तियों को अर्पित की जाने वाली वस्तुओं की तुलना में कहीं अधिक मात्रा में दान प्रदर्शित किए जाते थे।

लामा ने उसकी ओर इशारा करते हुए मुझे बताया कि यह एक शुभ देवता हैं। मैंने उन्हें प्रणाम किया और दान पेटी में थोड़ी सी भेंट डाली। इससे लामा अत्यंत प्रसन्न हुए, क्योंकि उन्होंने तुरंत ही पवित्र जल का एक पात्र मंगवाया, जो मित्रता और प्रेम के लंबे पर्दों से लिपटा हुआ था, और मेरी हथेलियों पर कुछ सुगंधित द्रव डाला। फिर, उन्होंने परदे की एक पट्टी निकाली, उसे सुगंध से गीला किया और मुझे भेंट कर दिया। अधिकांश तीर्थयात्री आम तौर पर मंदिर के भीतर घुटनों के बल परिक्रमा करते हैं, लेकिन इसके बावजूद, पूर्वाग्रहों को ठेस न पहुँचाने के लिए, मैं आम तौर पर रोम में रोमवासियों जैसा व्यवहार करने के सिद्धांत का पालन करता हूँ, लेकिन यहाँ मैं किसी अप्रत्याशित घटना की स्थिति में खुद को इस तरह के जोखिम में नहीं डालना चाहता था। उच्च लामा ने मुझे विभिन्न मूर्तियों के बारे में समझाया और उनके नाम पुकारते हुए उन पर मुट्ठी भर चावल डाले, जिन्हें मैंने याद रखने की पूरी कोशिश की, लेकिन अफसोस! इससे पहले कि मैं सराय में वापस जाकर उन्हें कागज पर लिख पाता, वे सब मेरी स्मृति से ओझल हो गए थे। मठ से मंदिर में जाने के लिए एक अलग प्रवेश द्वार था।

केंद्रीय प्रांगण में पीतल के कटोरे में जलते हुए दीपक बिखरे हुए थे, जिनकी बत्तियों में पिघला हुआ मक्खन डाला जा रहा था। उनके पास रेशेदार छाल से बने चिकने पीले तिब्बती कागज पर छपी आयताकार प्रार्थना पुस्तकें पड़ी थीं। इन पुस्तकों के पास छोटे ढोल और झांझ रखे थे। मैंने देखा कि एक दोहरा ढोल मानव खोपड़ी के उल्टे टुकड़ों से बना था। मेरा ध्यान लामाओं द्वारा अपनी पूजा-अर्चना और समारोहों के दौरान पहने जाने वाले कुछ विशिष्ट मुकुटों की ओर भी गया। इन वस्त्रों के साथ वे न केवल ढोल बजाते हैं और झांझ

खड़काते हैं, बल्कि बांसुरी बजाते हैं, हाथ की घंटियाँ बजाते हैं और एक बड़ा घंटा भी बजाते हैं। इन वाद्ययंत्रों का शोर कभी-कभी इतना तेज होता है कि प्रार्थनाएँ भी सुनाई नहीं देतीं। लामा अपने विलक्षण और रहस्यमय नृत्यों में विस्मयकारी मुखौटे पहनते हैं। लामा पूरा दिन मंदिर में बिताते हैं और मक्खन और नमक वाली चाय का खूब सेवन करते हैं, जिसे उनके सेवक के रूप में कार्य करने वाले निम्न श्रेणी के लामा उन्हें प्यालों में परोसते हैं। वे अपने मंदिरों में घंटों बिताते हैं, जाहिर तौर पर सभी देवताओं के सर्वोच्च ईश्वर, सभी संतों के एक साथ त्रिमूर्ति में समाहित अवतार, कुंजुक-सुम की प्रार्थना में लीन रहते हैं।

कुंजुक-सुम का शाब्दिक अर्थ है "तीन देवता"। कुछ लोग इसे वायु, जल और अग्नि तत्वों से जोड़ते हैं, जो तिब्बती मान्यताओं में वाणी, दान और शक्ति या जीवन के प्रतीक हैं। बौद्ध धर्म का एक प्रमुख सिद्धांत माता-पिता के प्रति प्रेम और सम्मान तथा पड़ोसियों को किसी भी प्रकार से हानि न पहुँचाना है। इसका उपदेश तो दिया जाता है, लेकिन इस पर अमल कम ही होता है। लगभग आठ सौ ग्रंथों में वर्णित आज्ञाओं के अनुसार, जिन्हें "कजार" कहा जाता है, तिब्बती लोग एक ऐसे स्वर्ग (देव त्सेम्बो) में विश्वास करते हैं जो मानवीय जीवन की सभी चिंताओं से मुक्त, प्रेम और आनंद से परिपूर्ण है। उनके स्वर्ग पर असीम अच्छाई के देवता का शासन है, जिनकी सहायता अनगिनत शिष्य करते हैं जिन्हें चंचुब कहा जाता है, जो अपना जीवन प्राणियों के बीच दान-पुण्य कार्य करते हुए व्यतीत करते हैं। सुख और दंड के अनेक मध्यवर्ती स्थानों के साथ-साथ, वे एक नरक में भी विश्वास करते हैं जहाँ पापियों की आत्माओं को अग्नि और हिम से पीड़ा दी जाती है।

"ईश्वर सब कुछ देखता और जानता है, और वह सर्वव्यापी है," लामा ने कहा, "लेकिन हम उसे देख नहीं सकते! केवल चंचूब ही उसे देख सकते हैं और उससे बात कर सकते हैं।"

मैंने उच्च लामा से पूछा, "वे कौन से बुरे गुण हैं जिनसे अधिकतर बचना चाहिए?" वे थोड़ी-बहुत हिंदुस्तानी बोलते थे।

"विलासिता, अभिमान और ईर्ष्या," उसने उत्तर दिया।

मैंने उनसे पूछा, "क्या आप कभी संत बनने की उम्मीद रखते हैं?"

"हां, मुझे उम्मीद है; लेकिन एक पवित्र आत्मा को संत बनने से पहले पांच सौ बार जन्म-जन्म लेना पड़ता है।"

फिर, मानो अचानक किसी विचार से जागृत होकर, उन्होंने आवेग में आकर मेरा हाथ पकड़ लिया और मेरी उंगलियाँ फैला दीं। ऐसा करने के बाद, उन्होंने आश्चर्य से दो-तीन शब्द बुदबुदाए। उनका चेहरा गंभीर, यहाँ तक कि शांत हो गया, और उन्होंने मेरे साथ अजीब तरह की विनम्रता का व्यवहार किया। मंदिर से बाहर निकलकर, वे अन्य लामाओं को अपनी खोज के बारे में बताने चले गए, चाहे वह कुछ भी हो। वे उनके चारों ओर जमा हो गए, और उनके शब्दों और हाव-भाव से यह स्पष्ट था कि वे हैरान थे।

जब मैं उन विचित्र मूर्तियों के बीच से निकलकर प्रांगण में आया, तो हर लामा मेरा हाथ छूना और मेरी जाँच करना चाहता था। उनके व्यवहार में आए इस अचानक बदलाव ने मुझे बहुत उत्सुक कर दिया, जब तक कि कुछ हफ्तों बाद मुझे इसका असली कारण पता नहीं चल गया।

फुटनोट:

[6] काटा (मित्रता और प्रेम का पर्दा) - तिब्बत में सभी अवसरों पर मैत्रीपूर्ण भावनाओं को दिखाने के लिए प्रस्तुत किया जाने वाला जाली का एक लंबा टुकड़ा।

अध्याय XIII

मठों में जीवन

मठ छोड़ने से पहले लामाओं ने मुझसे भारत और चिकित्सा के बारे में कई सवाल पूछे। उन्होंने यह भी पूछा कि क्या मैंने सुना है कि एक युवा अंग्रेज एक बड़ी सेना के साथ सीमा पार कर गया था, जिसे तकलाकोट के जोंग पेन ने पराजित किया था और अभियान के नेता और प्रमुख सदस्यों का सिर कलम कर दिया था।

मैंने इन तथ्यों से अनभिज्ञ होने का दावा किया। तकलाकोट के जोंग पेन ने भालू को पकड़ने से पहले ही उसकी खाल को जिस लापरवाही से ठिकाने लगा दिया था, उसे देखकर मुझे हंसी आ रही थी। मेरे चेहरे का रंग धूप से झुलसा हुआ था और काफी समय से धोया नहीं गया था, इसलिए लामाओं ने मुझे हिंदू चिकित्सक समझ लिया। मैंने कोई भेस नहीं बनाया था। उन्हें लगा कि मैं मानसरोवर झील की तीर्थयात्रा पर हूँ। वे यह जानने के लिए उत्सुक थे कि भारत में बीमारियों का इलाज गुप्त विद्या से होता है या केवल दवाइयों से। दूसरी ओर, मुझे जानकारी देने से ज़्यादा जानकारी प्राप्त करने में रुचि थी, इसलिए मैंने बातचीत का रुख लामाओं की ओर मोड़ दिया।

लाल, पीले, सफेद और काले लामाओं के संप्रदाय हैं। लाल लामा सबसे पुराने और पूरे देश में सबसे अधिक संख्या में हैं। उनके बाद पीले लामा, गेलुपका आते हैं, जो राजनीतिक और धार्मिक मामलों में समान रूप से शक्तिशाली हैं, लेकिन संख्या में उतने नहीं हैं। सफेद और काले लामा, जुलिनबा, मठों में शिल्पकार हैं। वे चित्रकला, मुद्रण, मिट्टी के बर्तन बनाने और मंदिरों की सजावट का काम करते हैं, साथ ही अन्य लामाओं की सेवा करते हैं और रसोइया, चरवाहा, पानी ढोने वाला, लेखक और अंत में जल्लाद जैसे कार्यों में भी उपयोगी होते हैं। लामा मठ आमतौर पर समृद्ध होते हैं। तिब्बती लोग अत्यंत धर्मनिष्ठ हैं, और लामा अज्ञानी भक्तों से हर तरह के बहाने बनाकर धन वसूलने में पीछे नहीं हटते। अपने धार्मिक कार्यों के अलावा, लामा व्यापारी भी हैं। वे ऊँचे ब्याज पर तेजी से साहूकारी का कारोबार करते हैं, जिसका भुगतान हर महीने करना होता है। यदि ऋण अदा न किया जाए, तो उधारकर्ता की सारी संपत्ति जब्त कर ली जाती है, और यदि ऋण चुकाने के लिए राशि अपर्याप्त हो, तो उधारकर्ता स्वयं मठ का दास बन जाता है। लामाओं के स्वस्थ और तंदुरुस्त चेहरे, कुछ अपवादों को छोड़कर, इस बात का स्पष्ट प्रमाण हैं कि कभी-कभार शारीरिक कष्ट सहने के बावजूद, वे स्वयं को किसी भी प्रकार से पीड़ित नहीं होने देते। वे अपेक्षाकृत विलासितापूर्ण और सुखमय जीवन व्यतीत करते हैं।

बड़े मठों को सरकार से सालाना भत्ता मिलता है। श्रद्धालुओं के दान से अच्छी-खासी रकम जमा होती है, और अन्य धन-संपत्ति ऐसे अनेक तरीकों से जुटाई जाती है, जिन्हें तिब्बत से कम धार्मिक किसी भी देश में बेईमानी और यहाँ तक कि अपराध माना जाएगा। तिब्बत में यह सर्वविदित है कि बड़े शहरों को छोड़कर, डाकुओं और लामाओं को छोड़कर लगभग सभी लोग गरीब हैं, जबकि भिक्षु और उनके प्रतिनिधि धन-संपत्ति का

भरपूर लाभ उठाते हैं। आम जनता को पूरी तरह अज्ञानता में रखा जाता है। वहाँ शायद ही कोई ऐसा आम आदमी मिले जो पढ़-लिख सके।

लामा आश्रम और लामा, साथ ही उनकी भूमि और संपत्ति, सभी प्रकार के करों और शुल्कों से पूर्णतः मुक्त हैं। प्रत्येक लामा और नौसिखिए का जीवन निर्वाह किया जाता है और उन्हें त्साम्बा, चाय की ईंटें और नमक का भत्ता मिलता है। लामाओं की भर्ती सभी वर्गों से की जाती है। ईमानदार लोग, हत्यारे, चोर, धोखेबाज—सभी का भिक्षु समुदाय में सहर्ष स्वागत किया जाता है। तिब्बत में प्रत्येक परिवार के एक या दो पुरुष सदस्य भिक्षु दीक्षा लेते हैं, और इस प्रकार भिक्षुओं का प्रत्येक घर या तम्बू पर प्रबल प्रभाव होता है। यह कहना कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी कि तिब्बत में पुरुष आबादी के आधे सदस्य लामा हैं।

प्रत्येक मठ में लामा, चिब्बी और निम्न श्रेणी के अज्ञानी और भ्रष्ट लामा पाए जाते हैं—जो मानो उच्च लामाओं के दास होते हैं। ये चिब्बी अपने वरिष्ठों की तरह वस्त्र धारण करते हैं और उनके सिर मुंडे होते हैं। वे मठ के सभी कार्य करते हैं; परन्तु वे मात्र सेवक होते हैं और लामा शासन की राजनीति में प्रत्यक्ष या सक्रिय रूप से भाग नहीं लेते। चिब्बी नौसिखिए होते हैं। वे युवावस्था में ही लामा आश्रम में प्रवेश करते हैं और कई वर्षों तक विद्यार्थी बने रहते हैं। वे निरंतर वरिष्ठों के शिक्षण और मार्गदर्शन में रहते हैं। पाप स्वीकारोक्ति का अभ्यास निम्न से उच्चतर क्रम में किया जाता है। कई परीक्षाओं में सफलतापूर्वक उत्तीर्ण होने के बाद, एक चिब्बी लामा बन जाता है, जिसका अनुवाद "उच्च पुरोहित" होता है। ये चिब्बी उन विचित्र धार्मिक समारोहों में छोटी भूमिकाएँ निभाते हैं जिनमें लामा, खालों और भयानक मुखौटों में भेस बदलकर, घंटियों, सींगों, बांसुरी, झांझ और ढोल के विचित्र संगीत की संगत में असाधारण विकृतियों के साथ गाते और नाचते हैं।

प्रत्येक बड़े मठ के प्रमुख एक ग्रैंड लामा होते हैं, जिन्हें ल्हासा के दलाई लामा से भ्रमित नहीं किया जाना चाहिए, जिनके बारे में माना जाता है, या बल्कि यह माना जाता है, कि उनकी एक अमर आत्मा है जो एक शरीर से दूसरे शरीर में जन्म लेती रहती है।

मठ में सभी लामा एक साथ खाते-पीते और सोते हैं, सिवाय ग्रैंड लामा के, जिनका अपना अलग कमरा होता है। हर बारह महीनों में से एक महीने के लिए वे घोर एकांतवास करते हैं, जिसे वे प्रार्थना में व्यतीत करते हैं। उस दौरान उन्हें बोलने की अनुमति नहीं होती। वे चौबीस घंटे का उपवास रखते हैं, जिसमें वे केवल पानी और मक्खन वाली चाय पीते हैं। उपवास के दिनों में वे केवल जीवित रहने के लिए आवश्यक भोजन ही करते हैं और नसवार और थूकने सहित अन्य सभी चीजों से परहेज करते हैं—ये दोनों आदतें तिब्बती पुरुषों में सबसे आम हैं।

लामा अपने आप को अचूक मानते हैं और इसी कारण वे जनता का आदर-भाव प्राप्त करते हैं, जो उनका भरण-पोषण, भोजन और वस्त्र प्रदान करती है। मैंने लामाओं को आमतौर पर बुद्धिमान पाया, लेकिन अमानवीय, यहाँ तक कि बेहद क्रूर और बेईमान भी। यह केवल मेरा अनुभव नहीं था। मैंने यही बात उन सताए हुए स्थानीय लोगों से भी सुनी, जो अपने जुए से मुक्ति पाने के अलावा और कुछ नहीं चाहते थे।

लोगों को घोर अज्ञानता में रखने में सफल लामा, अजीबोगरीब विद्याओं का अभ्यास करते हैं, जिनके द्वारा वे बीमारियों को ठीक करने, हत्याओं और चोरियों का पता लगाने, नदियों को रोकने और पल भर में तूफान लाने का दावा करते हैं। उनका कहना है कि कुछ अनुष्ठान रोग पैदा करने वाली बुरी आत्माओं को भगा देते हैं। लामा सम्मोहन प्रयोगों में निपुण होते हैं, जिनके द्वारा वे अपने प्रभाव में आए लोगों को ऐसी कई चीजें दिखाते हैं जो वास्तव में मौजूद नहीं होतीं। इसी शक्ति के कारण बुद्ध के दर्शन की बार-बार खबरें आती हैं, जो आमतौर पर अकेले व्यक्तियों द्वारा देखी जाती हैं, और राक्षसों के दर्शन होते हैं, जिनके किस्से भोले-भाले स्थानीय लोगों को भयभीत कर देते हैं। इन बुरी आत्माओं से और अधिक परिचित होने के बजाय, अज्ञानी लोग मठ को अपनी थोड़ी-बहुत धनराशि दे देते हैं।

सम्मोहन शक्ति लामाओं के विचित्र नृत्यों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, जिनमें अत्यंत विचित्र प्रकार की गतिविधियाँ और मुद्राएँ देखने को मिलती हैं। अंत में नर्तक एक अचेतन अवस्था में चला जाता है और लंबे समय तक मृत समान कठोर अवस्था में रहता है।

बड़े लामा आश्रमों में एक या एक से अधिक लामा मूर्तिकार होते हैं, जो जिले के सबसे दुर्गम स्थानों की यात्रा करते हैं, ताकि चट्टानों, पत्थरों, या सींग के टुकड़ों पर "ओम्ने मणि पद्मे हुन" का शाश्वत शिलालेख उकेर सकें, जो पूरे देश में देखने को मिलता है।

पर्वतीय दर्रों के सबसे ऊंचे स्थान, विशालकाय चट्टानें, नदियों के उद्गम स्थलों के पास की चट्टानें, या कोई भी ऐसी जगह जहां मणि दीवार मौजूद हो, जैसी विचित्र और सुरम्य जगहें आमतौर पर इन कलाकारों द्वारा बुद्ध के कमल के फूल से पुनर्जन्म का संकेत देने वाले जादुई शब्दों को उकेरने के लिए चुनी जाती हैं।

प्रार्थना-चक्र, वे यांत्रिक उपकरण जिनके द्वारा तिब्बती लोग जल, वायु और हस्तशक्ति से अपने ईश्वर की प्रार्थना करते हैं, लामा कलाकारों द्वारा निर्मित किए जाते हैं। जल से चलने वाले बड़े प्रार्थना-चक्र किसी नदी के किनारे या उसके ऊपर स्थापित किए जाते हैं। जिन विशाल बेलनों पर संपूर्ण तिब्बती प्रार्थना-पुस्तक अंकित होती है, वे बहते जल द्वारा घुमाए जाते हैं। वायुशक्ति से चलने वाले प्रार्थना-चक्र कपड़े की लंबी पट्टियाँ होती हैं जिन पर अक्सर प्रार्थनाएँ मुद्रित होती हैं। तिब्बती कहते हैं कि जब तक गति है, तब तक प्रार्थना है, इसलिए इन कपड़े की पट्टियों को हवा में लहराने के लिए छोड़ दिया जाता है। हस्तशक्ति से घुमाए जाने वाले छोटे प्रार्थना-चक्र दो प्रकार के होते हैं और चांदी या तांबे के बने होते हैं। घरेलू उपयोग के लिए बने प्रार्थना-चक्र लगभग छह इंच ऊँचे बेलन होते हैं। इनके भीतर धुरी पर प्रार्थनाओं के रोल घूमते हैं, जिन्हें मशीन के ऊपर उभरे हुए घुंडी की सहायता से उपासक गतिमान करता है। बेलन में बने एक वर्गाकार छेद से प्रार्थनाओं को घूमते हुए देखा जा सकता है। तिब्बत में रोज़मर्रा के इस्तेमाल में आने वाला प्रार्थना चक्र आमतौर पर तांबे का बना होता है, कभी-कभी पीतल का, और अक्सर पूरी तरह या आंशिक रूप से चांदी का। इसके सिलेंडर में दो घूमने वाले ढक्कन होते हैं, जिनके बीच प्रार्थना की रोटी कसकर रखी जाती है। सिलेंडर और रोटी के बीचोंबीच एक लोहे की छड़ वाला हैंडल लगा होता है, जिसे एक घुंडी से अपनी जगह पर रखा जाता है। सिलेंडर के चारों ओर एक छल्ला होता है, जो एक छोटी लटकती हुई चेन और वज़न से जुड़ा होता है। हाथ के

एक झटके से इसे घुमाने पर चक्र घूमने लगता है, जो नियम के अनुसार बाएं से दाएं घूमना चाहिए। चक्र के घूमने के दौरान "ओम्ने मणि पद्मे हुन" या केवल "मणि, मणि" का जाप किया जाता है।

प्राचीन चक्रों पर प्रार्थनाएँ छपी हुई नहीं बल्कि हाथ से लिखी होती हैं। मैलाकाइट, जेड, हड्डी या चांदी की अंगूठियों जैसे ताबीज अक्सर उस भार और जंजीर से जुड़े होते हैं जिनसे चक्र घूमता है। ये प्रार्थना-यंत्र हर तिब्बती परिवार में पाए जाते हैं। हर लामा के पास एक होता है। इन्हें बहुत सावधानी से रखा जाता है, और अजनबियों के लिए असली चक्र खरीदना मुश्किल होता है।

रोमन कैथोलिकों की तरह, माला के प्रत्येक मनके के लिए एक प्रार्थना की जाती है। इसके अलावा, लामाओं के पास एक पीतल का यंत्र होता है जिसे वे प्रार्थना करते समय हथेलियों के बीच घुमाते हैं। यह ढाई से तीन इंच लंबा होता है और गोल आकार का होता है ताकि इसे दोनों हाथों के बीच आसानी से पकड़ा जा सके।

तिब्बत में, अन्य बौद्ध देशों की तरह, मठ और लामा आश्रम दोनों ही हैं। ये ननें, जो देखने में बेहद भद्दी होती हैं, अपने सिर मुंडवाती हैं और लामाओं की तरह ही जादू-टोना करती हैं। आम जनता इन्हें नीची नज़र से देखती है। कुछ मठों में तो कठोर कारावास भी लागू किया जाता है। मठों की स्त्रियाँ लामा आश्रमों की स्त्रियों की तरह ही अनैतिक होती हैं, और अपने सबसे अच्छे रूप में भी वे मानवता की निम्नतम श्रेणी की ही होती हैं।

साल के कुछ खास समयों में, केवल उन्हीं लामाओं को महिलाओं के साथ असाधारण स्वतंत्रता प्राप्त होती है जो मानव हड्डियों से वाद्य यंत्र और भोजन पात्र बनाने की कला का अभ्यास करते हैं। खोपड़ी का उपयोग पीने के प्याले, त्साम्बा कटोरे और एकल और दोहरे ढोल बनाने के लिए किया जाता है। ऊपरी बांह की हड्डी, जांघ की हड्डी और पिंडली की हड्डी से तुरही और बांसुरी बनाई जाती हैं। कहा जाता है कि ये विशेष लामा मानव रक्त का आनंद लेते हैं, जिसे वे पुरुषों की खोपड़ियों से बने प्यालों में पीते हैं।

जब मैंने गोम्बा छोड़ा - मेरे नए मित्र, लामाओं ने मेरे जाने पर जमीन पर झुककर प्रणाम किया - तो मैंने गांव में घूमकर वहां देखने लायक हर चीज का जायजा लिया।

गाँव के पूर्वी छोर पर पानी के किनारे मिट्टी और पत्थर से बने कई जर्जर चोक्तेन कतार में खड़े थे। इन संरचनाओं में एक वर्गाकार आधार, उसके ऊपर एक सांचा, और ऊपर की ओर छज्जों से सजावट थी, जिसके ऊपर एक बेलनाकार स्तंभ था। माना जाता था कि प्रत्येक चोक्तेन में किसी महान व्यक्ति या संत से संबंधित हड्डी, कपड़ा या धातु का एक टुकड़ा, और पुस्तकें या उनके अंश रखे होते थे। कभी-कभी इनमें मोटे तौर पर खींची गई आकृतियाँ भी मिलती थीं। दुर्लभ मामलों में, जब शवदाह किया जाता था, तो राख को एक छोटे मिट्टी के कलश में इकट्ठा करके किसी एक चोक्तेन में रख दिया जाता था। राख को मिट्टी के साथ मिलाकर पेस्ट बनाया जाता था, और फिर उसे चपटा करके एक पदक का आकार दिया जाता था, जिस पर बुद्ध की आकृति को सांचे से उकेरा जाता था या किसी नुकीले औजार से उत्कीर्ण किया जाता था।

टकर में घरों का भीतरी हिस्सा बाहर से भी बदतर था। हर घर में चारदीवारी वाला आंगन था। दीवार के ऊपरी हिस्से के साथ-साथ घर की सपाट छत के किनारे को भी ईंधन के लिए इमली की झाड़ियों से ढका गया था। रात में आंगन में भेड़-बकरियों को रखा जाता था। कमरों में रहने वाले लोग बेहद गंदे थे। मठ के ऊपर

और हर घर के ऊपर सैकड़ों उड़ती हुई प्रार्थनाएं हो रही थीं। लोग हंसते-हंसते और बातें करते हुए छतों पर खड़े होकर हमें देख रहे थे।

जब मैं टहल रहा था, तभी लगभग पचास-साठ आदमी बंदूकों और तलवारों से लैस होकर वहाँ आ गए। मैंने उन्हें शक की नज़र से देखा, लेकिन काची ने मुझे आश्वस्त किया और बताया कि वे सैनिक नहीं, बल्कि डाकुओं का एक ताकतवर गिरोह था, जो लगभग आधा मील दूर डेरा डाले हुए था और लामाओं के साथ उनके अच्छे संबंध थे। एहतियात के तौर पर मैंने अपनी राइफल में गोलियां भर लीं। इससे हथियारबंद भीड़ में भगदड़ मच गई, और अफरा-तफरी में हमारे चारों ओर जमा हुए बाकी ग्रामीण भी उनके पीछे-पीछे भागने लगे। सभी तिब्बतियों की तरह, वे भी दयनीय हालत में थे, हालांकि वे ताकतवर शरीर वाले और शेखी बघारने वाले थे।

सुबह-सुबह मैंने खाने-पीने की चीजों के बारे में पूछताछ की और दो मोटी भेड़ें तथा लगभग साढ़े चार सौ पौंड भोजन सामग्री—आटा, चावल, त्साम्बा, गुर (मीठा पेस्ट), चीनी, नमक और मक्खन—खरीदने का इंतजाम किया। कई तिब्बतियों ने कहा कि वे मुझे जितनी मात्रा में चाहिए, उतनी सामग्री उपलब्ध करा सकते हैं। उनमें बुद्धि का एक शोका व्यापारी भी था, जिसने वादा किया कि वह एक घंटे के भीतर हम दस आदमियों के लिए पच्चीस दिन का पर्याप्त भोजन ला देगा। मैंने देखा कि जब ये लोग चले गए, तो मेरे दो शोका उनके पीछे दौड़े और उनसे गरमागरम बहस करने लगे। लगभग दो-तीन घंटे बाद व्यापारी वापस आए और कसम खाकर कहने लगे कि उस जगह पर एक औंस भी भोजन नहीं मिल सकता। इन लोगों का झूठ बोलने का तरीका अद्‌भुत था। मैंने अपने शोकाओं को फटकार लगाई और धमकी दी कि अगर उनके धोखे का मेरा संदेह सही साबित हुआ तो मैं उन्हें कड़ी सजा दूंगा।

शोका जनजाति के लोग पकड़े जाने और तिब्बतियों के भय से फिर से हतोत्साहित हो गए थे। उन्हें बलपूर्वक रोकना व्यर्थ था, इसलिए मैंने उन्हें रिहा करने का निर्णय लिया। निषिद्ध देश में प्रवेश करने के क्षण से ही मुझे तिब्बतियों के साथ-साथ उनसे भी अपनी रक्षा करनी पड़ी थी। हालाँकि, जब मैंने उन्हें जाने देने का निर्णय लिया, तो मैंने सोचा कि इन लोगों ने मेरे लिए ऐसे कष्ट और अभाव सहे हैं जिन्हें कुछ ही लोग सह सकते हैं। इसलिए, उन्हें विदा करते समय मैंने उन्हें उचित पुरस्कार दिया, और कृतज्ञता के रूप में उन्होंने मेरे सामान का वह हिस्सा, जिसमें तस्वीरें, नृवंशविज्ञान संग्रह आदि शामिल थे, सीमा पार सुरक्षित वापस लाने का वचन दिया। यह वचन पूरा किया गया। फिर मैंने बड़ी मुश्किल से पाँच लोगों के लिए दस दिनों तक चलने लायक राशन खरीदा।

पूरा दल मेरे साथ सवा तीन मील और आगे गया, जहाँ पश्चिम दिशा में एक मील दूर स्थित ढहते हुए पंकू गोम्बा को देखकर हम तिब्बतियों की नज़रों से बचकर विदा होने की आवश्यक व्यवस्था करने के लिए रुक गए। मैंने अक्षांश और देशांतर का अवलोकन किया। झील के तल से पचास फीट ऊपर, तापमान मापने वाले यंत्र का पानी 185° फ़ारेनहाइट पर उबल रहा था, हवा का तापमान 76° था और समय सुबह 10 बजे था।

हमें अपने दक्षिण में बर्फ से ढकी एक ऊँची पर्वत श्रृंखला दिखाई दे रही थी, जो निमो नामज़िल चोटी से शुरू होकर लगभग दक्षिण-पश्चिम से उत्तर-पूर्व तक फैली हुई थी।

जब सब कुछ तैयार हो गया, तो काची और डोला सहित पांचों शोकाओं ने मुझे यह कहते हुए छोड़ दिया कि वे सूर्य और उन सभी चीजों की कसम खाकर मुझे तिब्बतियों के हवाले नहीं करेंगे जिन्हें वे सबसे पवित्र मानते थे।

बिजेसिंग जोहारी और नट्टू मेरे साथ मैयुम दर्रे तक चलने के लिए सहमत हो गए, जिससे मेरे दल में, मुझे मिलाकर, अब केवल पाँच लोग ही रह गए।

फुटनोट:

[7] चिब्बिस — जिसे अक्सर चाबिस भी उच्चारित किया जाता है।

अध्याय 14

एक और आपदा

जब मैंने अपने छोटे दल के साथ उत्तर-पूर्व की ओर प्रस्थान किया, तो सब कुछ अच्छा लग रहा था। पहले हम झील के किनारे-किनारे साढ़े तीन मील तक चले, फिर बंजर पहाड़ी श्रृंखलाओं को पार करते हुए पूर्व दिशा में बारह मील की दूरी तय की। यात्रा शांतिपूर्ण रही। मेरे चारों साथी बहुत खुश लग रहे थे। हम एक मैदान में उतरे जहाँ पानी और घास उपलब्ध थी। हमें एक ऐसा शिविर स्थल मिला जिसके चारों ओर एक सुरक्षात्मक दीवार बनी हुई थी, जैसी तिब्बती लोग आमतौर पर अपने पड़ावों पर बनाते हैं। तेज़ हवा और ओलों व बारिश के बावजूद, जिसने हमें पूरी तरह से भिगो दिया, हमने रात के लिए आराम किया। रात के दौरान तापमान 34 डिग्री तक गिर गया।

सूर्योदय के समय मैंने एक ऊँची पहाड़ी की चोटी से सर्वेक्षण करना शुरू किया, जहाँ से मुझे आसपास के एक बड़े क्षेत्र का विहंगम दृश्य दिखाई देता था। मेरे लिए यह पता लगाना अत्यंत महत्वपूर्ण था कि पहाड़ियों और पर्वतों की जटिल श्रृंखला को पार करने का सबसे आसान रास्ता कौन सा होगा, और मैं उत्तर दिशा में बहने वाली एक बड़ी नदी की सटीक दिशा का भी पता लगाना चाहता था, जो अपना जल मानसरोवर में गिराती थी। मैंने अकेले ही चलना शुरू किया। साढ़े तीन मील की चढ़ाई के बाद मैं 16,480 फीट ऊँची पहाड़ी की चोटी पर पहुँचा, जहाँ से मैं

मैं जो कुछ जानना चाहता था, वह सब जानने के लिए मैं शिविर में लौटा और हम 73° 30' के कोण पर आगे बढ़े, 16,450 फीट ऊँचे दर्रे को पार करते हुए। फिर हम एक पहाड़ी के सामने पहुँचे, जिसका शिखर किसी किले जैसा लग रहा था, जहाँ हवा में उड़ते हुए पक्षी लहरा रहे थे। पहाड़ी की तलहटी में लगभग बीस टट्टू चर रहे थे।

अपनी दूरबीन की सहायता से मैंने यह सुनिश्चित किया कि जो पहली नज़र में महल जैसा लग रहा था, वह प्रकृति की रचना मात्र था। ज़ाहिर तौर पर वहाँ कोई छिपा नहीं था। हालाँकि, टट्टुओं ने मनुष्यों की उपस्थिति का संकेत दिया, और हमें सावधानी से आगे बढ़ना पड़ा। वास्तव में, अगली पहाड़ी के चारों ओर घूमते हुए, हमने नीचे घास से ढकी घाटी में कई काले तंबू, दो सौ याक और लगभग एक हज़ार भेड़ें देखीं। हम पहाड़ी के पीछे छिपकर अच्छी तरह से आगे बढ़े। हम उसके चारों ओर काफी दूर तक गए, और अंत में एक विस्तृत घाटी में उतरे। नदी इस घाटी से होकर दक्षिणी पहाड़ी श्रृंखला के निकट एक अर्धवृत्त बनाती हुई बह रही थी, और इसमें दक्षिण-पूर्व से आने वाली एक सहायक नदी मिल रही थी। यह सहायक नदी मुझे पहले मुख्य धारा से बड़ी लग रही थी, जिसे मैंने बाद में पहचाना। मैंने चार मील तक इसके प्रवाह का अनुसरण किया, लेकिन पाया कि यह मुझे मेरी इच्छा से अधिक दक्षिण दिशा में ले जा रही थी, और मुझे एक समतल पठार के साथ वापस लौटना पड़ा।

दो तिब्बती महिलाओं से मुलाकात हुई और बड़ी मुश्किलों के बाद मैंने उनके झुंड में से एक मोटी भेड़ खरीदी, जिसे वे अपने सामने हांक रही थीं। इन दोनों महिलाओं के हाथों में रस्सी के गुलेल थे। जिस सटीकता से वे दूर से पत्थर फेंककर निशाने पर लगा सकती थीं, वह वाकई अद्भुत था। कुछ सिक्कों के बदले उन्होंने अपनी कुशलता का प्रदर्शन किया और अपने झुंड की किसी भी भेड़ को, चाहे वह तीस-चालीस गज की दूरी पर ही क्यों न हो, निशाना बनाया। मैंने इन खतरनाक महिलाओं से उस इलाके के बारे में थोड़ी जानकारी लेने की कोशिश की, लेकिन उन्होंने कहा कि उन्हें इसके बारे में कुछ भी पता नहीं है।

उन्होंने कहा, “हम सेवक हैं, और हमें कुछ नहीं पता। हम अपने झुंड की हर भेड़ को जानते हैं, बस इतना ही। हमारे स्वामी, जिनके हम दास हैं, सब कुछ जानते हैं। वे जानते हैं कि नदियाँ कहाँ से निकलती हैं, और सभी गोम्बाओं तक जाने के रास्ते जानते हैं। वे एक महान राजा हैं।”

"और वह कहाँ रहता है?" मैंने पूछा।

"वहाँ से दो मील दूर, जहाँ से धुआँ आकाश में उठता है।"

इतने ज्ञानी इस "महान राजा" से मिलने जाने का मन बहुत ललचा रहा था। शायद हम उन्हें राशन खरीदने के लिए मना लें। हमारे पास राशन की कमी थी, इसलिए राशन हमारे लिए बहुत मददगार साबित होता। वैसे भी, यह मुलाकात दिलचस्प होती। मैंने जोखिम उठाने का फैसला किया।

हम अपने सामने उठते धुएं के कई स्तंभों की ओर बढ़े और अंततः काले तंबुओं के एक विशाल शिविर के पास पहुँचे। हमारे आने से हलचल मच गई। पुरुष और महिलाएं बड़े उत्साह से अपने तंबुओं से अंदर-बाहर भागने लगे।

"जोगपास! जोगपास!" (डाकुओं! डाकुओं!) उनके शिविर में से किसी ने चिल्लाया। पल भर में उनकी बंदूकें तैयार हो गईं, और जो कुछ लोग तंबुओं के बाहर रह गए थे, उन्होंने अपनी तलवारें निकाल लीं, उन्हें बेढंगे तरीके से हाथों में पकड़े हुए, जिससे किसी को भी डर लगने की संभावना नहीं थी।

हमें डाकू समझे जाना हमारे लिए एक बिल्कुल नया अनुभव था। युद्ध जैसी वर्दी पहने लोगों के चेहरे पर दिख रहे भयभीत भावों से बिल्कुल विपरीत थे। दरअसल, जब चंदन सिंह और मैं आगे बढ़े और उनसे अपनी तलवारें म्यान में रखने और बंदूकें किनारे रखने को कहा, तो उन्होंने तुरंत हमारी सलाह मान ली और हमारे बैठने के लिए चटाई बिछा दी। डर पर काबू पाने के बाद वे बहुत ही विनम्र हो गए।

"किउला गुंगे गोज़ाई देवा लाबोडू" (आपके कपड़े अच्छे हैं)। मैंने बातचीत शुरू की, चापलूसी करने की कोशिश करते हुए, ताकि सरदार सहज महसूस करे।

"लैसो, लेह" (जी सर), तिब्बती ने आश्चर्यजनक रूप से उत्तर दिया, और हास्यास्पद गर्व के भाव से अपने पहनावे को देखा।

उसका जवाब यह समझने के लिए काफी था कि वह मुझे अपने से श्रेष्ठ समझता था। अगर वह मुझे अपने बराबर या हीन समझता तो वह बिना लेह के लासो कहता।

मैंने पूछा, "Kiula tuku taka zando?" (तुम्हारे कितने बच्चे हैं?)

"नी " (दो).

"Chuwen bogpe, tsamba, chon won ì?" (क्या आप मुझे आटा या त्साम्बा बेचेंगे?)

"मिड्डू" (मेरे पास कुछ नहीं है), उसने अपने दाहिने हाथ की हथेली को ऊपर की ओर मोड़कर कई त्वरित अर्धवृत्ताकार हरकतें करते हुए उत्तर दिया।

यह तिब्बती लोगों का एक बहुत ही विशिष्ट हावभाव है, और लगभग हमेशा "नहीं" शब्द के साथ होता है, न कि हमारे यहाँ की तरह सिर हिलाने के साथ।

"Keran ga naddoung?" (आप कहाँ जा रहे हैं?) उसने उत्सुकता से मुझसे पूछा।

"Nhgarang ne koroun!" (मैं एक तीर्थयात्री हूँ!) "Lungba quorghen neh jelghen" (मैं पवित्र स्थानों को देखने जाता हूँ)।

"गोप्रिया ज़ाल्डो. चकज़ल वोर्ज़े. त्साम्बा मिद्दू. बोगपे मिद्दू, गुरम मिद्दू, डिए मिद्दू, कसुर मिद्दू " (मैं बहुत गरीब हूँ। कृपया मेरी बात सुनिए। मेरे पास न तो त्साम्बा है, न आटा, न मीठा पेस्ट, न चावल, न सूखे मेवे)।

यह बात मुझे पता थी कि सच नहीं है। मैंने शांत भाव से कहा कि जब तक मुझे खाना नहीं मिल जाता, मैं वहीं बैठा रहूंगा। उसी समय मैंने एक-दो चांदी के सिक्के निकाले, जिन्हें तिब्बत में दिखाना हमेशा सौदे को जल्दी निपटाने का एक तरीका होता था। थोड़ी-थोड़ी मात्रा में, हर बार सिक्का डालने के बाद तिब्बती कसम खाते थे कि उनके पास बेचने के लिए एक भी सिक्का नहीं है, मैंने बड़ी मुश्किल से अपने धैर्य की परीक्षा लेते हुए लगभग बीस पौंड खाना खरीद लिया। जैसे ही पैसे दिए गए, वे आपस में उसके बंटवारे को लेकर झगड़ने लगे और बात हाथापाई तक पहुंच गई। लालच और लोभ तिब्बतियों की सबसे प्रमुख विशेषता है। तिब्बती किसी भी वर्ग के हों, वे छोटे से छोटे चांदी के सिक्के के लिए भीख मांगने में शर्म महसूस नहीं करते।

दल के पुरुष देखने में आकर्षक थे। उनकी नाक चपटी और चौड़ी थी, गाल की हड्डियाँ उभरी हुई थीं और आँखें छोटी, तिरछी (लगभग पतली) और भेदक थीं। उनके बाल लंबी चोटियों में गुंथे हुए थे, जिन पर लाल कपड़े के टुकड़े, हाथीदांत की डिस्क और चांदी के सिक्के जड़े हुए थे। लगभग सभी ने गहरे लाल रंग का कोट पहना हुआ था, जिसकी चौड़ी आस्तीनें हाथों पर लटकी हुई थीं और कमर पर खाने के कटोरे, नसवार की डिब्बी और दैनिक उपयोग की अन्य वस्तुएँ रखने के लिए ऊपर खींची हुई थीं। सभी के पास रत्नजड़ित तलवारें थीं।

वे उचित दूरी पर खड़े होकर हमारे चेहरों को गौर से देख रहे थे और हमारी हरकतों पर बड़ी दिलचस्पी से नज़र रख रहे थे। मैंने इन बड़े-बड़े, हट्टे-कट्टे आदमियों में इतनी कायरता शायद ही कभी देखी हो। किसी यूरोपीय के लिए तो यह कल्पना से परे ही था। सिर्फ़ आँखें ऊपर उठाना ही किसी को डराकर भागने पर मजबूर कर देता था। मुखिया को छोड़कर, जो डर से काँपते हुए भी निडर होने का नाटक कर रहा था, बाकी सभी ने हास्यास्पद घबराहट दिखाई जब मैं उनके पास उनके गले में लटके आभूषणों, जैसे कि उनकी छाती

पर शान से लटक रहे ताबीज़ के डिब्बों को देखने के लिए पहुँचा। इन ताबीज़ के डिब्बों में से बड़े वाले में बुद्ध की मूर्ति थी, बाकी सिर्फ़ पीतल या चाँदी के खाली डिब्बे थे।

रात होने पर मुझे तिब्बतियों के पास डेरा डालना सुरक्षित नहीं लगा। हम अपने याकों को आगे-आगे हांकते हुए और नई खरीदी हुई भेड़ों को घसीटते हुए वहां से चले गए। हम ढाई मील चले और फिर एक घाटी (16,050 फीट) में रुके, जहां हमें तेज हवा से थोड़ी राहत मिली। हमारे दाहिनी ओर उत्तर से दक्षिण तक फैली हुई काफी ऊंची पर्वत श्रृंखला थी। एक गहरी खाई से एक बड़ी नदी बह रही थी। शाम के उस समय हम उसे पार करने की उम्मीद नहीं कर सकते थे, लेकिन सुबह कोशिश की जा सकती थी, जब रात की ठंड से बर्फ पिघलना बंद हो जाती और नदी का जलस्तर कम हो जाता। दिन भर भारी बारिश हुई थी। सूरज डूबते ही मूसलाधार बारिश शुरू हो गई। हमने अपना छोटा सा तंबू लगाया था, लेकिन कुछ घंटों बाद ही हमें उसे हटाना पड़ा, क्योंकि जिस छोटे से बेसिन में हमने उसे लगाया था, वह एक तालाब में बदल गया था। हमारे पास खुले में आने के अलावा कोई विकल्प नहीं था। जहां पानी हमें डुबो नहीं पाया, वहां हवा इतनी तेज़ थी और ज़मीन इतनी गीली थी कि तंबू लगाना नामुमकिन था। खूंटियां भी नहीं गड़ रही थीं। रात के घंटे लंबे लग रहे थे, हम वाटरप्रूफ कपड़ों में कसकर लिपटे बैठे थे, हमारे पैर, हाथ और कान लगभग जम चुके थे। भोर होने पर भी तूफान के थमने का कोई आसार नहीं था। हम शाम को आग नहीं जला पाए थे, और अब भी नहीं जला सकते थे। हम ठंड से कांप रहे थे, भूखे थे और बहुत दुखी थे। तापमान 36 डिग्री तक गिर गया था। दोपहर होते-होते, बारिश अभी भी मूसलाधार बरस रही थी और रुकने का कोई आसार नहीं था, इसलिए हमने अपने याकों पर सामान लादा और बर्फ से ढके पहाड़ों के बीच की घाटी में प्रवेश किया। बड़ी मुश्किल से हमने उस सहायक नदी को पार किया जिसका हम अब तक अनुसरण कर रहे थे, और फिर मुख्य धारा के दाहिने किनारे पर आगे बढ़े।

हम इतने थके-हारे और भीगे हुए थे कि शाम होते-होते जब हम एक विशाल चट्टान के पास पहुँचे, जिसकी पथरीली सतह पर एक धैर्यवान लामा मूर्तिकार ने बड़े अक्षरों में 'ओम्ने मणि पद्मे हुन' उकेरा था, तो हम रुक गए। यहाँ घाटी बहुत संकरी थी। हमें एक बड़े पत्थर के नीचे सूखी जगह मिल गई, लेकिन हम पाँचों के लिए वहाँ पर्याप्त जगह नहीं थी, इसलिए दोनों शोका थोड़ी दूर एक और चट्टान की ओट में चले गए। यह स्वाभाविक ही लगा। मैंने हथियारों और वैज्ञानिक उपकरणों का ध्यान रखा, जबकि शोकाओं ने अपने पत्थर के नीचे उन थैलों को रखा जिनमें डिब्बाबंद मांस के भंडार को छोड़कर हमारा लगभग सारा राशन था। रात भर बारिश होती रही, हवा ज़ोर से चलती रही। हम फिर से आग नहीं जला सके। थर्मामीटर 38 डिग्री से नीचे नहीं गिरा, लेकिन भीगी हुई हालत के कारण ठंड बहुत तेज़ लग रही थी। वास्तव में, हमें इतनी ठंड लग रही थी कि हमने खाने की हिम्मत ही नहीं की। हमारे पास जो थोड़ी सी सूखी जगह थी, उसमें दुबके बैठे-बैठे और बिना खाना चखे ही हम आखिरकार गहरी नींद में सो गए। तिब्बत में रहने के बाद पहली बार मुझे चैन की नींद आई। जब मैं उठा तो दिन का उजाला हो चुका था।

तूफान का फायदा उठाकर नट्टू और बिजेसिंग रात में अपने साथ सौंपे गए सामान के साथ भाग निकले थे। मैंने उनके आधे मिट चुके निशान उसी दिशा में देखे जहाँ से हम पिछली रात आए थे। बदमाश भाग गए थे, और इससे अपेक्षाकृत कम नुकसान होता, अगर वे मेरे दो हिंदू नौकरों के लिए सारा राशन और अच्छी रस्सी, पट्टियाँ और अन्य सामान अपने साथ न ले गए होते, जिनकी हमें हर मोड़ पर कमी महसूस होने वाली थी और जिन्हें बदलने का हमारे पास कोई साधन नहीं था।

मेरे साथ काम करने वाले तीस चुने हुए सेवकों में से अट्ठाईस अब मुझे छोड़कर चले गए थे। केवल दो ही वफादार बचे थे: चंदन सिंह और कुष्ठ रोगी मानसिंह!

मौसम बेहद खराब था। मेरे आदमियों के लिए न तो खाना था और न ही ईंधन! मैंने उन दोनों हिंदुओं से भी वापस जाने का प्रस्ताव रखा और मुझे अकेले आगे बढ़ने दिया। मैंने उन्हें आगे आने के खतरों के बारे में विस्तार से बताया और पूरी तरह से चेतावनी दी, लेकिन उन्होंने मुझे छोड़ने से साफ इनकार कर दिया।

“महोदय, हम शोकवासी नहीं हैं,” उन्होंने कहा। “यदि आप मरेंगे, तो हम भी आपके साथ मरेंगे। हमें मृत्यु से भय नहीं है। हमें आपको कष्ट में देखकर दुख हो रहा है, महोदय, लेकिन हमारी चिंता न करें। हम तो केवल गरीब लोग हैं, इसलिए इससे कोई फर्क नहीं पड़ता।”

मुझे लगता है कि इस आखिरी आपदा ने हमें आगे बढ़ने से रोक देना चाहिए था। लेकिन इसने मुझे पहले से भी ज़्यादा दृढ़ संकल्पित कर दिया। घास की तलाश में भटक गए याकों को पकड़ने के लिए दूर तक दौड़ना कोई आसान काम नहीं था; उन्हें ढूंढकर अपने साधारण शिविर स्थल पर वापस लाना, उनकी पीठ पर सामान ढोने वाली काठी बांधना और उन पर वैज्ञानिक उपकरणों और फोटोग्राफिक प्लेटों के भारी टिन-लेपित बक्से लादना भी आसान नहीं था। यह काम दिन भर के काम का सिर्फ़ एक हिस्सा था, जिसमें मेरी डायरी लिखना, अवलोकन दर्ज करना, रेखाचित्र बनाना, फोटोग्राफी करना, कैमरों में प्लेट बदलना, कभी-कभी नेगेटिव डेवलप करना, सर्वेक्षण करना, राइफल, रिवॉल्वर आदि की सफाई करना शामिल था। हमारी थकी हुई हालत के कारण भारी बक्सों को सामान ढोने वाली काठी पर उठाना हमारी ताकत पर भारी पड़ रहा था। याकों की बेचैनी ने हमें कई बार कोशिश करने पर मजबूर कर दिया, तब जाकर हम आखिरकार सामान को ठीक से बांध पाए, खासकर इसलिए क्योंकि शोका भगोड़ों ने हमारी सबसे अच्छी रस्सियाँ और चमड़े के पट्टे चुरा लिए थे। बची हुई रस्सी का एक टुकड़ा इतना छोटा था कि उससे याक के एक हिस्से में आखिरी गांठ बांधना मुश्किल था। चंदन सिंह और मानसिंह दोनों में इतनी ताकत नहीं थी कि उसे खींचकर जोड़ सकें। मैंने उनसे याक को सींगों से पकड़ने को कहा ताकि वह स्थिर रहे, जबकि मैंने पूरी ताकत से खींचा। बड़ी मशक्कत के बाद मैं कामयाब हुआ और उठने ही वाला था कि याक के सींग का एक जोरदार प्रहार मेरे दाहिने कान के ठीक पीछे, खोपड़ी पर लगा और मैं सिर के बल गिर पड़ा। मैं कुछ पलों के लिए अचेत हो गया। धीरे-धीरे होश में आया, लेकिन मेरे सिर के पीछे का हिस्सा कई दिनों तक सूजा हुआ और दर्द करता रहा।

हम नदी के दाहिने किनारे पर लाल रंग की पहाड़ियों और उत्तर-पश्चिम तथा पूर्व-दक्षिण-पूर्व में दूर स्थित ऊँचे बर्फीले पहाड़ों के बीच से आगे बढ़े, जो बारिश रुकने और आसमान साफ होने पर समय-समय पर दिखाई

देते थे। बादलों के क्षणिक रूप से छंटने के तुरंत बाद मूसलाधार बारिश शुरू हो जाती थी। कीचड़ में धंसते हुए चलना अप्रिय और कठिन होता जा रहा था। शाम होते-होते अचानक हमने देखा कि लगभग डेढ़ सौ सैनिक पूरी रफ्तार से घोड़ों पर सवार होकर नदी घाटी में हमारा पीछा कर रहे हैं। हम आगे बढ़ते रहे और एक पहाड़ी के पीछे उनकी नजरों से ओझल होकर हमने अपना रास्ता बदल लिया और तेजी से पहाड़ी श्रृंखला की चोटी पर चढ़ गए। याक के साथ मेरे दोनों साथी दूसरी तरफ छिप गए। मैं पहाड़ी की चोटी पर लेटा रहा और अपनी दूरबीन से पीछा करने वालों की गतिविधियों पर नजर रखता रहा। वे बेखबर आगे बढ़ते रहे, उनके घोड़ों की घंटियों की झंकार उस सुनसान जगह पर कानों को सुहा रही थी। यह सोचकर कि हम नदी के किनारे-किनारे आगे बढ़ गए हैं, वे उस जगह से आगे निकल गए जहाँ हमने रास्ता छोड़ा था। हमें पकड़ने की जल्दी में वे पहाड़ी पर हमारे पदचिह्नों को देख नहीं पाए।

बारिश फिर से तेज होने लगी और हम 17,000 फीट की ऊंचाई पर डेरा डाले रहे, हमारा सामान किसी भी क्षण उड़ान भरने के लिए तैयार था। रात आराम से नहीं गुजरी। मैं पूरी रात राइफल हाथ में लिए बैठा रहा, किसी भी अप्रत्याशित घटना के लिए तैयार, और सुबह होने पर मुझे वाकई राहत मिली। बारिश तो रुक गई थी, लेकिन हम अब एक सफेद धुंध से घिरे हुए थे जिससे ठंड लग रही थी। मैं थका हुआ था। चंदन सिंह को कड़ी निगरानी रखने का जिम्मा सौंपा गया जबकि मैंने सोने की कोशिश की।

"हज़ूर, हज़ूर, जल्दी आपकी बंदूक!" (सर, सर, जल्दी, अपनी राइफल!) मेरे नौकर ने मुझे जगाते हुए बुदबुदाया। "क्या आपको घंटियों की आवाज़ सुनाई दे रही है?"

खनकने की आवाज़ साफ़ सुनाई दे रही थी। हमारे पीछा करने वाले नज़दीक आ रहे थे, ज़ाहिर है वे काफ़ी संख्या में थे। समय बर्बाद करने का कोई समय नहीं था। उनसे बच निकलना नामुमकिन लग रहा था। मैंने भागने की कोशिश करने के बजाय उनका सामना करने का फ़ैसला किया। चंदन सिंह और मैं अपनी राइफ़लों से लैस थे, मानसिंह अपने गौरखा चाकू के साथ। हम उनके आने का इंतज़ार करने लगे। कोहरे से धूसर, प्रेत जैसी आकृतियों का एक लंबा जुलूस निकला, हर एक अपने घोड़े को आगे बढ़ा रहा था। आगे बढ़ने वाले दल के लोग ज़मीन का जायज़ा लेने के लिए रुकते रहे; बारिश से हमारे पैरों के निशान थोड़े मिट गए थे, इसलिए वे उनका पीछा करते हुए ऊपर चढ़ रहे थे। आख़िरकार हमें पहाड़ी की चोटी पर देखकर वे रुक गए। उनमें हलचल मच गई। वे उत्तेजित होकर आपस में सलाह-मशविरा कर रहे थे। उनमें से कुछ ने अपनी बंदूकें निकाल लीं, कुछ ने अपनी तलवारें खींच लीं, जबकि हम ऊपर एक चट्टान पर बैठकर उन्हें ध्यान से देखते रहे।

थोड़ी देर हिचकिचाने के बाद, चार अधिकारियों ने हमें इशारा किया कि वे पास आना चाहते हैं।

“आप महान राजा हैं,” उनमें से एक ने ऊँची आवाज़ में चिल्लाते हुए कहा, “और हम ये भेंट आपके चरणों में अर्पित करना चाहते हैं।” उसने उन छोटे थैलों की ओर इशारा किया जिन्हें बाकी तीन लोग ले जा रहे थे।

“गेलबो! चकज़ल! चकज़ल!” (हम आपको प्रणाम करते हैं, महाराज!)

उस भयानक रात के बाद मैं खुद को बिल्कुल भी शाही महसूस नहीं कर रहा था, लेकिन मैं जब भी संभव हो, स्थानीय लोगों के साथ उचित सम्मान और विनम्रता से पेश आना चाहता था।

मैंने कहा कि चार आदमी आ सकते हैं, लेकिन दल के अधिकांश सदस्यों को लगभग दो सौ गज दूर एक स्थान पर पीछे हट जाना चाहिए। उन्होंने तुरंत ऐसा ही किया—शुरू में उनके युद्ध जैसे रवैये को देखते हुए मुझे थोड़ा आश्चर्य हुआ। उन्होंने अपनी बंदूकें अत्यंत विनम्रता से नीचे रख दीं और अपनी तलवारें म्यान में रख लीं। चारों अधिकारी पास आए और जब वे हमारे बिल्कुल करीब पहुँच गए, तो उन्होंने थैले ज़मीन पर फेंक दिए और हमें अंदर की सामग्री दिखाने के लिए उन्हें खोला। उनमें त्साम्बा, आटा, चूरा (एक प्रकार का पनीर), गुरम (मीठा पेस्ट), मक्खन और सूखे मेवे थे। अधिकारियों ने बड़े उत्साह से अभिवादन किया। उन्होंने अपनी टोपियाँ उतारकर ज़मीन पर फेंक दी थीं और जब तक मैंने उनसे जीभ अंदर करने का अनुरोध नहीं किया, तब तक वे अपनी जीभ बाहर निकाले रहे। उन्होंने बताया कि वे तोकचिम तारजुम के अधीनस्थ हैं, जिन्होंने उन्हें मेरा हालचाल पूछने के लिए भेजा था और चाहते थे कि मैं उन्हें अपना सबसे अच्छा मित्र मानूँ। इस दुर्गम देश में यात्रा करने में आने वाली कठिनाइयों से भलीभांति परिचित तरजुमों ने कहा कि वे चाहते हैं कि मैं उनके द्वारा प्रस्तुत उपहारों को स्वीकार कर लूँ। इन उपहारों के साथ उन्होंने मुझे एक काटा, या "प्रेम और मित्रता का दुपट्टा" दिया, जो रेशम जैसे पतले कपड़े का एक लंबा टुकड़ा था, जिसके किनारे को झालरदार बनाया गया था। तिब्बत में ये काटा हर उपहार के साथ दिए जाते हैं। आगंतुक से अपेक्षा की जाती है कि वह पहुँचते ही अपने मेज़बान को काटा भेंट करे। उच्च लामा भक्तों को काटा बेचते हैं। लामा आश्रम में दर्शन के बाद उचित भेंट देने वालों को भी ऐसा ही एक दुपट्टा दिया जाता है। यदि किसी मित्र को मौखिक संदेश भेजा जाता है, तो उसके साथ काटा भी भेजा जाता है। अधिकारियों और लामाओं के बीच इस रेशमी कपड़े के छोटे टुकड़े पत्रों में भी रखे जाते हैं। किसी सम्मानित आगंतुक को काटा न देना शिष्टाचार का उल्लंघन माना जाता है और यह अपमान के समान है।

मैंने तरजुम की दयालुता के लिए तुरंत धन्यवाद व्यक्त किया और दूतों को भेंट की गई वस्तुओं के मूल्य से तीन गुना अधिक चांदी दी। वे लोग प्रसन्न और मित्रवत प्रतीत हुए और हमने कुछ देर तक बातचीत की। मुझे बहुत गुस्सा आया जब बेचारा मानसिंग, इतना सारा खाना देखकर अचंभित हो गया और भूख से बेहाल हो गया। शिष्टाचार के उल्लंघन और संभावित परिणामों की परवाह किए बिना, उसने मुट्ठी भर आटा, पनीर और मक्खन खाना शुरू कर दिया। इससे तिब्बतियों को शक हुआ कि हम भूख से मर रहे हैं और अपनी हमेशा की चालाकी से उन्होंने हमारी इस हालत का फायदा उठाने का निश्चय किया।

दूतों में सबसे बुजुर्ग ने कहा, "तरजुम चाहता है कि आप वापस आएं और उसके मेहमान बनें। वह आपको और आपके आदमियों को भोजन कराएगा, और फिर आप अपने देश लौट जाएंगे।"

मैंने उत्तर दिया, "धन्यवाद। हमें तरजुम का खाना नहीं चाहिए और न ही हम वापस जाना चाहते हैं। उनकी दयालुता के लिए मैं उनका बहुत आभारी हूं, लेकिन हम अपनी यात्रा जारी रखेंगे।"

"तब," एक युवा और शक्तिशाली तिब्बती ने क्रोधित होकर कहा, "यदि आप अपनी यात्रा जारी रखते हैं, तो हम अपने उपहार वापस ले लेंगे।"
"और तुम्हारा काटा!" मैंने पलटवार करते हुए पहले मक्खन का बड़ा गोला उसकी छाती पर फेंका, और उसके बाद आटे, त्साम्बा, पनीर, फल आदि के छोटे-छोटे थैले, जो एक मिनट पहले हमारे सामने खूबसूरती से सजाए गए थे।
इस अप्रत्याशित बमबारी से तिब्बती लोग काफी घबरा गए और पाउडर से ढके कोट, बाल और चेहरे के साथ जैसे-तैसे भागने लगे। चंदेन सिंह, जो निशाना साधने में हमेशा बिजली की तरह फुर्तीला था, ने अपने भद्दे कपड़ों में खड़े एक राजदूत के शरीर के सबसे गोल हिस्से पर राइफल के बट से ताबड़तोड़ वार किए, जब वह उठकर भागने की कोशिश कर रहा था।

हमारे दल के दार्शनिक माने जाने वाले मानसिंग ने अपना भोजन बीच में ही रोक दिया, लेकिन जो कुछ हो रहा था उससे अप्रभावित होकर, जमीन पर बिखरे हुए फल, पनीर और मक्खन के टुकड़े उठाए और बुदबुदाते हुए कहा कि अच्छे भोजन को इस तरह लापरवाही से फेंक देना शर्म की बात है।
दूर से साक्षात्कार के विभिन्न चरणों को ध्यानपूर्वक देख रहे सैनिकों ने शीघ्र पीछे हटना ही उचित समझा। वे अपने घोड़ों पर सवार होकर अफरा-तफरी में पहाड़ी से नीचे और फिर नदी की घाटी के किनारे-किनारे तब तक दौड़ते रहे जब तक कि कोहरे में वे ओझल नहीं हो गए। राजदूत, जो अपने घोड़ों से दोबारा नहीं मिल पाए थे, विरल हवा और ऊबड़-खाबड़ ज़मीन का ध्यान रखते हुए, परिस्थितियों के अनुसार यथासंभव शीघ्र पैदल ही उनके पीछे-पीछे चले।
उनकी चीखें, जो केवल भय के कारण थीं (क्योंकि हमने उन्हें कोई वास्तविक नुकसान नहीं पहुंचाया था), ने तिब्बती सैनिकों और उनके अधिकारियों के प्रति मेरे सैनिकों के मन में मौजूद तिरस्कार को और मजबूत कर दिया।
यह दृश्य वाकई हास्यास्पद था। हम दिल खोलकर हंसे।
तिब्बती नज़रों से ओझल हो जाने पर, चंदेन सिंह और मैंने अपना स्वाभिमान एक तरफ रखकर मानसिंह की मदद से सूखी खजूरें, खुबानी, चूरा के टुकड़े, मक्खन और गुरम इकट्ठा किए। फिर, अपने याकों पर सामान लादकर हम आगे बढ़ गए।

अध्याय पंद्रह

तिब्बती सैनिकों ने उनका पीछा किया

हमारी किस्मत अच्छी नहीं थी। सुबह से ही मौसम तूफानी बना रहा और दोपहर में फिर से मूसलाधार बारिश होने लगी। हम नीरस और उबाऊ धूसर इलाके से गुज़रे। दक्षिण-पश्चिम से उत्तर-पूर्व तक बर्फ से ढकी चोटियों की एक श्रृंखला फैली हुई थी। हमने एक काफी गहरी और ठंडी नदी को पार किया और उसके बाद 17,450 फीट ऊंचे दर्रे पर चढ़ाई की। कई तिब्बती लोग अपने हज़ारों भेड़ों के झुंड के साथ नज़र आए, लेकिन हम उनसे बचते रहे। उन्होंने हमें नहीं देखा।

जिस बिंदु पर हमने इसे पार किया, वहाँ मुख्य धारा एक सुंदर मोड़ बना रही थी। हम ऊबड़-खाबड़ और बंजर भूमि को पार करते हुए 17,550 फीट की ऊंचाई पर पहुँचे, जहाँ हमें कई छोटी-छोटी झीलें मिलीं। उस दिन मूसलाधार बारिश में साढ़े चौदह मील चलने के बाद, हम एक विशाल घाटी में उतरे। यहाँ हमें रात बिताने के लिए जगह ढूंढने में बहुत कठिनाई हुई। मैदान पूरी तरह से दलदल था, जिसमें कई झीलें और तालाब थे, और हम हर जगह कीचड़ और पानी में धंस रहे थे। हमारे सारे बिस्तर और कपड़े इतने भीग चुके थे कि हम जहाँ भी रुकते, कोई फर्क नहीं पड़ता था, इसलिए हमने अपना छोटा सा तंबू उत्तर की ओर घाटी को पार करने वाली एक धारा के किनारे लगा दिया। घाटी के साथ पूर्व दिशा में पिरामिड के आकार के पहाड़ों की एक श्रृंखला फैली हुई थी, जो बर्फ से ढके हुए थे और लगभग समान ऊंचाई के थे। दक्षिण में बर्फ से ढकी ऊँची चोटियाँ थीं। जिस घाटी में हमने डेरा डाला था, वह 17,450 फीट की ऊंचाई पर थी। ठंड बहुत तेज थी।

रात में मूसलाधार बारिश हुई और हमारा तंबू हमें नाममात्र की ही पनाह दे पाया। हम पानी में डूबे हुए थे। दुनिया की सारी खाइयाँ भी पानी को हमारे तंबू में घुसने से नहीं रोक सकती थीं। सच कहें तो, यह कहना कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी कि पूरी घाटी एक से कई इंच गहरे पानी की चादर से ढकी हुई थी। ज़ाहिर है, हमें कड़ाके की ठंड लग रही थी, रात 8 बजे थर्मामीटर 26 डिग्री सेल्सियस तक गिर गया, तभी दक्षिण-पूर्व से तेज़ हवा चलने लगी। कुछ देर तक ओले के साथ बारिश हुई और उसके बाद भारी बर्फ़ीला तूफ़ान आ गया। हम जमे हुए पानी पर न लेटने के लिए अपने सामान के ऊपर दुबक कर लेट गए। सुबह जब हम उठे तो बर्फ़ के भार के कारण हमारा तंबू आधा ढह चुका था। दिन भर तापमान बढ़ता गया और फिर से बारिश होने लगी, जिससे जब हमने दोबारा चलना शुरू किया तो हम कई इंच गहरे कीचड़, बर्फ़ और पानी के मिश्रण में धंस गए। हमें तीन नदियों को पार करना था और विभिन्न आकारों की पांच झीलों के किनारे से होकर गुजरना था।

सात मील की इस उबाऊ पैदल यात्रा के बाद हम 17,500 फीट ऊँची एक शंकु के आकार की पहाड़ी की तलहटी में (17,380 फीट की ऊँचाई पर) डेरा डाले हुए थे, जहाँ पिछली रात के अनुभव की लगभग हूबहू पुनरावृत्ति हुई। थर्मामीटर 32 डिग्री सेल्सियस पर था, लेकिन सौभाग्य से शाम आठ बजे हवा थम गई।

किस्मत से अगले दिन सूरज निकल आया और हम अपना सारा सामान सुखाने के लिए फैला सके। हमें एक और अनोखा अनुभव प्राप्त हुआ।

हमारे दोनों याक गायब हो गए थे। मैं शिविर के ऊपर पहाड़ी की चोटी पर चढ़ गया और अपनी दूरबीन से मैदान का जायजा लिया। दोनों जानवर कुछ दूरी पर थे, जिन्हें दस-बारह घुड़सवार आदमी ले जा रहे थे, जो अपने आगे लगभग पाँच सौ भेड़ों का झुंड हांक रहे थे। उनके कपड़ों से मैंने अजनबियों को लुटेरा समझ लिया। स्वाभाविक रूप से मैं तुरंत अपना सामान वापस लेने के लिए निकल पड़ा, चंदन सिंह और मानसिंह को शिविर की जिम्मेदारी सौंपकर। मैंने उन्हें तब पकड़ा जब वे धीरे-धीरे चल रहे थे, हालांकि, मुझे देखते ही वे भागने की कोशिश में तेजी से आगे बढ़े। मैंने उन्हें तीन बार रुकने के लिए कहा, लेकिन उन्होंने मेरी बात नहीं मानी। मैंने अपनी राइफल निकाली और अगर सिर्फ धमकी ही उन्हें रोकने के लिए काफी न होती तो मैं उन पर गोली चला देता। वे रुक गए। जब मैं उनके काफी करीब पहुँच गया तो मैंने अपने दोनों याक वापस मांगे। उन्होंने उन्हें देने से इनकार कर दिया। उन्होंने कहा कि वे बारह आदमी हैं और एक से नहीं डरते। अपने टट्टुओं से उतरकर वे मुझ पर हमला करने के लिए तैयार लग रहे थे।
जब मैंने उन्हें अपनी माचिस की बत्ती जलाने के लिए चकमक पत्थर और इस्पात निकालते देखा, तो मैंने सोचा कि क्यों न मैं भी पहले अपना वार करूँ। इससे पहले कि वे मेरे इरादे को समझ पाते, मैंने अपने सबसे नज़दीक खड़े आदमी के पेट पर राइफल की नली से ज़ोरदार प्रहार किया। वह गिर पड़ा, और उसी समय मैंने एक और आदमी की दाहिनी कनपटी पर वार किया, जिसने अपनी माचिस को पैरों के बीच दबा रखा था और माचिस की तीलियों में आग लगाने के लिए चकमक पत्थर रगड़ने ही वाला था। वह भी लड़खड़ाकर बेढंगे तरीके से गिर पड़ा।
"चकज़ल, चकज़ल! चकज़ल वोर्ट्ज़िए!" (हम आपको सलाम करते हैं, हम आपको सलाम करते हैं! कृपया सुनिए!) तीसरे डाकू ने निराशा भरे भाव से कहा और आत्मसमर्पण के संकेत में अपनी मुट्ठी बंद करके अंगूठे ऊपर उठाए।
"चकज़ल!" (मैं आपको सलाम करता हूँ!) मैंने मैनलिचर राइफल में कारतूस डालते हुए जवाब दिया।
"नहीं, नहीं!" उन्होंने विनती की और तुरंत अपने हथियार डाल दिए।
मैंने इन लोगों से लगभग तीस पौंड त्साम्बा और आठ पौंड मक्खन खरीदा। मैंने उनमें से एक को सामान अपने शिविर तक ले जाने के लिए कहा, जबकि मैंने बिना किसी और परेशानी के अपने याक वापस ले लिए और उन्हें उस जगह ले गया जहाँ चंदेन सिंह और मानसिंह चाय बनाने के लिए आग जलाने में व्यस्त थे।
दोपहर होते-होते, जब धूप में हमारा सामान लगभग सूख चुका था, आसमान में बादल छा गए और फिर से तेज़ बारिश होने लगी। मैं दुविधा में था कि क्या मुझे पूर्व की ओर कुछ मील दूर स्थित दर्रे से होकर जाना चाहिए या नदी के मार्ग का अनुसरण करते हुए पहाड़ों की तलहटी से होकर जाना चाहिए। हमने बड़ी संख्या में तिब्बतियों को अपनी विपरीत दिशा में यात्रा करते देखा। जब हम उनके पास पहुँचे तो वे सभी भयभीत लग

रहे थे। हमने उनसे कुछ और पौंड भोजन प्राप्त किया, लेकिन उन्होंने हमें भेड़ें बेचने से इनकार कर दिया, जबकि उनके पास हजारों भेड़ें थीं। मैंने पहले बताए गए मार्ग से जाने का निर्णय लिया। पहले समतल पठार के एक हिस्से को पार करते हुए, फिर ऊबड़-खाबड़ ज़मीन पर चलते हुए, हम अपने सामने वाले दर्रे की तलहटी में स्थित दो छोटी झीलों तक पहुँचे। बर्फ पर चढ़ाई अपेक्षाकृत आसान थी। हमने नदी का अनुसरण किया, जो दर्रे से नीचे उतर रही थी। लगभग आधे रास्ते में, पीछे मुड़कर देखने पर, हमने आठ सैनिकों को हमारी ओर घोड़े दौड़ाते हुए देखा। हमने उनका इंतज़ार किया। जैसे ही वे हमारे पास आए, उन्होंने औपचारिक विनम्रतापूर्वक अभिवादन किया और अपने हथियार ज़मीन पर रख दिए, जिससे यह स्पष्ट हो गया कि उनका लड़ने का कोई इरादा नहीं है। इसके बाद एक लंबी, सौहार्दपूर्ण बातचीत हुई, जिसमें तिब्बतियों ने हमारे प्रति मित्रता का भाव व्यक्त किया और हर संभव तरीके से हमारी सहायता करने की इच्छा जताई। यह सब कुछ अविश्वसनीय लग रहा था। मुझे धोखे का संदेह हुआ, खासकर तब जब उन्होंने हमें अपने तम्बुओं में वापस जाने के लिए दबाव डाला और विनती की, जहाँ वे हमें अपने सम्मानित अतिथियों की तरह स्वागत करना चाहते थे। वे हमें हर संभव विलासिता से नवाज़ने का वादा कर रहे थे। ये विलासिताएँ चूरा, पनीर, मक्खन, याक का दूध और त्साम्बा के उपहार थे। उन्होंने कहा कि यदि हमें आवश्यकता हो तो वे हमें टट्टू भी बेच देंगे। वर्णन कुछ ज़्यादा ही बढ़ा-चढ़ाकर किया गया था। सभी बातों पर विचार करते हुए, और आम तौर पर तिब्बतियों की भाषा की अस्पष्टता को ध्यान में रखते हुए, मैंने उन्हें तहे दिल से धन्यवाद दिया और कहा कि मैं अपनी यात्रा जारी रखना और अपने वर्तमान कष्टों को सहना ही बेहतर समझता हूँ।

उन्हें यह समझ आ गया था कि मुझे पकड़ना आसान नहीं है। बल्कि, वे इसके लिए मेरा सम्मान करते थे। वास्तव में, वे इस बात पर आश्चर्य छिपा नहीं सके कि मैं केवल दो आदमियों के साथ उनके देश में इतनी दूर तक कैसे पहुँच गया था। अपने मेहमानों को कुछ छोटे उपहार देने के बाद, हम सौहार्दपूर्ण ढंग से विदा हुए।

हम दर्रे (18,480 फीट) तक चढ़ गए। हमारे सामने, दूसरी ओर, लगभग दो हज़ार फीट नीचे, एक विशाल समतल भूमि फैली हुई थी। मुझे एक झील दिखाई दी, जिसे मैंने गुनक्यो झील समझा। इसकी पुष्टि करने के लिए, मैंने अपने आदमियों और याकों को दर्रे पर ही छोड़ दिया और हमसे उत्तर-पूर्व में 19,000 फीट ऊँची एक चोटी से स्थिति का जायजा लेने चला गया। वहाँ बहुत बर्फ थी। चढ़ाई कठिन और थका देने वाली थी। जब मैं शिखर पर पहुँचा तो एक और ऊँची चोटी ने मेरे सामने का दृश्य रोक दिया, इसलिए पहले नीचे उतरकर और फिर ऊपर चढ़कर, मैं इस दूसरी चोटी पर चढ़ गया, अंततः 20,000 फीट की ऊँचाई पर पहुँचकर, मुझे चारों ओर के क्षेत्र का एक अच्छा विहंगम दृश्य प्राप्त हुआ। उत्तर में एक लंबी बर्फीली पर्वत श्रृंखला थी, और ठीक उसके नीचे मुझे पानी का एक विस्तार दिखाई दिया, जो उसके ठीक ऊपर बन रहे कोहरे और बादलों और पहाड़ों की निचली ढलानों पर उगी घास से अनुमान लगाया गया था।

मेरे रास्ते में एक पहाड़ी श्रृंखला खड़ी थी, जो झील को अपने पीछे छुपाने के लिए काफी ऊंची थी। मैं अपने साथियों के साथ मिल गया। गहरी, नरम बर्फ में धंसते हुए, हम दर्रे के दूसरी ओर नीचे की ओर बढ़ते रहे। हमने अपना तंबू नीचे के मैदान से लगभग पांच सौ फीट ऊपर एक जगह पर लगाया, जहाँ पहाड़ की ढलानें

आपस में सटी हुई थीं और एक गहरी खाई बना रही थीं। हालाँकि अब मुझे इतनी ऊँचाई पर रहने की आदत हो गई थी, फिर भी 20,000 फीट की चढ़ाई ने मुझे थका दिया था, और मुझे एक अच्छी रात की नींद की बहुत ज़रूरत थी।
मानसिंह और चंदेन सिंह ने भोजन कर लिया था और चैन से सो गए, लेकिन मैं उदास महसूस कर रहा था। मुझे एक अजीब सी बेचैनी थी और यह आशंका थी कि रात में हम पर कोई विपत्ति आ पड़ेगी।
हम तीनों अपने छोटे से तंबू के नीचे थे, तभी मुझे लगा कि बाहर कोई है। मुझे नहीं पता कि यह ख्याल मेरे मन में क्यों आया, क्योंकि मुझे कोई आवाज़ नहीं सुनाई दी, लेकिन फिर भी मुझे लगा कि मुझे खुद देखना चाहिए और अपनी जिज्ञासा शांत करनी चाहिए। मैंने राइफल हाथ में लिए तंबू से बाहर झाँका और देखा कि कई काली आकृतियाँ सावधानी से हमारी ओर रेंग रही हैं। पल भर में मैं नंगे पैर बाहर निकल आया और उनकी ओर दौड़ते हुए ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाया, "पिला तेदान तेदांग!" (सावधान रहो, सावधान रहो!) जिससे हमारे भूतिया आगंतुकों में भगदड़ मच गई। ऐसा लग रहा था कि उनमें से कई चट्टानों के पीछे छिपे हुए थे, क्योंकि जब उनमें दहशत फैली तो भागने वालों की संख्या उन प्रेतों की संख्या से दोगुनी या तिगुनी हो गई जिन्हें मैंने पहले आते देखा था। एक पल ऐसा लगा जैसे हर जगह से काले भूत निकल आए हों, लेकिन भूतों से भी ज़्यादा ठोस, वे अपने भारी जूतों से ज़ोरदार आवाज़ करते हुए तेज़ी से ढलान से नीचे और खाई से होते हुए भागे। वे पहाड़ी के नीचे पहुँचकर तेज़ी से मुड़े और गायब हो गए।
जब मैं दोबारा तंबू के अंदर रेंगकर गया तो चंदेन सिंह और मानसिंह, सिर समेत अपने कंबलों में लिपटे हुए, अभी भी खर्राटे ले रहे थे!
स्वाभाविक रूप से, उसके बाद मुझे रात भर नींद नहीं आई, इस डर से कि कहीं वे बिन बुलाए मेहमान फिर से न लौट आएं। हम अटकलें लगा रहे थे कि तिब्बतियों ने हमें कैसे ढूंढा होगा, और हम इस बात का अनुमान लगाने से खुद को रोक नहीं पाए कि पिछली दोपहर हमारे दोस्तों ने ही उन्हें हमारे बारे में बताया होगा। हालांकि, तिब्बतियों ने हर बार जिस तरह की अकल्पनीय कायरता दिखाई, उसके कारण हमने इन घटनाओं को कोई महत्व नहीं दिया। वास्तव में, स्थानीय लोगों से हमें बिल्कुल भी डर नहीं लगा। उनकी मुलाकातों में अब हमें कोई दिलचस्पी या उत्साह भी नहीं रह गया था।
हम हमेशा की तरह आगे बढ़ते हुए मैदान की ओर उतरने लगे। जब हम आधे रास्ते तक पहुँच गए, तो मैंने अपने दूरबीन से चारों ओर की पहाड़ियों को छान मारा ताकि पीछा करने वालों के कोई निशान मिल सकें।

“देखो, वे रहे!” चंदेन सिंह चिल्लाया, जिसकी दृष्टि मेरी जानकारी में सबसे अद्भुत थी। उसने एक पहाड़ी की चोटी की ओर इशारा किया, जहाँ चट्टानों के बीच से कई सिर झाँकते हुए दिखाई दे रहे थे। हमने उन पर ध्यान दिए बिना आगे बढ़ गए। फिर वे अपने छिपने की जगह से बाहर आए, और हमने उन्हें अपने टट्टुओं को साथ लेकर एक लंबी कतार में पहाड़ी से नीचे उतरते देखा। मैदान में पहुँचकर वे अपने घोड़ों पर सवार हुए और पूरी रफ्तार से हमारी ओर आए। गहरे लाल रंग के कोट, या भूरे और पीले रंग के चमड़े के वस्त्र और रंग-

बिरंगी टोपियों में वे बेहद आकर्षक लग रहे थे। कुछ ने सुनहरी कढ़ाई वाले चमकीले लाल कोट और चीनी टोपी पहन रखी थी। ये अधिकारी थे। सैनिकों की तोपें, जिनके डंडों पर लाल या सफेद झंडे लगे थे, बंजर पहाड़ियों और बर्फ के नीरस दृश्य में रंग भर रही थीं। घोड़ों की घंटियों की झंकार ने इन शांत, निर्जन क्षेत्रों की एकरसता को जीवंत कर दिया। तिब्बती सैनिक हमसे लगभग तीन सौ गज की दूरी पर अपने घोड़ों से उतरे। एक बूढ़ा व्यक्ति अपनी बंदूक और तलवार एक तरफ फेंककर लड़खड़ाते हुए हमारी ओर बढ़ा। हमने उसका गर्मजोशी से स्वागत किया। वह एक विचित्र व्यक्ति था, जिससे हमें बहुत मनोरंजन मिला।
“मैं तो बस एक संदेशवाहक हूँ,” उसने तुरंत कहा, “इसलिए अगर मैं आपसे बात करूँ तो मुझ पर अपना क्रोध मत बरसाइए। मैं तो बस अपने अधिकारियों की बात बता रहा हूँ, जो चोट लगने के डर से आने की हिम्मत नहीं कर रहे। ल्हासा में, जहाँ से हम आए हैं, खबर मिली है कि एक प्लेंकी (एक अंग्रेज) अपने कई आदमियों के साथ तिब्बत में है और कहीं नहीं मिल रहा है। हमें उसे पकड़ने के लिए भेजा गया है। क्या आप उसके अग्रिम दस्ते में से एक हैं?”

"नहीं," मैंने रूखेपन से जवाब दिया। "मुझे लगता है कि आपको ल्हासा से आने में कई महीने लग गए होंगे," मैंने अनभिज्ञता जताते हुए कहा।
"अरे नहीं! हमारे टट्टू अच्छे हैं," उसने उत्तर दिया, "और हम जल्दी आ गए हैं।"
तिब्बती ने बारह तक गिनती की, भौंहें चढ़ाते हुए और सिर को दाहिनी ओर झुकाए हुए, मानो अपने विचारों को इकट्ठा कर रहा हो। साथ ही, उसने अपना हाथ ऊपर उठाया, अंगूठा हथेली से सटाकर रखा और हर संख्या बोलते समय एक उंगली नीचे की ओर मोड़ दी। गिनती में अंगूठे का इस्तेमाल कभी नहीं किया जाता। उसने कहा, "हम बारह दिनों से रास्ते पर हैं। हमें आदेश मिला है कि जब तक हम प्लेंकी को पकड़ नहीं लेते, तब तक वापस नहीं लौटना है। और तुम?" उसने उत्सुकता से पूछा—"लद्दाख से आने में तुम्हें कितना समय लगा?"
उन्होंने कहा कि मेरे चेहरे से ही पता चल गया था कि मैं कश्मीर का मूल निवासी हूँ। शायद मैं इतना झुलसा हुआ और गंदा था कि मुझे मूल निवासी से अलग पहचानना मुश्किल था। उस बूढ़े व्यक्ति ने मुझसे पूछताछ की, यह जानने के लिए कि क्या मैं भारतीय सरकार द्वारा देश का सर्वेक्षण करने के लिए भेजा गया कोई मूल निवासी सर्वेक्षक हूँ, और मुझसे पूछा कि मैंने अपने मूल वस्त्रों को त्यागकर प्लेंकी (यूरोपीय) वस्त्र क्यों पहन लिए हैं। उन्होंने बार-बार पूछा कि क्या मैं प्लेंकी दल का सदस्य तो नहीं हूँ।
"Keran ga naddo ung?" (तुम कहाँ जा रहे हो?) उसने पूछा।
"Nhgarang ne koroun Lama jehlhuong " (मैं एक तीर्थयात्री हूँ, मठों का दौरा करने जा रहा हूँ)।
"Keran mi japodu " (आप एक अच्छे आदमी हैं)।

उन्होंने मुझे गुंक्यो झील का रास्ता दिखाने की पेशकश की और इतना ज़ोर दिया कि मैंने मान लिया। जब मैंने दो सौ सैनिकों को घोड़ों पर सवार होकर हमारे पीछे आते देखा, तो मैंने उनसे कहा कि अगर हमें मित्रता निभानी है तो हमें अपने साथ सेना की सुरक्षा की ज़रूरत नहीं है।
मैंने उसे समझाया, "अगर तुम हमारे मित्र हो, तो अकेले आ सकते हो, और हम तुम्हें कोई नुकसान नहीं पहुँचाएँगे। लेकिन अगर तुम हमारे शत्रु हो, तो हम तुमसे और तुम्हारी सेना से यहीं तुरंत लड़ेंगे, और तुम्हें आगे आने की परेशानी से बचा लेंगे।"
तिब्बती व्यक्ति, भ्रमित और हिचकिचाता हुआ, अपने आदमियों से बातचीत करने चला गया और कुछ समय बाद उनमें से आठ के साथ लौटा, जबकि उसकी अधिकांश सेना विपरीत दिशा में घोड़ों पर सवार होकर भाग गई।
हम मैदानी इलाके को पार करते हुए एक पहाड़ी श्रृंखला तक पहुँचे, जिसे हमने 17,450 फीट ऊँचे दर्रे से पार किया। फिर, अपना रास्ता बदलते हुए, हम कई पहाड़ियों से नीचे उतरे और ऊपर चढ़े, और अंत में दक्षिण-पूर्व से उत्तर-पश्चिम तक फैले विशाल गुंक्यो झील की सुरक्षित घासीली घाटी में पहुँच गए। शाम 8:30 बजे, तापमान मापने वाले यंत्र में पानी 68° फ़ारेनहाइट था और 183° 3-1/2' पर उबल रहा था। झील बेहद खूबसूरत थी, जिसके पानी से ऊँचे बर्फीले गंगरी पर्वत लगभग सीधे ऊपर उठते हुए दिखाई दे रहे थे। दक्षिणी किनारे पर ऊँची पहाड़ियाँ एक जंगली और मनोरम पृष्ठभूमि बना रही थीं, लेकिन वे बेहद बंजर और वीरान थीं। झील के दूसरे छोर पर, उत्तर-पश्चिम में, पानी के किनारे-किनारे नीची पहाड़ियाँ थीं।
हमने 16,455 फीट की ऊंचाई पर डेरा डाला। तिब्बती सैनिकों ने अपना तंबू लगभग पचास गज दूर लगाया।

शाम के समय तिब्बती लोग मेरे शिविर में आए और मेरी मदद करने लगे। उन्होंने ईंधन लाने में हमारी सहायता की और मेरे लिए तिब्बती रीति से चाय बनाई। वे लामाओं से घृणा करते थे, जो देश के शासक थे, और उन्हें ऐसे अपशब्द कहने में उन्हें विशेष आनंद आता था जिन्हें इन पृष्ठों में दोहराना असंभव है। उनके अनुसार, लामा देश में आने वाला सारा धन ले लेते थे और किसी और को कुछ भी रखने की अनुमति नहीं थी। वे बेईमान, क्रूर और अन्यायपूर्ण थे। उन्होंने कहा कि तिब्बत में हर आदमी आवश्यकता पड़ने पर सिपाही होता है, और हर कोई लामाओं का सेवक होता है। नियमित सेना के सैनिकों को त्साम्बा (चाय की ईंटें) और मक्खन की एक निश्चित मात्रा मिलती थी, लेकिन कोई पैसा नहीं। आमतौर पर उन्हें सवारी के लिए टट्टू दिए जाते थे। ड्यूटी पर यात्रा करते समय उन्हें डाकघरों और गांवों में जानवरों की फेरी प्राप्त करने का अधिकार था, और उन्हें अगले शिविर तक ले जाने के लिए भोजन, काठी या अन्य किसी भी आवश्यक वस्तु की आपूर्ति का दावा करने का भी अधिकार था। हथियार (तलवार और बंदूक) आम तौर पर पुरुषों के अपने होते थे, लेकिन कभी-कभी, ल्हासा और सिगात्ज़ जैसे बड़े शहरों में, लामा उन्हें उपलब्ध कराते थे। बारूद और गोलियां अधिकारियों द्वारा दी जाती थीं। हथियार ज्यादातर ल्हासा और सिगात्ज़ में बनाए जाते थे। हालांकि तिब्बती अपनी बंदूकों से निशानेबाजी में बड़ी सटीकता का दावा करते थे, जिनमें निशानेबाज को स्थिर

निशाना लगाने में मदद करने के लिए लकड़ी के सहारे लगे होते थे, मैंने देश के सर्वश्रेष्ठ निशानेबाजों को भी कभी निशाने पर लगते नहीं देखा। खेल के लिए और पैसे बचाने के लिए, तिब्बती सैनिक शायद ही कभी सीसे की गोलियों का इस्तेमाल करते थे, बल्कि वे अपनी बंदूकों की नली में कंकड़ भरना पसंद करते थे। बारूद इतना दुर्लभ था कि वे शायद ही कभी निशाने पर निशाना लगाने का अभ्यास करते थे।

सूर्योदय के समय गुंक्यो का नजारा बेहद खूबसूरत था, बर्फ से ढके पहाड़ सुनहरे और लाल रंग में रंगे हुए थे, और झील के शांत पानी में उनकी छोटी से छोटी झलक भी दिखाई दे रही थी।

हमने अपने याकों को लादा, तिब्बतियों ने हमारी मदद की, और हम मैयुम दर्रे की ओर चल पड़े, उस नदी का अनुसरण करते हुए जो अंततः गुंक्यो झील में गिरती है।

घाटी संकरी थी और उसमें कई तीखे मोड़ थे। ऊँचाई अधिक होने के बावजूद, घास बहुतायत में थी। बर्फ, लाल बंजर पहाड़ों और रेगिस्तानी इलाकों को देखकर हम थक चुके थे, इसलिए हरी घास आँखों को बहुत सुकून दे रही थी। हम एक ऐसे स्थान पर पहुँचे जहाँ नदी के दूसरी ओर पत्थरों की ऊँची दीवार वाला एक बड़ा तिब्बती शिविर स्थल था। उसके पीछे से धुआँ उठता दिखाई दिया, जिससे मुझे संदेह हुआ कि वहाँ कुछ लोग छिपे हुए हैं।

हमारे तिब्बती दोस्तों ने पूछा कि हमारा इरादा क्या है, और मुझसे बातचीत करने और चाय पीने के लिए रुकने का आग्रह किया। मैंने कहा कि मैंने दोनों का भरपूर आनंद ले लिया है, और मैं आगे बढ़ूंगा।

"अगर तुम आगे बढ़ते रहे तो हम तुम्हें मार डालेंगे!" एक सैनिक ने गुस्से में आकर चिल्लाते हुए कहा, और उसने हमारे द्वारा उसके और उसके साथियों के प्रति दिखाई गई विनम्रता का फायदा उठाया।

"Nga samgi ganta indah " (यदि आप चाहें), मैंने जानबूझकर विनम्रता से उत्तर दिया।

"अगर तुम एक कदम भी आगे बढ़े तो हम तुम्हारा सिर काट देंगे, या तुम्हें हमारा सिर काटना पड़ेगा!" दो-तीन अन्य लोगों ने अपनी नंगी गर्दनें मेरी ओर बढ़ाते हुए चिल्लाकर कहा।

"तप्तिह मिद्दू" (मेरे पास छोटी छुरी नहीं है), मैंने काफी गंभीरता से और दिखावटी निराशा के साथ जवाब दिया, और तिब्बती शैली में हवा में अपना हाथ घुमाया।

तिब्बती लोग समझ नहीं पा रहे थे कि मैं क्या कर रहा हूँ। जब मैं उस दर्रे की ओर बढ़ा, जहाँ सैकड़ों उड़ती हुई प्रार्थनाएँ हवा में लहरा रही थीं, तो मैंने जीभ बाहर निकालकर और दोनों हाथों की हथेलियाँ ऊपर की ओर करके, सबसे स्वीकृत तिब्बती शैली में उन्हें विनम्रतापूर्वक विदाई दी। सैनिकों ने अपनी टोपियाँ उतार दीं और घुटनों के बल बैठकर और सिर ज़मीन के करीब लाकर विनम्रतापूर्वक हमें प्रणाम किया।

हमने मैदान पार किया और धीरे-धीरे दर्रे की ओर बढ़ने लगे। शिखर के पास पहुँचकर हम एक पगडंडी पर पहुँचे, जो लद्दाख से ल्हासा तक गारटोक होते हुए जाने वाला राजमार्ग था, और यह रकास्टाल, मानसरोवार और गुंक्यो झीलों के उत्तरी किनारे से होकर गुजरता था। दर्रे पर रस्सियों से जुड़े कई खंभे लगाए गए थे, जिन पर उड़ती हुई प्रार्थनाएँ हवा में लहरा रही थीं। पत्थरों के टीले, जिन्हें ओबोस कहा जाता है, बनाए गए थे। इन ओबोस के निर्माण में इस्तेमाल की गई शिलाएँ अधिकतर सफेद थीं, और कई जगहों पर उन पर "ओम्ने मणि

पद्मे हुन" लिखा हुआ था। ओबोस के किनारे याक, बकरी और भेड़ की खोपड़ियाँ रखी थीं, जिन पर उपरोक्त चार शब्द खुदे हुए थे और मारे गए जानवरों के खून से लाल हो गए थे।

तिब्बती लोग ऊंचे दर्रों को पार करते समय बलि चढ़ाते हैं, विशेषकर यदि कोई लामा आस-पास मौजूद हो तो। बलि दिए गए जानवर का मांस उपस्थित लोग खाते हैं। यदि दल बड़ा हो तो भोज के बाद नृत्य और गायन होता है। ओबो (पवित्र दर्रे) पूरे देश में पाए जाते हैं, आमतौर पर दर्रों या पहाड़ियों की चोटियों पर। कोई भी तिब्बती इन ओबो में से किसी एक पर सफेद पत्थर रखे बिना नहीं जाता।

अध्याय सोलह

पवित्र प्रांत में प्रवेश करने वाला पहला श्वेत व्यक्ति

मैयुम दर्रा (17,500 फीट), जहाँ तक आज तक कोई भी श्वेत व्यक्ति नहीं पहुँच पाया था, तिब्बत का एक महत्वपूर्ण स्थल है। न केवल इसकी दक्षिण-पूर्वी ढलानों पर महान त्सांगपु या ब्रह्मपुत्र नदी का एक स्रोत है, बल्कि यह विशाल नारी-खोरसुम प्रांत (जो मैयुम दर्रे के पश्चिम में फैला हुआ है और लद्दाख तक के पर्वतीय और झीलीय क्षेत्र को समाहित करता है) को युत्ज़ांग प्रांत से अलग करता है, जो तिब्बत का मध्य प्रांत है और ब्रह्मपुत्र घाटी के साथ दर्रे के पूर्व में फैला हुआ है और जिसकी राजधानी ल्हासा है। तिब्बती भाषा में 'यु' शब्द का अर्थ "मध्य" होता है। यह इस प्रांत के लिए प्रयोग किया जाता है क्योंकि यह तिब्बत के केंद्र में स्थित है। मैयुम के उत्तर में डोकटोल प्रांत स्थित है।

मैं उत्तर-पूर्व में स्थित एक अन्य दर्रे की खोजबीन करने गया था और जैसे ही मैं मैयुम दर्रे पर अपने साथियों के पास लौटा, तभी हमारे पीछे छोड़े गए कुछ तिब्बती सैनिक हमारी ओर घोड़े पर सवार होकर आ गए। हमने उनका इंतज़ार किया। उनके नेता ने दर्रे के उस पार घाटी की ओर इशारा करते हुए कहा: "वह सामने ल्हासा का इलाका है, और हम तुम्हें उसमें प्रवेश करने से मना करते हैं!"

मैंने उसके विरोध पर कोई ध्यान नहीं दिया, और अपने आगे दो याकों को हांकते हुए, मैं सभी पवित्र प्रांतों में सबसे पवित्र स्थान में प्रवेश कर गया—जिसे वे "ईश्वर की भूमि" कहते हैं।

हम दर्रे के पूर्वी किनारे पर तेज़ी से नीचे उतरे, जबकि सैनिक भयभीत होकर हमें देखते रहे। आसमान की ओर पेड़ों के बीच खड़े वे बेहद खूबसूरत लग रहे थे, सूरज की रोशनी उनकी रत्नजड़ित तलवारों और उनकी बंदूकों पर लगे चमकीले लाल झंडों पर पड़ रही थी। उनके सिर के ऊपर उड़ती हुई प्रार्थनाओं की मालाएँ हवा में लहरा रही थीं। कुछ देर हमें देखने के बाद वे गायब हो गए।

जिस घाटी में हम चल रहे थे, उसके मध्य में पत्थरों के बीच से एक छोटी सी, मुश्किल से छह इंच चौड़ी, धारा बह रही थी, और जल्द ही दोनों ओर के पहाड़ों की पिघलती बर्फ से निकलने वाली अन्य धाराओं के पानी से भर गई। यह विश्व की सबसे बड़ी नदियों में से एक, महान ब्रह्मपुत्र नदी का एक स्रोत था। मुझे यह स्वीकार करना होगा कि इन स्रोतों तक पहुँचने वाला पहला श्वेत व्यक्ति होने पर मुझे कुछ गर्व महसूस हुआ, और इस पवित्र धारा के ऊपर खड़े होने में एक तरह का बचकाना आनंद था, जो नीचे इतनी विशाल चौड़ाई की है कि यहाँ एक व्यक्ति अपने पैरों को थोड़ा फैलाकर खड़े होकर इसे पार कर सकता है। हमने इसके उद्गम स्थल पर इसका जल पिया, और फिर दक्षिण-पूर्व की ओर एक चिह्नित मार्ग का अनुसरण करते हुए, घास से भरी घाटी में एक हल्की ढलान पर नीचे उतरना जारी रखा।

मैयम दर्रे के पश्चिम और दक्षिण-पूर्व किनारों के बीच जलवायु परिवर्तन असाधारण था। पश्चिमी किनारे पर हमें ओले, बारिश और बर्फ के भयंकर तूफानों के अलावा कुछ नहीं मिला, हवा में नमी के कारण दिन में भी

वातावरण ठंडा रहता था। मिट्टी असामान्य रूप से दलदली थी, और ईंधन या घास बहुत कम मात्रा में उपलब्ध थी। दर्रा पार करते ही हम एक सुहावने, सुखद मौसम में पहुँच गए, और हमारे ऊपर एक सुंदर गहरा नीला आकाश था। हमें अपने याकों के लिए भरपूर घास और आग जलाने के लिए छोटी झाड़ियाँ मिलीं। अपने सभी कष्टों और अभावों के बाद, हमें लगा कि हम सचमुच ईश्वर की भूमि में प्रवेश कर चुके हैं। मुझे देर-सवेर बड़ी मुसीबतों का सामना करना पड़ सकता था, लेकिन मुझे इस बात का कोई अफसोस नहीं था कि मैंने सैनिकों के आदेशों का उल्लंघन किया और सीधे उस निषिद्ध भूमि के सबसे वर्जित क्षेत्र में प्रवेश कर लिया।
निषिद्ध कार्य करने में हमेशा एक प्रकार का संतोष मिलता है।
ब्रह्मपुत्र नदी में हमारे दोनों ओर स्थित खड़ी पर्वतों से बर्फ से पोषित तीन छोटी सहायक नदियाँ आकर मिलती हैं। जहाँ मुख्य धारा अचानक दक्षिण की ओर मुड़ती है, वहाँ एक चौथी और महत्वपूर्ण सहायक नदी, जो बड़ी मात्रा में जल धारण करती है, उत्तर-उत्तर-पूर्व से एक दर्रे से होकर नीचे आती है।
हमने इन नदियों के संगम के पास, मुख्य धारा के दाहिने किनारे पर, 16,620 फीट की ऊंचाई पर डेरा डाला। मैयम दर्रे से गंगरी पर्वत श्रृंखला का विस्तार पहले दक्षिण-पूर्व दिशा में, फिर सीधे पूर्व की ओर, हिमालय की दक्षिणी उच्च श्रृंखला के लगभग समानांतर फैला हुआ था। इन दोनों श्रृंखलाओं के बीच एक विस्तृत मैदान था जिसे ब्रह्मपुत्र नदी काटती थी। नदी के दक्षिणी किनारे पर नदी के प्रवाह और राजसी बर्फीली चोटियों की विशाल श्रृंखला के बीच छोटी-छोटी पहाड़ी श्रृंखलाएँ थीं। हालाँकि ब्रह्मपुत्र के उत्तर में स्थित श्रृंखला में कोई महत्वपूर्ण ऊँचाई वाली चोटियाँ नहीं थीं, फिर भी यह भौगोलिक दृष्टि से महत्वपूर्ण थी, क्योंकि इसकी दक्षिणी ढलानें ल्हासा तक पवित्र नदी के उत्तरी जलविभाजक का निर्माण करती थीं।
इन दो समानांतर पर्वत श्रृंखलाओं के बीच स्थित घाटी तिब्बत का सबसे घनी आबादी वाला हिस्सा था। घास प्रचुर मात्रा में थी और ईंधन आसानी से उपलब्ध था। ब्रह्मपुत्र और उसकी प्रमुख सहायक नदियों के किनारे बने कई तिब्बती शिविरों के पास हजारों याक, भेड़ और बकरियां चरती हुई देखी जा सकती थीं। लद्दाख से ल्हासा जाने वाले कारवां का व्यापार मार्ग इसी घाटी से होकर गुजरता था। चूंकि मैं तिब्बतियों को देखने और उनका अध्ययन करने के लिए तिब्बत आया था, इसलिए मैंने सोचा कि भले ही मुझे अधिक जोखिम उठाना पड़े, लेकिन देश के किसी भी हिस्से में इस घनी आबादी वाले मार्ग से होकर जाने से बेहतर तरीके से मैं अपना उद्देश्य पूरा नहीं कर सकता।
हमें बहुत कम नींद आई। हमें आशंका थी कि सैनिक रात में हम पर हमला करके हमारी प्रगति रोकने की कोशिश करेंगे, लेकिन सब शांत रहा और कुछ नहीं हुआ। हमारे याक छूट गए और सुबह उन्हें वापस लाने में हमें काफी मशक्कत करनी पड़ी। वे नदी पार करके लगभग एक मील दूर दूसरी तरफ चले गए थे।
रात बहुत ठंडी थी, तापमान गिरकर 32-1/2 डिग्री तक पहुँच गया था। हमने अपना छोटा सा तंबू नहीं लगाया, क्योंकि हम हमले की स्थिति में तैयार रहना चाहते थे। पिछले दिन की लंबी पैदल यात्रा के बाद हम थके हुए और ठंड से कांप रहे थे। दक्षिण-पश्चिम दिशा से हल्की हवा चल रही थी। नदी पार करना, याकों का

पीछा करना और उन्हें शिविर तक वापस लाना बहुत मेहनत का काम था; फिर, इतनी थकी हुई हालत में, उन पर बोझ लादना भी मुश्किल था।

हम दाहिने किनारे पर धारा के साथ-साथ चलते रहे। यह बंजर पहाड़ियों के बीच से होकर बहती हुई, आगे चलकर लगभग पौने मील चौड़ी और डेढ़ मील लंबी घास की घाटी से गुज़री। फिर यह एक संकरे रास्ते से होते हुए दो मील चौड़ी लहरदार घास की घाटी में आगे बढ़ी। हम एक भयंकर आंधी-तूफान में फंस गए, जिसमें ओले और बारिश हो रही थी। यह एक कष्टदायक अनुभव था। अब हम ब्रह्मपुत्र की एक बड़ी सहायक नदी के सामने थे। धारा इतनी उफनती, तेज़ और गहरी थी कि मैं बहुत परेशान था कि अपने आदमियों को नदी पार कैसे कराऊँ। वे तैरना नहीं जानते थे, और पानी इतना ठंडा था कि उसमें डुबकी लगाने से उन्हें ज़ोर का झटका लग सकता था। समय बर्बाद करने का कोई समय नहीं था। नदी का जलस्तर स्पष्ट रूप से बढ़ रहा था, और तूफान के और भी भयंकर होने के साथ-साथ मुश्किलें हर पल बढ़ती जा रही थीं। हमने अपने कपड़े उतार दिए और उन्हें अपनी राइफलों आदि के साथ याकों की पीठ पर लाद दिया, जिन्हें हमने पानी में छोड़ दिया। ये जानवर अच्छे तैराक थे। धारा उन्हें सौ गज से भी अधिक दूर बहा ले गई, लेकिन हमारी तसल्ली के लिए वे किसी तरह पानी से निकलकर दूसरे किनारे पर पहुँच गए। चंदन सिंह और मानसिंह को मेरी तैराकी पर पूरा भरोसा था, लेकिन जब मैंने उनका हाथ पकड़कर उन्हें नदी में उतारा, तो उन्हें लगा जैसे उनका अंत आ गया हो। हम मुश्किल से बारह गज ही आगे बढ़े थे कि पानी हमारे गले तक आ गया और जो होना था वही हुआ। हम तीनों बह गए। घबराहट में चंदन सिंह और मानसिंह ने मेरी बाहों को कसकर पकड़ लिया और मुझे पानी में खींच लिया। मैंने अपने पैरों से पूरी ताकत लगाकर तैरने की कोशिश की। हम कई बार पानी की सतह पर आए और फिर अपने बेबस साथियों के भारी वजन के कारण डूब गए। आखिरकार, एक भीषण संघर्ष के बाद, धारा हमें दूसरे किनारे पर ले आई, जहाँ हम जल्दी से उस खतरनाक नदी से बाहर निकल आए। हम उस जगह से लगभग दो सौ गज नीचे बह रहे थे जहाँ से हमने नदी में प्रवेश किया था, और हमने इतना गंदा पानी पी लिया था कि हम तीनों बीमार पड़ गए। इससे हम बुरी तरह थक गए। तूफान के थमने का कोई आसार नहीं दिख रहा था, इसलिए हमने नदी के बाएं किनारे पर, 16,320 फीट की ऊंचाई पर, वहीं डेरा डाल दिया। हमें गर्म भोजन की सख्त जरूरत थी, लेकिन मूसलाधार बारिश में आग जलाना नामुमकिन था। उस रात मैंने सिर्फ एक चॉकलेट खाई। मेरे साथियों ने यूरोपियों के हाथों बना खाना खाकर अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा भंग करने के बजाय कुछ न खाना ही बेहतर समझा।

हम अपने छोटे से तंबू में सो रहे थे, रात के लगभग ग्यारह बज रहे थे, तभी बाहर से आवाज़ें आईं, जैसे कोई बोल रहा हो और पत्थरों से टकरा रहा हो। मैं तुरंत अपनी राइफल लेकर बाहर निकला और हमेशा की तरह "पालाडो!" (दूर चले जाओ!) चिल्लाया। अंधेरे के कारण मुझे कुछ दिखाई नहीं दे रहा था, लेकिन गुलेल से फेंके गए कई पत्थर मेरे पास से तेज़ी से गुज़रे। उनमें से एक तंबू से टकराया। एक कुत्ता ज़ोर से भौंका। मैंने एक गोली चलाई, जिसका अच्छा असर हुआ और हमारे दुश्मन जल्दी से पीछे हट गए। कुत्ता पूरी रात भौंकता रहा। सुबह जब मैंने उसे खाना दिया और तिब्बती तरीके से प्यार से "चोचू, चोचू" कहकर सहलाया, तो वह

मेरे पैरों से ऐसे लिपट गया जैसे मुझे जन्म से जानता हो, और आखिरकार मानसिंह के पास लेट गया, जिससे उसे खास लगाव हो गया था। उस दिन से कुत्ता कभी हमारे शिविर से दूर नहीं गया और हमारे साथ हर जगह जाता रहा, जब तक कि हम पर मुश्किल समय नहीं आ गया।

नदी दक्षिण की ओर बहुत अधिक मुड़ रही थी। मैंने इसे छोड़कर सीधे पहाड़ी रास्ते से जाने का फैसला किया, खासकर इसलिए क्योंकि हमारे शिविर के पूर्व-दक्षिण-पूर्व में एक दर्रे की ओर जाने वाले एक रास्ते के धुंधले निशान दिखाई दे रहे थे। मैंने उस रास्ते का अनुसरण किया। उस पर मुझे सैकड़ों टट्टुओं के खुरों के निशान दिखाई दिए, जो अब लगभग पूरी तरह से मिट चुके थे। जाहिर तौर पर यही वह रास्ता था जो उन सैनिकों ने अपनाया था जिनसे हम मैयम दर्रे के दूसरी ओर मिले थे।

17,750 फीट ऊंचे दर्रे को पार करने के बाद, हमारे सामने बंजर पहाड़ियों से भरी एक विशाल घाटी दिखाई दी। दक्षिण की ओर लगभग दस मील चौड़ा एक बड़ा मैदान दिखाई दिया, जिसके दूसरी ओर बर्फ से ढकी चोटियाँ थीं। सामने एक पहाड़ी और एक मणि दीवार थी। इस दृश्य को देखकर मुझे पूरा विश्वास हो गया कि मैं ल्हासा जाने वाले मुख्य मार्ग पर हूँ। उत्तर-उत्तर-पश्चिम दिशा में लगभग आठ मील दूर ऊँची बर्फ से ढकी चोटियाँ थीं, और जैसे-जैसे हम आगे बढ़ते गए, हमें तीन मील पीछे एक विशाल पर्वत श्रृंखला दिखाई दी, जिसके पीछे और भी ऊँची चोटियाँ थीं। हम पानी रहित मैदान के आधे रास्ते तक पहुँच चुके थे कि हमने दूर की एक पहाड़ी के पीछे से कई सैनिकों के सिर और बंदूकें निकलते-निकलते देखीं। थोड़ी देर बाद वे हमारी गतिविधियों पर नज़र रखने के लिए बड़ी संख्या में बाहर आए, फिर पहाड़ी के पीछे वापस चले गए। हम आगे बढ़े। जब हम उनसे आधा मील दूर थे, तब उन्होंने अपना छिपने का स्थान छोड़ दिया और धूल उड़ाते हुए हमारे सामने से सरपट भाग गए। 16,200 फीट ऊँची एक पहाड़ी से, जिसके ऊपर से पगडंडी गुज़रती थी, हमें लगभग आठ मील दूर बर्फ से ढकी ऊँची चोटियों का एक समूह दिखाई दिया। उनके और हमारे बीच पहाड़ियों की एक श्रृंखला थी, जिसे एक घाटी काटती थी, जिसके किनारे एक नदी बह रही थी जिसमें बहुत सारा पानी था। हम उसी नदी के किनारे-किनारे चले और एक उपयुक्त स्थान पर उसे पार किया जहाँ नदी 25 गज चौड़ी थी। पानी हमारी कमर तक था। यहाँ हमें पत्थरों पर बड़े-बड़े शिलालेखों वाली एक और मणि दीवार मिली। हवा तेज़ और चुभने वाली थी, इसलिए हमने रात के लिए दीवार को आश्रय के रूप में इस्तेमाल किया। हम दूर बर्फ से ढकी हिमालय श्रृंखला देख सकते थे। निचली पहाड़ी श्रृंखलाएँ शिविर से तीन मील से अधिक दूर नहीं थीं। जिस नदी को हमने अभी पार किया था, वह ब्रह्मपुत्र में मिल जाती थी। हम 15,700 फीट की ऊँचाई पर थे। सूर्यास्त के समय हमें अपने सामने कई काले तंबू स्पष्ट रूप से दिखाई दिए। हमने लगभग साठ तंबू गिने और अनुमान लगाया कि वे दो मील दूर थे। उनके पास सैकड़ों काले याक थे।

अगली सुबह सूर्योदय के समय, हमें अत्यंत आश्चर्य हुआ कि तंबू और याक गायब हो चुके थे; और जिस दिशा में हमने उन्हें पिछली रात देखा था, उस दिशा में आगे बढ़ने पर भी हमें उनका कोई निशान नहीं मिला। यह मृगतृष्णा का प्रभाव रहा होगा। लगभग चौदह मील दूर, उत्तर-पश्चिम से दक्षिण-पूर्व तक फैली पर्वत श्रृंखला की तलहटी में स्थित एक घास के मैदान में, जहाँ 72° (चुंबकीय दिशा) पर ऊँची बर्फीली चोटियाँ थीं, हमें

अस्सी से अधिक काले तंबुओं वाला एक बहुत बड़ा तिब्बती शिविर मिला। उस समय हम 15,650 फीट की ऊँचाई पर थे। तंबू ब्रह्मपुत्र की एक अन्य सहायक नदी के किनारे लगे हुए थे, जो मैदान में एक चौड़ा मोड़ लेने के बाद शिविर के पश्चिम से होकर गुजरती थी। उत्तर-पश्चिम, उत्तर और उत्तर-पूर्व में पर्वतों की वह श्रृंखला थी जिसे मैंने पूरे रास्ते देखा था। इसकी चोटियों की ऊँचाई धीरे-धीरे कम होती गई, इतनी कम कि इसे "पर्वत श्रृंखला" कहना अधिक उचित होता, बशर्ते उस पठार की ऊँचाई को ध्यान में न रखा जाए जिस पर यह स्थित थी। हालाँकि, इसके पीछे बर्फ से ढकी ऊँची चोटियाँ दिखाई देती थीं।

हमें भोजन की आवश्यकता थी, इसलिए हम निडर होकर शिविर की ओर चल पड़े। हमारे आने से हलचल मच गई। याक और भेड़ें हमारे सामने से जल्दी से हटाई गईं, जबकि पुरुष और महिलाएं अपने तम्बुओं से अंदर-बाहर भाग रहे थे, जाहिर तौर पर वे बहुत उत्तेजित थे। आठ-दस पुरुष अनिच्छा से आगे आए और हमसे एक बड़े तंबू के अंदर जाने का अनुरोध किया। उन्होंने कहा कि वे हमसे बात करना चाहते हैं और हमें चाय की पेशकश की। मैंने उन पर अविश्वास करते हुए उनका निमंत्रण स्वीकार नहीं किया और शिविर के पार जाकर लगभग तीन सौ गज आगे रुक गया। चंदन सिंह और मैं बाद में सभी तम्बुओं में चक्कर लगाने गए, भोजन खरीदने की कोशिश की और यह भी दिखाने की कोशिश की कि यदि हमने किसी विशेष तंबू में प्रवेश करने से इनकार किया था, तो यह डर के कारण नहीं था, बल्कि इसलिए था क्योंकि हम किसी जाल में नहीं फंसना चाहते थे। विभिन्न गोलिंगचो या गुर्र (तम्बुओं) का हमारा दौरा काफी रोचक था। तंबू चतुराई से निर्मित थे और जिस क्षेत्र में उनका उपयोग किया जा रहा था, उसके लिए वे बहुत उपयुक्त थे। काले रंग के तंबू याक के बालों से बुने गए थे, जिनकी प्राकृतिक चिकनाई के कारण कपड़ा पूरी तरह से जलरोधी था। ये तंबू मोटे कपड़े के दो अलग-अलग टुकड़ों से बने थे, जिनके दोनों सिरों पर दो-दो खंभे लगे थे। तंबू के ऊपरी हिस्से में एक आयताकार छेद था, जिससे धुआं बाहर निकलता था। बड़े तंबुओं का आधार छह कोनों वाला था। छत, जो जमीन से छह या सात फीट की ऊंचाई पर थी, ऊंचे दोमुंहे खंभों पर से गुजरती लंबी रस्सियों की मदद से कसकर बंधी रहती थी, जिनके सिरे जमीन में गाड़े गए थे। तंबू के निचले हिस्से को चारों ओर से जमीन के करीब रखने के लिए कई लकड़ी और लोहे की खूंटियों की आवश्यकता होती थी, ताकि विशाल पठार की तेज हवाओं से अंदर रहने वालों को बचाया जा सके। प्रत्येक तंबू के बाहर सफेद रंग की चार लंबी छड़ें लगी थीं, जिन पर प्रार्थना के सफेद निशान बने थे—प्रत्येक दिशा के लिए एक। बड़े तंबुओं के भीतरी हिस्से के चारों ओर हवा, बारिश और बर्फ से बचाव के लिए दो से तीन फीट ऊंची दीवार बनी थी। ये दीवारें सूखे गोबर से बनी थीं, जिसका इस्तेमाल समय के साथ ईंधन के रूप में किया जाने लगा। तंबू के दोनों सिरों पर दो छेद थे। हवा की दिशा वाला छेद हमेशा फंदों और लकड़ी के बोल्टों की मदद से बंद रखा जाता था।

तिब्बती जन्मजात घुमंतू होते हैं और मौसम के अनुसार अपना निवास स्थान बदलते रहते हैं, जहाँ भी उन्हें अपने याक और भेड़ों के लिए चारागाह मिल जाता है। वे आरामदेह जीवन शैली को बखूबी जानते हैं। उदाहरण के लिए, अपने तंबू के बीच में वे मिट्टी और पत्थर से बना एक चूल्हा बनाते हैं, जो लगभग तीन फुट ऊँचा, चार-पाँच फुट लंबा और डेढ़ फुट चौड़ा होता है, जिसमें दो, तीन या अधिक पार्श्व वेंटिलेशन और हवा

आने-जाने के लिए छेद होते हैं। इस चतुराईपूर्ण युक्ति से वे सूखे गोबर की ज्वलनशीलता बढ़ाने में सफल होते हैं, जो कि लौ प्राप्त करने के लिए सबसे कठिन ईंधन होता है। इस चूल्हे के ऊपर कई रकसांग (बड़े पीतल के बर्तन और कटोरे) रखने के लिए उपयुक्त स्थान बनाया जाता है, जिनमें ईंट की चाय, जिसे पहले पत्थर या लकड़ी के ओखली में अच्छी तरह कूटा जाता है, उबाली जाती है और एक लंबे पीतल के चम्मच से हिलाई जाती है। तंबू में कहीं न कहीं एक पोर्टेबल लोहे का स्टैंड भी होता है, जिस पर आग से उतारने के बाद गर्म बर्तन रखे जाते हैं। इनके पास ही टोक्सम या डोंगबो है, जो एक बेलनाकार लकड़ी का मथनी है, जिसका उपयोग चाय को मक्खन और नमक के साथ मिलाने के लिए किया जाता है।

तिब्बती लोग लकड़ी के प्यालों या कटोरियों का इस्तेमाल करते हैं जिन्हें पुकु, फ्रुह या कैरिएल कहा जाता है। इनमें चाय डालने के बाद त्साम्बा खाया जाता है, जिसे कमोबेश गंदी उंगलियों से पेस्ट की तरह गूंथा जाता है। इस पेस्ट में मक्खन के टुकड़े और यहाँ तक कि चूरा (पनीर) के छोटे-छोटे टुकड़े भी मिलाए जाते हैं। धनी लोग (अधिकारी) भारत और चीन से आयातित आटे और चावल, तथा कम गुणवत्ता वाले कसूर (खजूर और खुबानी) का भरपूर आनंद लेते हैं। चावल को उबालकर तुपका नामक एक प्रकार का सूप बनाया जाता है, जो केवल विशेष अवसरों पर ही खाया जाता है, जब गिमाकारा (चीनी) और शेलकारा (गांठदार सफेद चीनी) जैसी अन्य पसंदीदा मिठाइयाँ भी खाई जाती हैं। तिब्बती लोग मांस के शौकीन होते हैं, लेकिन बहुत कम लोग इसे खाने का खर्च उठा सकते हैं। जंगली जानवर, याक और भेड़ को उत्तम भोजन माना जाता है। मांस और हड्डियों को एक बड़े बर्तन में भरपूर मात्रा में नमक और काली मिर्च के साथ उबाला जाता है।

इस शिविर के निवासी विनम्र और बातूनी थे, लेकिन मुझे उनकी मित्रता पर संदेह हुआ। उन्होंने यह कहकर हमें भोजन बेचने से इनकार कर दिया कि उनके पास खुद के लिए भी भोजन नहीं है।

महिलाओं और पुरुषों ने हमारे चारों ओर घेरा बना लिया। इस शिविर में ही नहीं, बल्कि सभी शिविरों में, मुझे तिब्बत में महिलाओं की कम संख्या देखकर विशेष आश्चर्य हुआ। ऐसा इसलिए नहीं है कि उन्हें एकांत में रखा जाता है। इसके विपरीत, ऐसा लगता है कि इस निषिद्ध भूमि की महिलाएं अपनी मनमानी करती हैं। वास्तव में वे अल्पसंख्यक हैं, एक मित्रवत लामा के ज्ञानवर्धक शब्दों के अनुसार, मोटे तौर पर अनुमान है कि जनसंख्या में प्रत्येक महिला पर पंद्रह से बीस पुरुष हैं। फिर भी, तिब्बत में महिलाएं पुरुष बहुसंख्यक वर्ग पर अपना दबदबा बनाए रखती हैं और लगातार लामाओं के इशारों पर चलती रहती हैं।

तिब्बती स्त्री, चाहे वह महिला हो, चरवाहा हो या डाकू, देखने में सुंदर नहीं होती। सच तो यह है कि मुझे वहाँ एक भी सुंदर स्त्री देखने का सौभाग्य नहीं मिला, हालाँकि कुछ स्त्रीएँ दूसरों से कम बदसूरत ज़रूर थीं। जन्म से ही साबुन, रगड़ने या नहाने से भी अछूती गंदगी से लथपथ; नाक, गाल और माथे पर काली मरहम लगी रहती है ताकि हवा से त्वचा न फटे; और कभी न बदले गए कपड़ों से आती दुर्गंध के कारण, तिब्बती स्त्री अपने सबसे अच्छे रूप में भी किसी यूरोपीय को घृणास्पद लगती है। पहली घृणा दूर हो जाने के बाद भी, दूर से देखने पर उसमें एक अलग ही आकर्षण होता है। वह अच्छे से चलती है, क्योंकि उसे सिर पर भारी भार उठाने की आदत होती है। अगर उसकी गर्दन छोटी और मोटी न होती तो उसका सिर कंधों पर अच्छी तरह

टिका होता। उसके शरीर और अंगों में मांसपेशियों की ताकत बहुत अधिक होती है और वे सुविकसित होते हैं, लेकिन उनमें आमतौर पर दृढ़ता की कमी होती है। वह भारी-भरकम और मोटेपन की ओर झुकी हुई होती है।

तिब्बती स्त्री तिब्बती पुरुष से श्रेष्ठ है। उसका हृदय अधिक दयालु, साहसी और चरित्र उससे कहीं बेहतर है। बार-बार, जब बेहद डरपोक पुरुष हमारे आने पर भाग जाते थे, तब महिलाएं तम्बुओं की देखरेख करती थीं, और यद्यपि वे शांत या संयमित नहीं होती थीं, फिर भी वे शायद ही कभी गरिमापूर्ण व्यवहार के बिना हमारा स्वागत करती थीं।

तिब्बती शिविर में, जब सभी लोग मिलनसार थे, तो महिलाएं पुरुषों की तुलना में कम शर्मीली लग रही थीं और खुलकर लगातार बातचीत कर रही थीं। उन्होंने अपने स्वामियों को हमें थोड़ा त्साम्बा और मक्खन बेचने के लिए भी राजी कर लिया।

जब कोई तिब्बती युवक विवाह करना चाहता है, तो वह अपने माता-पिता के साथ अपनी प्रेमिका के तम्बू में जाता है। वहाँ उसका स्वागत प्रेमिका के रिश्तेदार करते हैं, जिन्हें पहले से ही इस अवसर की सूचना दे दी गई होती है, और वे चटाई और कालीन पर बैठे अपने मेहमानों के आने की प्रतीक्षा कर रहे होते हैं।

औपचारिक शिष्टाचार और अभिवादन के बाद, युवक का पिता अपने पुत्र की ओर से युवती का हाथ मांगता है। यदि उत्तर अनुकूल हो, तो वर अपनी मंगेतर के माथे पर याक मक्खन का एक चौकोर टुकड़ा रखता है। युवती भी उसके माथे पर ऐसा ही करती है, और इस प्रकार विवाह समारोह संपन्न हो जाता है, और मक्खन से सना हुआ जोड़ा पति-पत्नी बन जाता है।

यदि पास में कोई मंदिर हो, तो बुद्ध और संतों की मूर्तियों के सामने काटा (एक प्रकार का प्रसाद), भोजन और धन रखा जाता है, और दंपति मंदिर के भीतर परिक्रमा करते हैं। यदि कोई मंदिर न हो, तो पति-पत्नी निकटतम पहाड़ी की परिक्रमा करते हैं, या यदि पहाड़ी न हो, तो तम्बू की परिक्रमा करते हैं, हमेशा बाएं से दाएं चलते हुए। यह समारोह प्रार्थनाओं और बलिदानों के साथ दो सप्ताह तक प्रतिदिन दोहराया जाता है, इस दौरान मदिरा अर्पण और भोज का सिलसिला जारी रहता है। इसके बाद पति अपनी पत्नी को उसके तम्बू तक ले जाता है।

फुटनोट:

[8] मैंने वापसी यात्रा पर ब्रह्मपुत्र नदी के दूसरे स्रोत का दौरा किया।

अध्याय सत्रह

नदी पर आपदा

सुबह तंबू से बाहर निकलते ही हमने तिब्बतियों के बीच हलचल देखी। कई घुड़सवार बंदूकें लिए आ चुके थे। उनके साथ कुछ और लोग भी शामिल हो गए। वे काफी उत्साहित लग रहे थे। खाना पकाते समय मैं उन पर नज़र रखे हुए था। कुल मिलाकर लगभग दो सौ लोग थे, सभी ने आकर्षक पोशाकें पहनी हुई थीं। वे कुशल घुड़सवार थे और हमारी ओर कतार में बढ़ते हुए काफी अच्छे लग रहे थे। थोड़ी दूर जाकर वे रुके और घोड़ों से उतरे। नेता आगे आए, उनमें से एक हट्टा-कट्टा आदमी भेड़ की खाल का सुंदर कोट पहने बाकी लोगों से आगे चल रहा था। उसका रवैया घमंडी था। सामान्य अभिवादन को छोड़कर, वह मेरे काफी करीब आया और मेरी ओर मुट्ठी हिलाई।

"Kiu mahla lokhna nga rah luck tiba tangan " (अगर तुम वापस जाओगे तो मैं तुम्हें एक बकरी या एक भेड़ दूंगा), उसने कहा।

"किउ डोना नगा दी तांगोन!" (और मैं तुम्हें यह देता हूँ ताकि तुम वापस चले जाओ!) मेरा तुरंत जवाब था, जबकि मैंने अप्रत्याशित रूप से उसे कंधे से एक जोरदार घूंसा मारा जिससे वह जमीन पर गिर पड़ा।

सेना, जो अपनी सामान्य सूझबूझ के चलते सम्मानजनक दूरी से घटनाक्रम देख रही थी, ने जल्दबाजी में पीछे हटना शुरू कर दिया। अधिकारी चीखता हुआ भाग निकला। तिब्बतियों ने अब तक इतनी घिनौनी कायरता दिखाई थी कि हम इतनी आसान जीत पर खुद को बधाई नहीं दे सकते थे। हमें लगने लगा था कि वास्तव में हमारे सामने कोई दुश्मन है ही नहीं। हम लापरवाह भी हो गए। हमने खाना खाया और इस मामले पर ज्यादा ध्यान नहीं दिया।

उस दिन तिब्बतियों ने हमें फिर कभी परेशान नहीं किया। जो लोग वहाँ से नहीं गए थे, वे चुपचाप अपने काले तंबुओं के अंदर चले गए। शिविर में कोई भी नज़र नहीं आ रहा था। मैंने अपने दैनिक अवलोकन दर्ज किए, एक काले तंबू का रेखाचित्र बनाया और अपनी डायरी लिखी। फिर हमने अपनी यात्रा जारी रखी।

अब हमारी प्रगति अपेक्षाकृत आसान थी, हम एक चौड़े घास के मैदान पर आगे बढ़ रहे थे। हम दक्षिण-पूर्व दिशा में आगे बढ़े, 20 डिग्री (बीएसटी) पर एक ऊँची बर्फीली चोटी और उत्तर-पूर्व में पर्वत श्रृंखला में एक निचला दर्रा दिखाई दिया। दूर सामने एक ऊँची पर्वत श्रृंखला थी। एक सुनसान पहाड़ी की तलहटी में हमें एक लंबी और महत्वपूर्ण मणि दीवार मिली, जिस पर पत्थरों, हड्डियों के टुकड़ों, खोपड़ियों और सींगों पर अनगिनत शिलालेख खुदे हुए थे, जो अलग-अलग युगों और आकारों के थे। आगे दक्षिण की ओर तीन छोटी पहाड़ियाँ और दो बड़ी पहाड़ियाँ थीं। जिन सैनिकों को हमने शिविर में हराया था, वे उसी दिशा में आगे बढ़े थे जिस दिशा में हम अब चल रहे थे। वास्तव में, हम उनके टट्टुओं के पदचिह्नों पर ही चल रहे थे।

हमें एक नदी और कई छोटी-छोटी धाराओं को पार करना पड़ा। हर बार जूते और कपड़े उतारकर पानी में चलना इतना असुविधाजनक था कि हमने अपने कपड़े याकों पर लाद दिए और बाकी दोपहर नंगे पैर और केवल एक लंगोटी पहनकर, फकीरों की शैली में यात्रा की। [9]

सूरज बेहद गर्म था, ज़मीन दलदली थी और हवा में बड़े-बड़े और परेशान करने वाले मच्छर भरे हुए थे। देखते ही देखते हम सिर से पैर तक मच्छरों के काटने से भर गए, जिससे बहुत जलन हुई। 15,600 फीट की ऊंचाई पर एक बड़ी नदी के दाहिने किनारे पर रुककर हमने उस जगह का नाम "मच्छर शिविर" रख दिया। सूर्यास्त के समय मच्छरों के झुंड ने हमें बहुत परेशान किया, लेकिन सौभाग्य से सूरज डूबते ही तापमान 33 डिग्री सेल्सियस तक गिर गया, मच्छर गायब हो गए और हमने एक शांतिपूर्ण रात बिताई।
शाम को हमने कई घुड़सवारों को अपने मार्ग से लगभग एक मील दक्षिण में पूरी गति से दौड़ते हुए देखा। निस्संदेह उन्हें आगे मौजूद अधिकारियों को हमारी गतिविधियों की जानकारी देने के लिए भेजा गया था।
अगले दिन नदी का पानी इतना साफ था कि हम अच्छी तरह से साफ-सफाई करने के प्रलोभन का विरोध नहीं कर सके, पहले हमने अपने कपड़े धोए और उन्हें धूप में सूखने के लिए फैला दिया, फिर अपने चेहरे और शरीर को साबुन से अच्छी तरह से साफ किया, एक ऐसा विलासितापूर्ण अनुभव जो हमें बहुत लंबे समय से नहीं मिला था।
तौलिये न होने के कारण मैं धूप में खुद को सुखा रहा था, और साथ ही आसपास के नज़ारों की सुंदरता का आनंद ले रहा था। 211° (समुद्र तल से नीचे) पर मुझे एक बहुत ऊँची बर्फीली चोटी दिखाई दी, और 213° 30' पर एक और चोटी, जो एक सुंदर पर्वत श्रृंखला का हिस्सा थी। मैदान के चारों ओर पहाड़ थे। एक और बहुत ऊँची चोटी, जिसका मैंने पहले भी अनुमान लगाया था, 20° (समुद्र तल से नीचे) पर थी। हमारे उत्तर-पूर्व में पहाड़ी श्रृंखला में एक दर्रा था, जिससे एक संकरी घाटी दिखाई दे रही थी, जिसके आगे ऊँचे बर्फीले पहाड़ थे। हमने घास के मैदान पर लंबी दूरी तय की और ब्रह्मपुत्र नदी के किनारे डेरा डाला, जो एक चौड़ी, गहरी और तेज़ बहने वाली नदी थी। हमने सैकड़ों कियांग और हिरण देखे। सूर्यास्त से कुछ देर पहले मैं ताज़ा मांस लाने के लिए पहाड़ियों की ओर चला गया। मैंने हिरणों के एक झुंड का पीछा किया। शिविर से लगभग पाँच मील दूर अंधेरा छा गया, और अंधेरे में लौटते समय मुझे अपने साथियों को ढूंढने में बहुत कठिनाई हुई। वे आग जलाने में असमर्थ थे, और चूंकि वे दोनों गहरी नींद में सो गए थे, इसलिए मेरी पुकारों का कोई जवाब नहीं मिला। हमने अपने शिविर के लिए जमीन में एक सुरक्षित गड्ढा चुना था, और चूंकि उसके चारों ओर सैकड़ों ऐसे ही गड्ढे थे, और मुझे मार्गदर्शन करने के लिए कोई निशान नहीं था, इसलिए सही जगह की पहचान करना आसान नहीं था।
सौभाग्यवश, काफी देर तक चिल्लाने के बाद आखिरकार चंदन सिंह ने मेरी आवाज़ सुन ली। उनकी आवाज़ सुनकर मुझे वापस लौटने का रास्ता मिल गया। सुबह हमने ब्रह्मपुत्र नदी के दूसरी ओर, लगभग एक मील दूर, एक बड़ा शिविर देखा। नदी इतनी तेज़ बह रही थी कि हम उसे पार नहीं कर सकते थे, वरना हम वहाँ जाकर

स्थानीय लोगों से भोजन और अन्य सामान लेने की कोशिश करते। इसके अलावा, और जाँच करने पर हमने नदी के उस पार चारों ओर काले तंबू देखे, इसलिए नदी पार करने की अतिरिक्त परेशानी और खतरे का कोई कारण नहीं था।

हमें बेहद खुशी हुई जब हमने कुछ राहगीर तिब्बतियों से एक बकरी खरीद ली, जो अपने साथ हजारों बकरियों का झुंड लेकर चल रहे थे। हमें आग जलाने के लिए पर्याप्त सूखी लकड़ी नहीं मिली, इसलिए हमने मानसिंह को उस जानवर को अपने अगले शिविर तक ले जाने का जिम्मा सौंप दिया, जहाँ हमने दावत करने की योजना बनाई थी।

ब्रह्मपुत्र नदी यहाँ कई शाखाओं में बँटी हुई थी, जिनमें से अधिकतर छोटी-छोटी झीलों में जाकर समाप्त होती थीं, और इस वजह से पूरा मैदान दलदली बन गया था। नदी की बड़ी शाखा चौड़ी और गहरी थी, और हमने उसे पार करने के बजाय उसके साथ-साथ चलना बेहतर समझा, हालाँकि हमें उस मार्ग से थोड़ा भटकना पड़ा जिस पर मुझे सामान्यतः चलना चाहिए था। कई मील तक हम घुटनों तक कीचड़ और दलदल में धँसते रहे या पानी में से होकर गुज़रते रहे। बीच-बीच में नरम मिट्टी के छोटे-छोटे टुकड़े थे जिन पर घास के गुच्छे पानी के ऊपर उठे हुए थे, लेकिन जैसे ही हमने उन पर खड़े होने की कोशिश की, वे ढह गए।

मैदान का पूरा उत्तरी भाग बेहद दलदली था। हमारे याक ने हमें बहुत परेशान किया। जब वे अचानक नरम कीचड़ के गड्ढों में धंस जाते, तो वे घबरा जाते और खुद को बचाने की कोशिश में एक-दो बार अपने सामान और बोझ को झटक देते, जिन्हें हम उचित रस्सियों के अभाव में ठीक से बांध नहीं पाए थे। चंदन सिंह और मैं बेचैन जानवरों के साथ चलते रहे। आखिरकार, पहाड़ियों के पास पहुँचने पर, ज़मीन ऊबड़-खाबड़ थी और कुछ हद तक सूखी थी। हमने अपने उत्तर में पर्वत श्रृंखला के तलहटी के पास से धुएँ के स्तंभ उठते देखे। हम दो मील और आगे बढ़े, थके-हारे और गंदे, हमारे कपड़े, जिन्हें धोने में हमने इतना साबुन और समय लगाया था, कीचड़ के छींटों से फिर से गंदे हो गए थे।

मैंने हिंदू से पूछा, "मानसिंह और बकरी कहाँ हैं?"

"वह दलदल के आरंभ में ही पीछे रह गया। वह इतना थक गया था कि आपके द्वारा खरीदी गई बकरी को साथ ले जाने की उसकी क्षमता नहीं थी।"

मैंने एक छोटी पहाड़ी से दूरबीन से चारों ओर छानबीन की, लेकिन बेचारे का कोई निशान नहीं मिला, जिससे मैं बहुत चिंतित हो गया। मुझे खुद पर गुस्सा आ रहा था कि मैंने पहले उसके गायब होने पर ध्यान क्यों नहीं दिया। चूंकि वह जिस जगह पर था, वहां कई तिब्बती लोग मौजूद थे, मुझे उनके किसी गलत इरादे का डर था और मुझे लगा कि कहीं उसे काबू में न कर लिया गया हो। मुझे फिर से ख्याल आया कि कमजोर होने के कारण वह किसी गहरे कीचड़ के गड्ढे में गिर गया होगा और खुद को बचाने का कोई मौका नहीं मिला होगा। मैंने चंदन सिंह को याकों की देखभाल करने के लिए छोड़ दिया और उसकी तलाश में वापस मुड़ गया। मैं मीलों तक तेजी से वापस भागा, कीचड़ के दलदल को पार करने में फिर से संघर्ष किया, लेकिन बेचारे कुली का कोई निशान नहीं मिला। मैं लगभग निराशा में अपनी खोज छोड़ने ही वाला था, तभी मेरी नजर लगभग

आधा मील आगे किसी चीज के हिलने पर पड़ी। वह बकरी थी, बिल्कुल अकेली। मैं डूबते दिल से उसकी ओर दौड़ा।

जब मैं उसके काफी करीब पहुंचा, तब मैंने बेचारे कुली को देखा, जो बेहोशी की हालत में कीचड़ में आधा धंसा हुआ पड़ा था। सौभाग्य से उसने बकरी को जिस रस्सी से बांधा था, उसे अपनी बांह से कसकर बांध रखा था। उसी की बदौलत मुझे मानसिंह का पता चला, और हमारी कीमती बकरी को बचाने में भी कामयाबी मिली। कुछ रगड़ने और हिलाने से मैंने बेचारे को होश में लाया और चंदन सिंह से मिलने तक उसे सहारा दिया। आधी रात के बाद हम तरबार पहुंचे, जो पहाड़ी श्रृंखला की तलहटी में स्थित तिब्बतियों का एक बड़ा शिविर था।

हमारे आगमन की आहट, जो पहले तो दर्जनों कुत्तों के भौंकने से और फिर एक स्थानीय व्यक्ति द्वारा दी गई, जिसने गड़बड़ी का कारण जानने के लिए अपने तम्बू से बाहर झाँकने का साहस किया, ने उस जगह पर हमेशा की तरह दहशत फैला दी।

"गिग्री डुक! गिग्री डुक! जोगपा, जोगपा!" (खतरा! खतरा! लुटेरों, लुटेरों, मदद करो!) तिब्बती चिल्लाते हुए अपने तंबू से बाहर भागा। कुछ ही सेकंड बाद चारों ओर काले रंग की आकृतियाँ दिखाई देने लगीं, जो अपने तंबुओं से अंदर-बाहर भाग रही थीं। यह याद रखना चाहिए कि तिब्बत के रीति-रिवाजों के अनुसार, किसी भी शिविर में सूर्यास्त से पहले पहुँचने का समय निर्धारित करना चाहिए, जब तक कि आपके आने की सूचना पहले से न भेजी गई हो। जो लोग आधी रात को अचानक पहुँचते हैं, उन्हें कभी भी अच्छे इरादों वाला नहीं माना जाता—वे हत्या, लूट या जबरन वसूली के अलावा कुछ नहीं समझते। मैंने तिब्बतियों को यह कहकर शांत करने की कोशिश की कि मेरा कोई नुकसान करने का इरादा नहीं है, लेकिन वे इतने उत्तेजित और भयभीत थे कि कोई मेरी बात सुनने को तैयार नहीं था।

दो बूढ़ी औरतें दूध से भरी बाल्टी लेकर हमारे पास आईं और उसे मेरे पैरों में रखकर मुझसे अपनी जान बख्शने की विनती करने लगीं। उन्हें बहुत आश्चर्य हुआ जब उन्होंने देखा कि उनकी हत्या करने के बजाय उन्हें एक चांदी का रुपया इनाम के तौर पर मिला। यह अशांति के शांतिपूर्ण समाधान की दिशा में पहला कदम था। कुछ समय बाद शांति बहाल हो गई, और हालांकि अभी भी हमें संदेह की नजर से देखा जाता था, फिर भी स्थानीय लोगों ने हमारे साथ विनम्रता से व्यवहार किया।

दुर्भाग्यवश, यहाँ भी हम भोजन सामग्री नहीं खरीद पाए, क्योंकि स्थानीय लोगों ने बताया कि उनके पास अपने लिए पर्याप्त भोजन नहीं है। रात में तापमान 26 डिग्री तक गिर गया। हमें कड़ाके की ठंड लग रही थी। हमने स्थानीय लोगों से गोबर खरीदा और सुबह आग जलाई। हमने बकरी (जिसे हमने मारकर खाया) और याक का दूध पीकर पेट भर लिया और अगली सुबह जल्दी ही अपना डेरा समेटने की तैयारी करने लगे। कई दिनों की तंगी के बाद अच्छा भोजन करने से हम पहले से कहीं अधिक खुश थे।

तरबार से निकलने के बाद हम कुछ देर तक नदी के बहाव के साथ-साथ चलते रहे। मौसम बहुत सुहाना था और हम अपने दक्षिण-पश्चिम में फैली विशाल, ऊबड़-खाबड़ पर्वत श्रृंखला के शानदार नज़ारे का आनंद ले पा रहे थे। ऊँची चोटियाँ लगभग सभी पिरामिड के आकार की थीं। मैंने एक विशाल चतुर्भुजाकार चोटी देखी जिसे मैंने माउंट एवरेस्ट समझा। उसके बगल में एक और पिरामिडनुमा चोटी थी, वह भी बहुत ऊँची थी, लेकिन अपने पड़ोसी जितनी ऊँची और सुंदर नहीं थी। मैं पूर्व-दक्षिण-पूर्व की ओर बढ़ता रहा। नदी, जिसके साथ हम लगभग चल रहे थे, अब दक्षिण-दक्षिण-पूर्व की ओर एक बड़ा मोड़ ले रही थी, इसलिए मैंने उसे पार करने का फैसला किया। हम गर्दन तक पानी में डूबे हुए नदी को सफलतापूर्वक पार कर गए और फिर से दलदली ज़मीन पर पहुँच गए, जो पिछले दिन के अनुभव की पुनरावृत्ति थी।

आगे चलकर हमने मुख्य नदी की तीन और सहायक नदियों को पार किया, जो सभी काफी चौड़ी और गहरी थीं। फिर हमें एक बार फिर मुख्य नदी को पार करना पड़ा, जो वहाँ काफी गहरी और तेज़ बहने वाली थी। नदी मैदान को टेढ़े-मेढ़े तरीके से पार कर रही थी, और जब तक हम इसके किनारों का अनुसरण नहीं करना चाहते थे, जिससे यात्रा की दूरी दोगुनी या तिगुनी हो जाती, तब तक हमारे पास यही एकमात्र रास्ता बचा था। इस प्रकार, जहाँ तक संभव हो सीधी रेखा में यात्रा करने की कोशिश करते हुए, हम तीसरी बार इस विशाल नदी के सामने आ गए, जो अब बर्फ से पोषित अन्य धाराओं से उफान पर थी और अपने साथ पानी का एक विशाल भंडार लिए हुए थी। दोपहर का समय था, जब पानी अपने उच्चतम स्तर पर था। हमने कई जगहों पर नदी पार करने का प्रयास किया, लेकिन यह असंभव साबित हुआ। मैंने अगली सुबह जल्दी पानी कम होने का इंतजार करने का फैसला किया।

ऐसा लगता था कि मेरे याक इस इलाके से अच्छी तरह वाकिफ थे। मैंने गौर किया कि जब भी मैं रास्ता भटक जाता, मुझे बस उनके पीछे-पीछे चलना होता था और वे मुझे वापस रास्ते पर ले आते थे। जब मैं उन्हें रास्ते से दूर ले जाता, तो वे आगे बढ़ने में बहुत आनाकानी करते थे, जबकि राजमार्ग पर वे आसानी से आगे बढ़ जाते थे। कहीं-कहीं ही कोई पगडंडी दिखाई नहीं दे रही थी, सिवाय उन जगहों के जहाँ भेड़ों, टट्टुओं और याकों के साथ आए आखिरी खानाबदोशों के पदचिह्नों ने घास को नष्ट कर दिया था।

नदी के दूसरी ओर आधा मील की दूरी पर लगभग पचास या साठ तंबुओं का एक शिविर था, जिसके पास सैकड़ों याक और भेड़ें चर रही थीं।

इस समय, मेरे दो याक, जिन्हें मैंने देखा कि वे सामान्य से अधिक फुर्ती से चल रहे थे, उस समय अचानक भाग निकले जब मैं चंदन सिंह और मानसिंह को सामान उतारने का आदेश दे रहा था, और सीधे पानी में चले गए। उन्हें वापस मोड़ने की कोशिश में, मानसिंह ने उन पर एक पत्थर फेंका, जिसका असर होने के बजाय वे और तेज़ी से बह गए। धारा तेज़ थी और नदी की तलहटी इतनी नरम थी कि वे दोनों डूब गए। जब वे सतह पर दोबारा दिखाई दिए, तो वे तेज़ी से धारा के साथ बहते हुए दूर जा रहे थे। हम बढ़ती हुई चिंता के साथ उन्हें देखते रहे। वे बिल्कुल असहाय लग रहे थे। हम हाँफते हुए नदी किनारे दौड़े और उन्हें दूसरी तरफ धकेलने के लिए चिल्लाते रहे। पानी में तैरते रहने के अपने बेताब संघर्ष में और धारा के आगे शक्तिहीन होकर, दोनों

याक बीच धारा में ज़ोर से टकरा गए। टक्कर से छोटे याक की पीठ और उस पर लदा सामान पलट गया। इस तरह असंतुलित और लाचार होकर वह जानवर दो-तीन बार डूबा और फिर ऊपर आया, साँस लेने और जीने के लिए संघर्ष करता रहा। यह सचमुच एक भयानक क्षण था। सामान को बचाने के लिए, मैंने अपने कपड़े उतार दिए और पानी में कूद गया। मैं तेज़ी से तैरकर जानवर के पास पहुँचा और बड़ी मुश्किल से उसे किनारे पर खींच लाया, जो नदी में लगभग दो सौ गज आगे था। हम दोनों सुरक्षित थे, हालाँकि साँस फूल रही थी; लेकिन अफ़सोस! सामान को बाँधने वाली रस्सियाँ टूट गई थीं और काठी व सामान गायब हो गया था। यह नुकसान मेरे लिए बहुत बड़ा आघात था। मैंने अपने सामान को वापस पाने के लिए नदी में बार-बार डुबकी लगाई, यहाँ तक कि मैं लगभग जम गया था, लेकिन मैं उसे ढूँढ़ भी नहीं पाया। जहाँ मुझे सामान होने का शक था, वहाँ पानी बीस फीट से भी ज़्यादा गहरा था। नदी की तलहटी नरम मिट्टी की थी, इसलिए सामान के वज़न से ही वह डूब जाता और पानी में डूब जाता।

इतनी ऊँचाई से गोता लगाने पर एक अजीब और अप्रिय अनुभूति हुई। जैसे ही मैं पूरी तरह पानी के नीचे गया, मुझे ऐसा लगा जैसे मुझ पर कोई भयानक भार पड़ गया हो जो मुझे कुचल रहा हो। अगर मेरे ऊपर और आसपास का तरल पदार्थ पानी की जगह सीसे का पिंड होता, तो भी इतना भारी महसूस नहीं होता। यह अनुभूति विशेष रूप से मेरे सिर में महसूस हुई, ऐसा लग रहा था जैसे मेरी खोपड़ी को किसी शिकंजे में जकड़ा जा रहा हो। कनपटी में धड़कन असहनीय थी। सामान्य परिस्थितियों में मैं एक मिनट से अधिक समय तक पानी के नीचे रह सकता हूँ, लेकिन इतनी ऊँचाई पर मैं पंद्रह-बीस सेकंड से अधिक समय तक नहीं रह पाता था। हर बार जब मैं साँस लेने के लिए हाँफते हुए पानी से बाहर आता, तो मेरा दिल बहुत तेज़ी से धड़कता और ऐसा लगता जैसे मेरे फेफड़े फटने वाले हों।

मैं इतना थका हुआ था कि अपने दोनों आदमियों को पार ले जाने की हिम्मत मुझमें नहीं थी। मैंने ताकतवर याक से सामान उतारा, और फिर बड़ी मुश्किल से उसे और उसके साथी को वापस पानी में उतारा। दोनों याक अच्छे तैराक थे, इसलिए वे बिना किसी रुकावट के धारा के साथ बहते हुए दूसरी तरफ पहुँच गए। चंदन सिंह और मानसिंह ने अपने और मेरे कपड़े कंधों पर बाँधकर जानवरों पर सवार हो गए, और कुछ चिंताजनक यात्रा के बाद सुरक्षित रूप से मेरी तरफ पहुँच गए। हमने डेरा डाला। मेरे आदमी पूरी रात खोए हुए सामान पर शोक मनाते रहे। अगली सुबह मैंने सामान वापस पाने की फिर से कोशिश की, लेकिन नाकाम रही। दुर्भाग्य से, उसमें मेरा सारा डिब्बाबंद राशन, थोड़ा-बहुत बचा हुआ खाना, 800 रुपये चाँदी के सिक्के, मेरा ज़्यादातर गोला-बारूद, कपड़े बदलने के लिए, जूते, मेरी लालटेन, और कई तरह के चाकू, रेज़र वगैरह थे।

हमें केवल लकड़ी की वह सामान ढोने वाली सीट ही मिली, जो लगभग छह सौ गज आगे समुद्र तट पर बहकर आ गई थी।

हमारी स्थिति को कुछ शब्दों में संक्षेप में बताया जा सकता है। हम तिब्बत के मध्य में थे, हमारे पास खाने-पीने का कुछ भी नहीं था, नाममात्र के कपड़े थे, और जूतों-चप्पलों के अलावा कुछ भी नहीं था, जो कि फटेहाल थे।

मेरे पास जो थोड़ा-बहुत गोला-बारूद बचा था, उस पर भरोसा नहीं किया जा सकता था, क्योंकि वह कई बार पानी में गिर चुका था। हमारे चारों ओर दुश्मनों के सिवा कुछ नहीं था—भले ही वे मामूली दुश्मन थे, लेकिन फिर भी दुश्मन तो थे ही।

मुझे इस बात से कुछ राहत मिली कि मेरे वैज्ञानिक उपकरण, नोट्स, रेखाचित्र, नक्शे और सोने-चांदी के सिक्कों से भरे जलरोधी बक्से सुरक्षित थे। मेरे लिए, ये मेरे पास मौजूद किसी भी चीज़ से ज़्यादा मूल्यवान थे।

हम भूखे-प्यासे, थके-हारे, ज़ख्मी पैरों के साथ आगे बढ़ते रहे, जितना हो सके एक-दूसरे का हौसला बढ़ाते रहे। हम अपनी परेशानियों पर हँसे। हम तिब्बतियों और उनके हास्यास्पद तरीकों पर हँसे। हम हर चीज़ और हर किसी पर हँसे, यहाँ तक कि अंत में हम खुद पर भी हँसने लगे। लेकिन दिन लंबे लग रहे थे। हालाँकि उपवास शुरू में पेट में तेज़ दर्द देता है, लेकिन कई दिनों तक बिल्कुल भी भोजन न मिलने के बाद ही यह असहनीय होता है। कहने का तात्पर्य यह है कि अगर आप हमारी तरह, एक भोजन से दूसरे भोजन के बीच लंबे अंतराल के आदी हों। जब हम उपवास के तीसरे दिन पहुँचे, तो हमें भोजन की बहुत भूख लगी थी। पहाड़ की ढलान के पास, हमारे रास्ते से लगभग चार मील दूर, काले तंबू देखकर हम भूख से बेहाल होकर उनकी ओर दौड़े। हमने याक के दूध की दो बाल्टियाँ खरीदीं, जिनमें से एक मैंने वहीं पी ली, और दूसरी मेरे दो नौकरों में बराबर बाँट दी। बस इतना ही हमें मिल सका। वे हमें और कुछ नहीं बेच रहे थे।

इसके बाद हम फिर से आगे बढ़े, स्थिर गति से और ऊँचाई को ध्यान में रखते हुए, अपेक्षाकृत तेज़ गति से प्रगति करते हुए। हमने हर चुनौती का डटकर सामना किया। हमें अच्छे और बुरे दोनों तरह के लोग मिले, लेकिन चाहे उनका व्यवहार विनम्र हो या इसके विपरीत, हमें कहीं भी भोजन न तो प्यार से और न ही पैसे से प्राप्त हुआ।

बेचारे मानसिंह और चंदन सिंह, मेरे काम में मेरी तरह उत्साह न होने के कारण, अब दयनीय हालत में थे। ठंड, थकान और भूख से बेहाल, बेचारे पैरों पर खड़े होने की भी ताकत नहीं बची थी, उनके तलवे बुरी तरह से कटे और सूजे हुए थे। इन दो बहादुरों को मेरे लिए इस तरह कष्ट सहते देखकर मेरा दिल सचमुच दुख से भर गया। उन्होंने शिकायत का एक शब्द भी नहीं कहा; एक बार भी उनके होंठों से कोई शिकायत नहीं निकली।

जब मैंने उनके प्रति सहानुभूति व्यक्त की, तो उन बेचारे लोगों ने कहा, "हमें कष्ट सहना पड़े या मर भी जाना पड़े, तो भी कोई बात नहीं। जब तक हमारे अंदर चलने की शक्ति है, हम आपका साथ देंगे। चाहे कुछ भी हो जाए, हम आपके साथ खड़े रहेंगे।"

चंदेन सिंह की राइफल मुझे उससे लेनी पड़ी, क्योंकि वह उसे उठाने में असमर्थ था। दिन बीतने के साथ-साथ मैं भी कमजोर होता गया और हमें नाममात्र का भोजन मिला। मैं यह नहीं कह सकता कि मुझे कोई तीव्र शारीरिक पीड़ा हुई। मुझे लगता है कि इसका कारण यह था कि मेरी थकावट के कारण मुझे बुखार आ गया था। मेरे सिर में एक अजीब सी अनुभूति हो रही थी, मानो मेरी बुद्धि, जो पहले से ही तेज नहीं थी, अब पूरी तरह से कुंद हो गई हो। मेरी सुनने की क्षमता भी कम हो गई थी। मुझे ऐसा लग रहा था जैसे मेरी शक्ति धीरे-धीरे

बुझ रही हो, जैसे बिना तेल के दीपक की लौ। केवल तंत्रिका उत्तेजना और तनाव ने ही मुझे जीवित रखा था। मैं यंत्रवत चलता रहा।

हम लगभग अस्सी काले तंबुओं और एक मिट्टी के चौकीदार के शिविर में पहुँचे। हम सचमुच भूख से बेहाल थे। मेरे दोनों आदमियों की दयनीय हालत के कारण आगे बढ़ना बिलकुल असंभव था। उन्होंने सवारी के लिए टट्टू देने की गुहार लगाई। उनके पैर इतने दुख रहे थे कि मेरे पीछे आने की उनकी तीव्र इच्छा के बावजूद, वे आगे नहीं जा सकते थे।

स्थानीय लोगों ने हमारा गर्मजोशी से स्वागत किया और मुझे टट्टू, कपड़े और खाने-पीने का सामान बेचने के लिए तैयार हो गए। हमने बस्ती से लगभग दो मील आगे डेरा डाला। शाम के समय कई लोग मेरे तंबू में आए और आटा, मक्खन और त्साम्बा उपहार में लाए, साथ ही मित्रता के प्रतीक के रूप में कटा भी लाए। मैंने तिब्बतियों को उनके उपहारों के बदले में हमेशा चांदी के सिक्के दिए, जिनकी कीमत उनके द्वारा दिए गए सामान की कीमत से तीन या चार गुना अधिक थी। उन्होंने बहुत आभार व्यक्त किया। एंडो नाम का एक व्यक्ति, जो खुद को गोरखा कहता था, लेकिन तिब्बतियों के कपड़े पहनता था, हमारे तंबू में आया और उसने अगली सुबह बेचने के लिए कई टट्टू लाने का वादा किया। उसने हमें ल्हासा तक पहुँचने के लिए पर्याप्त मात्रा में भोजन बेचने का भी वादा किया। अपनी सद्भावना दिखाने के लिए, वह शाम को कुछ सामान लाया और कहा कि वह हमें बाकी सामान अगली सुबह दे देगा।

इसके बाद एक लामा हमसे मिलने आए, जो काफी सभ्य और बुद्धिमान प्रतीत हुए। उन्होंने हमें मक्खन और चूरा (पनीर) भेंट किया। वे भारत में कलकत्ता तक का सफर तय करके गार्टोक से ल्हासा जा रहे थे। उनके पास एक बेहतरीन टट्टू था और उन्हें चार-पांच दिनों में वहाँ पहुँचने की उम्मीद थी। अन्य लामा और जो लोग हमसे मिलने आए, उन्होंने बताया कि वे ल्हासा से चार दिनों में पहुँच गए थे।

स्थानीय लोगों ने हमेशा की तरह हमें शिविर का नाम बताने में काफी संकोच दिखाया, कुछ उसे टोक्सेम कहते थे तो कुछ तद्दजू। हमारे उत्तर में पहाड़ी श्रृंखला में एक नीचा दर्रा था। चूंकि मैं तिब्बतियों को जितना देखना चाहता था उतना देख चुका था, इसलिए मेरा इरादा था कि अगर मैं पर्याप्त राशन और टट्टू खरीदने में सफल हो जाता, तो इस दर्रे को पार करके पर्वत श्रृंखला के उत्तरी किनारे से होते हुए पवित्र नगर की ओर बढ़ूँ। ल्हासा जाने वाला राजमार्ग इतना घनी आबादी वाला हो रहा था कि मैंने भविष्य में कम आबादी वाले क्षेत्रों से यात्रा करना उचित समझा। मेरा इरादा था कि मैं यूरोपीय वेश में ल्हासा से कुछ मील दूर तक जाऊँ। फिर मैं अपने दो आदमियों को किसी एकांत स्थान पर छिपाकर छोड़ दूँगा और भेष बदलकर रात में अकेले शहर में प्रवेश करूँगा। यह काफी आसान होता, क्योंकि ल्हासा में कोई द्वार नहीं है, केवल एक खंडहर दीवार है।

मैं तिब्बतियों से कुछ कपड़े और जूते खरीद पाई। तिब्बती दिखने के लिए मुझे जिस चोटी की ज़रूरत थी, वह मैंने अपने याक के रेशमी बालों से बना ली। मैं बहरे और गूंगे होने का नाटक करती थी, क्योंकि मैं तिब्बती भाषा इतनी अच्छी तरह से नहीं बोल पाती थी कि किसी तिब्बती की तरह दिख सकूँ।

एक अच्छे भोजन ने आशा और उत्साह जगाया। जब मैं सोने के लिए लेटा तो मैंने खुद को पवित्र शहर की दीवारों के भीतर पाया।

फुटनोट:

[9] धार्मिक कट्टरपंथी.

अध्याय अठारह

पकड़ा गया

रात में मुझे कई बार आवाज़ें सुनाई दीं। मैं शोर मचाने वालों को ढूंढने के लिए अपने तम्बू से बाहर निकला, लेकिन मुझे कोई नहीं मिला। यह मेरी रोज़ की रात की आदत बन गई थी, और मैं इन आवाज़ों को ज़्यादा महत्व नहीं देता था।

सुबह एंडो और दो-तीन तिब्बती हमें राशन और टट्टू बेचने आए। जब मैं और मेरे दो नौकर अपनी ज़रूरत का सामान खरीद रहे थे, तभी मैंने देखा कि कई ग्रामीण समूहों में आ रहे हैं। कुछ ऊन कात रहे थे, कुछ त्साम्बा और आटे की बोरियाँ लिए हुए थे, जबकि कुछ टट्टुओं को लेकर आ रहे थे। दो महीने का राशन खरीदने के बाद, हमने सवारी के लिए घोड़े चुनने शुरू किए। स्वाभाविक रूप से, हर तरह के कष्टों और अभावों के बाद, अपनी हर इच्छा की प्रचुरता देखकर, मैं और मेरे नौकर अपनी अप्रत्याशित किस्मत पर बहुत खुश थे। चंदेन सिंह और मानसिंह, जो खेल-कूद में माहिर थे, जानवर मिलने की उम्मीद से बहुत प्रसन्न हुए और अपनी पसंद के अनुसार पहले एक टट्टू पर और फिर दूसरे पर सवार हुए। चंदेन सिंह ने एक सुंदर घोड़ा चुनकर, मुझे उसे देखने के लिए बुलाया, फिर मैंने उसे खरीद की रकम दी। किसी भी तरह की गड़बड़ी की आशंका न होने के कारण, और साथ ही कंधे पर राइफल टांगे हुए विभिन्न फुर्तीले टट्टुओं को परखना सुविधाजनक न होने के कारण, मैं निहत्था ही अपने तंबू से लगभग सौ गज दूर उस स्थान पर गया, जहाँ उस बेचैन जानवर को मेरे निरीक्षण के लिए रखा गया था। स्थानीय लोग मेरे पीछे-पीछे आए, लेकिन किसी भी देश में सार्वजनिक रूप से घोड़ा खरीदते समय ऐसा होना आम बात है, इसलिए मैंने इस पर ध्यान नहीं दिया। जब मैं अपने हाथ पीछे करके खड़ा था, तो मुझे चंदन सिंह के चेहरे पर खुशी का भाव अच्छी तरह याद है जब मैंने उनके चुनाव को मंजूरी दी। जैसा कि आमतौर पर ऐसे अवसरों पर होता है, मेरे पीछे जमा भीड़ ने एक साथ मिलकर चुने गए घोड़े की श्रेष्ठता पर अपनी राय व्यक्त की। मैं अभी टट्टू के अगले पैरों की जाँच करने के लिए झुका ही था कि अचानक कई लोगों ने मुझे पीछे से पकड़ लिया, जिन्होंने मेरी गर्दन, कलाई और टांगों को पकड़कर मुझे मुंह के बल नीचे पटक दिया। मैंने संघर्ष किया और तब तक लड़ता रहा जब तक कि मैंने अपने कुछ हमलावरों को झटक कर खुद को संभाल नहीं लिया; लेकिन तभी कुछ और लोग दौड़कर आए और मैं लगभग तीस आदमियों से घिर गया, जिन्होंने मुझ पर चारों ओर से हमला कर दिया। वे पूरी ताकत से मुझ पर टूट पड़े और मेरे हाथ, पैर और सिर को फिर से पकड़ लिया। मैं बुरी तरह थक चुका था, फिर भी उन्होंने मुझे तीन बार और गिरा दिया, लेकिन हर बार मैं उठ खड़ा हुआ। मैंने अपनी मुट्ठियों, पैरों, सिर और दांतों से अंत तक लड़ाई लड़ी। हर बार जब मेरा एक हाथ या पैर उनकी पकड़ से छूटता, तो मैं अपने विरोधियों के शरीर के हर उस हिस्से पर वार करता जहाँ मैं उन्हें निष्क्रिय कर सकता था। इतनी भारी संख्या में होने के बावजूद भी उनकी कायरता वाकई अवर्णनीय थी। यह पूरी तरह से उनकी कायरता के कारण था, न कि मेरी ताकत के कारण, क्योंकि मुझमें लगभग कोई ताकत बची ही नहीं थी, कि मैं लगभग बीस मिनट

तक उनका सामना कर सका। लड़ाई में मेरे कपड़े फट गए। चारों ओर से मुझ पर लंबी रस्सियाँ फेंकी गईं। मैं उनमें इस कदर उलझ गया कि मेरी हरकतें रुक गईं। एक रस्सी जो उन्होंने फेंकी और सफलतापूर्वक मेरी गर्दन के चारों ओर लपेट दी, उससे उनकी जीत पक्की हो गई। उन्होंने दोनों तरफ से उसे ज़ोर से खींचा, और मैं संघर्ष करते हुए हांफने और हांफने लगी, वे मुझे गला घोंटने के लिए खींचते रहे। मुझे ऐसा लगा जैसे मेरी आंखें बाहर निकल आएंगी। मेरा दम घुट रहा था। मेरी दृष्टि धुंधली हो गई। मैं उनके वश में थी। मुझे ज़मीन पर घसीटकर, उन्होंने मुझे लात मारी, घूंसे मारे और अपने भारी कील वाले बूटों से तब तक कुचला जब तक मैं बेहोश नहीं हो गई। फिर उन्होंने मेरी कलाइयों को पीछे की ओर कसकर बांध दिया; उन्होंने मेरी कोहनियों, छाती, गर्दन और टखनों को भी बांध दिया। मैं एक कैदी थी!

उन्होंने मुझे उठाया और खड़ा किया। बहादुर चंदेन सिंह पंद्रह-बीस दुश्मनों से अपनी पूरी ताकत से लड़ रहे थे और उनमें से कई को घायल कर चुके थे। उन पर भी ठीक उसी समय हमला हुआ था जब मुझ पर हुआ था, और उन्होंने बहादुरी से तब तक लड़ाई लड़ी जब तक कि मेरी तरह वे भी रस्सियों में उलझकर नीचे गिर नहीं गए और रस्सियों से बांध नहीं दिए गए। संघर्ष के दौरान मैंने उन्हें बार-बार पुकारते सुना: "बंदूक, बंदूक, मानसिंह; जल्दी, बंदूक!" (राइफल, राइफल, मानसिंह; जल्दी, मेरी राइफल!) लेकिन, अफसोस, बेचारे मानसिंह, कुष्ठ रोगी, कमजोर और थके हुए कुली पर चार शक्तिशाली तिब्बतियों ने हमला कर दिया था, जिन्होंने उन्हें जमीन पर ऐसे जकड़ रखा था जैसे वे सबसे खूंखार डाकू हों। मानसिंह एक दार्शनिक थे। उन्होंने प्रतिरोध करने की जहमत भी नहीं उठाई; लेकिन उनके साथ भी बुरा बर्ताव किया गया, उन्हें पीटा गया और कसकर बांध दिया गया। लड़ाई की शुरुआत में एक तेज सीटी ने चार सौ सशस्त्र सैनिकों को बुला लिया था जो
वे असंख्य रेत के टीलों और जमीन में बने गड्ढों के पीछे छिपकर हमारे चारों ओर घात लगाकर बैठे थे। उन्होंने हमें घेर लिया और अपनी तोपों से हम पर गोलीबारी शुरू कर दी।
अब सब कुछ समाप्त हो चुका था, और एक अपराधी की तरह बंधे हुए, मैंने अपने आदमियों का हाल जानने के लिए चारों ओर देखा। जब मुझे एहसास हुआ कि एक भूखे अंग्रेज और उसके दो अधमरे नौकरों को गिरफ्तार करने के लिए तिब्बतियों को पाँच सौ आदमियों की आवश्यकता पड़ी, और तब भी उन्होंने खुलेआम ऐसा करने की हिम्मत नहीं की, बल्कि घोर विश्वासघात का सहारा लिया; जब मुझे पता चला कि ये सैनिक ल्हासा और शिगात्ज़ (शिगात्ज़े) से चुने हुए सैनिक थे, जिन्हें हमारी प्रगति को रोकने और हमें पकड़ने के उद्देश्य से भेजा गया था, तो मैं उन लोगों के प्रति घृणा की मुस्कान को रोक नहीं सका जिनके हाथों में हम अंततः आ गए थे।
मेरा खून खौल उठा जब पिछली रात जिस लामा ने खुद को हमारा मित्र बताया था, उसके आदेश पर कई लोग आगे बढ़े और हमारी जेबें तलाशीं। उन्होंने हमारा सारा सामान लूट लिया। फिर उन्होंने हमारे सामान की तलाशी शुरू कर दी। घड़ियों और कालमापी को शक की निगाह से देखा गया, उनकी टिक-टिक की आवाज

से जिज्ञासा और चिंता भी पैदा हो रही थी। उन्हें एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को तब तक बेरहमी से उछाला गया जब तक कि वे बंद नहीं हो गईं। फिर उन्हें "बेकार" घोषित कर दिया गया। कम्पास और एनरॉइड, जिन्हें वे घड़ियों से अलग नहीं कर पाए, उन्हें भी यह कहकर फेंक दिया गया कि "उनमें कोई जान नहीं है।" तंबू फाड़े जाने के बाद हमारे बिस्तर पर पड़ी राइफलों को छूने में बड़ी सावधानी बरती गई।

इस बात का डर था कि कहीं राइफलें अचानक चल न जाएँ। मेरे आश्वासन (जिससे हमारे अपहरणकर्ता दस गुना अधिक सतर्क हो गए) पर ही उन्होंने राइफलें लीं (और उन्हें लोड नहीं किया), और अंततः उन्हें हमारी ज़ब्त की गई संपत्ति की सूची में दर्ज किया। मेरे पास एक सोने की अंगूठी थी जो मेरी माँ ने मुझे बचपन में दी थी। मैंने उसे अपने पास रखने की अनुमति माँगी। अपने अंधविश्वासी स्वभाव के कारण उन्होंने तुरंत सोचा कि इसमें जादुई शक्तियाँ हैं, ठीक वैसे ही जैसे परियों की कहानियों में जादुई छड़ियों का ज़िक्र होता है।

नेरबा नाम के एक व्यक्ति को, जिसने बाद में हमारी पीड़ाओं में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, अंगूठी सौंपी गई थी और उसे चेतावनी दी गई थी कि वह मुझे इसे फिर कभी न देखने दे। यह दिल दहला देने वाला था, जब हम तीनों कैदी बंधे हुए और पहरेदारों द्वारा दबाए हुए बैठे थे, और लामाओं और अधिकारियों को हमारी सभी चीजों को इतनी बेरहमी से छूते हुए देखना कि वे लगभग हर चीज को खराब कर देते थे। विशेष रूप से घृणित उनकी लालच थी जब उन्होंने मेरे रोज़ाना पहने जाने वाले कोट की जेबों की तलाशी ली, जिसे मैंने उस सुबह नहीं पहना था, और उसमें उन्हें लगभग आठ सौ रुपये के चांदी के सिक्के मिले। अधिकारियों, लामाओं और सैनिकों ने पैसे छीनने की होड़ लगाई, और जब शांति बहाल हुई तो केवल कुछ सिक्के ही बचे थे जहाँ रकम रखी गई थी। मेरे सामान में मिले अन्य पैसों का भी यही हाल हुआ। सबसे ज्यादा जिज्ञासा जगाने वाली चीजों में से एक पूरी तरह से फूला हुआ रबर का तकिया था। रबर की मुलायम, चिकनी बनावट उन्हें बहुत पसंद आई। एक के बाद एक वे तकिये पर अपने गाल रगड़ते हुए, उससे मिलने वाले सुखद अहसास की प्रशंसा कर रहे थे। पीतल के पेंच से खेलते हुए, जिससे तकिया फुलाया जाता था, उन्होंने उसे घुमाया, और फंसी हुई हवा एक फुफकार के साथ बाहर निकल गई। इससे तिब्बतियों में काफी दहशत फैल गई। उनके अंधविश्वासी मन ने इस फुफकार को अपशगुन माना। स्वाभाविक रूप से, मैंने इस तरह की किसी भी छोटी घटना का फायदा उठाकर उनके अंधविश्वासों का लाभ उठाया और स्थानीय लोगों को जितना हो सके डराने की कोशिश की।

तिब्बतियों ने मेरे सभी सामान की जाँच कर ली, सिवाय उन सुरक्षित बक्सों के जिनमें उपकरण, फोटोग्राफिक प्लेटें और रेखाचित्र थे। एक-दो घटनाओं और मेरी कुछ टिप्पणियों से वे इतने नाराज़ हो गए कि उन्होंने जल्दी से मेरी संपत्ति को, जिसे उन्होंने बोरियों में भरकर कंबलों में लपेटा था, सील कर दिया। उन्होंने सामान को याक पर लादकर बस्ती के पहरेदार घर में लाने का आदेश दिया। ऐसा करने के बाद, उन्होंने हमारी गर्दनें बांधने वाली रस्सियों के सिरों को अपनी काठी के हैंडल से बांध दिया और हमारे पैर खोलकर अपने टट्टुओं पर सवार होकर, जयजयकार, फुफकार और विजय की चीखें लगाते हुए, हवा में बंदूकें चलाते हुए, हमें कैदी बनाकर बस्ती में घसीटते हुए ले गए।

बस्ती में पहुँचकर, अलग होने से पहले मैंने अपने साथियों से आखिरी शब्द कहे: "वे तुम्हारे साथ चाहे जो भी करें, उन्हें यह मत दिखाना कि तुम कष्ट सह रहे हो।" उन्होंने मेरी बात मानने का वादा किया। हमें अलग-अलग तंबुओं में ले जाया गया।
मुझे घसीटकर एक बड़े तंबू में ले जाया गया, जिसके अंदर और बाहर सैनिक पहरा दे रहे थे। वे शुरू में रूखे और रूखे व्यवहार वाले थे। मैं हमेशा संयमित और विनम्र तरीके से उन्हें जवाब देता था। मैंने पहले भी कई बार देखा था कि एशियाई लोगों से व्यवहार करते समय शांत और संयमित रहने से बेहतर कोई उपाय नहीं होता। मुझे पूरा विश्वास था कि अगर हमें इस संकट से बाहर निकलना है, तो वह किसी भी परिस्थिति में पूरी तरह से शांत और स्थिर बने रहने से ही संभव होगा।

तंबू बंद होने के कारण मैं बाहर क्या हो रहा था, देख नहीं पा रहा था, लेकिन लोगों के इधर-उधर भागने की आवाज़ें ज़रूर सुनाई दे रही थीं। आदेश ज़ोर-ज़ोर से दिए जा रहे थे, और तंबू के पास से गुज़रते सैनिकों के घोड़ों की घंटियों की लगातार झंकार से मुझे लगा कि वहाँ अफरा-तफरी मची हुई है। मैं लगभग तीन घंटे से तंबू में था, तभी एक सैनिक अंदर आया और मुझे बाहर जाने का आदेश दिया।
"वे उसका सिर काट देंगे," उसने अपने साथियों से कहा। मेरी ओर मुड़कर उसने अपने गले पर हाथ रखकर एक संकेत दिया।
"निकुत्ज़ा" (ठीक है), मैंने रूखेपन से कहा।
यह नहीं भूलना चाहिए कि जब कोई तिब्बती इस तरह के शब्द सुनता है, तो वह आमतौर पर घुटनों के बल बैठकर आँसू बहाते हुए, सिसकते हुए और लगातार प्रार्थना करते हुए दया की भीख माँगता है। इसलिए यह आश्चर्य की बात नहीं है कि तिब्बती मेरे जवाब पर कुछ हद तक हैरान थे। वे समझ नहीं पा रहे थे कि इसका क्या मतलब निकालें। मुझे दृढ़ता से नहीं, बल्कि अनिच्छा से बाहर ले जाया गया।
जिस दौरान मुझे कैद किया गया था, उस दौरान मिट्टी के घर के सामने नीले रंग की सजावट वाला एक विशाल सफेद तंबू लगाया गया था। उसके चारों ओर सैकड़ों सैनिक और ग्रामीण जमा थे - यह एक बेहद मनमोहक दृश्य था।
जैसे ही मुझे पास ले जाया गया, मैंने देखा कि तंबू का सामने का हिस्सा खुला हुआ था। अंदर बड़ी संख्या में लाल रंग के वस्त्र पहने, सिर मुंडे हुए और ऊनी लंबे वस्त्र धारण किए हुए लामा खड़े थे। तंबू से लगभग बीस गज की दूरी पर सैनिकों ने मुझे रोक दिया। मेरी कलाई, कोहनी और छाती पर पहले से ही लगी रस्सियों में और रस्सियाँ जोड़ दी गईं और उन्हें और कस दिया गया। मैंने देखा कि चंदन सिंह को आगे लाया जा रहा है। मुझे लामाओं के सामने ले जाने के बजाय, उन्होंने मुझे मिट्टी के घर के पीछे धकेल दिया ताकि मैं आगे का दृश्य न देख सकूँ। मैंने चंदन सिंह को ऊँची, गुस्से भरी आवाज़ में पूछताछ करते हुए सुना, और उन पर मेरा मार्गदर्शक होने का आरोप लगाया गया। फिर मैंने भीड़ की ज़ोरदार चीखें सुनीं, और फिर सन्नाटा छा गया।

कुछ ही क्षणों बाद मैं भयभीत हो गया। मैंने सुना—हाँ, यह कोड़े की आवाज़ थी, जिसके बाद मेरे बेचारे नौकर की कर्कश कराहें सुनाई दीं, जिस पर वे स्पष्ट रूप से कोड़े चला रहे थे।

मैंने उन प्रहारों को गिना, जिनकी घिनौनी आवाज़ आज भी मेरी स्मृति में अच्छी तरह अंकित है, क्योंकि वे नियमित रूप से और लगातार एक के बाद एक बीस, तीस, चालीस और पचास तक गिरते गए। फिर एक विराम आया।

अब कई सैनिक मुझे पकड़ने के लिए आए। पहले मुझे घसीटकर ले जाया गया, फिर मुझे जबरदस्ती अदालत के सामने पेश किया गया।

तंबू के बीचोंबीच एक ऊँची चौकी पर एक व्यक्ति बैठा था, जिसने चमकीले पीले रंग की ढीली पतलून और लंबी आस्तीनों वाला छोटा पीला कोट पहना हुआ था। उसके सिर पर सोने से जड़ी एक विशाल चार नोक वाली टोपी थी, जिस पर तीन बड़ी-बड़ी आँखें बनी हुई थीं। वह युवा दिख रहा था। उसका सिर मुंडा हुआ था, क्योंकि वह सर्वोच्च कोटि का लामा था, एक ग्रैंड लामा और प्रांत का पोम्बो या गवर्नर, जिसके पास एक सामंती राजा के बराबर शक्तियाँ थीं। उसके दाहिनी ओर एक बलवान, शक्तिशाली लाल लामा खड़ा था, जिसके हाथ में एक विशाल दोधारी तलवार थी। उसके पीछे और अगल-बगल कई अन्य लामा, अधिकारी और सैनिक थे। जब मैं चुपचाप खड़ा था और उसके सामने अपना सिर ऊँचा किए बैठा था, तो दो-तीन लामा मेरी ओर दौड़े और मुझे घुटने टेकने का आदेश दिया। उन्होंने मुझे घुटने टेकने के लिए मजबूर करने की कोशिश की, लेकिन मैं खड़ा रहने में सफल रहा।

मेरे सामने घुटने टेकने से इनकार करने पर पोम्बो क्रोधित हो गया और उसने मुझसे हिंसक शब्दों में बात की; लेकिन चूंकि वह शास्त्रीय तिब्बती भाषा बोलता था और मैं केवल बोलचाल की भाषा, इसलिए मुझे उसकी एक भी बात समझ नहीं आई। मैंने विनम्रतापूर्वक उससे ऐसे कठोर शब्दों का प्रयोग न करने का अनुरोध किया, क्योंकि वे मेरे लिए समझ से परे थे।

इस अनुरोध को सुनकर वह महान व्यक्ति स्तब्ध रह गया। चेहरे पर शिकन लिए उसने मुझे बाईं ओर देखने का इशारा किया। सैनिक और लामा एक तरफ हट गए, और मैंने देखा कि चंदेन सिंह कमर से नीचे तक नग्न अवस्था में, लामाओं और सैनिकों की एक पंक्ति के सामने औंधे मुंह लेटा हुआ था। उसके दोनों ओर दो शक्तिशाली लामा, सीसे से भारी गांठदार चमड़े की पट्टियों से उसे फिर से दंडित करने लगे, कमर से लेकर पैरों तक ज़ोरदार प्रहार करते हुए। उसका पूरा शरीर खून से लथपथ था। हर बार जब कोड़ा उसकी घायल त्वचा पर पड़ता, तो मेरा दुःख इतना गहरा हो जाता कि ऐसा लगता मानो सीने में खंजर घोंप दिया गया हो, लेकिन मैंने अपनी भावनाओं को कभी प्रकट नहीं किया। मैं पूर्वी लोगों को इतनी अच्छी तरह जानता था कि उस व्यक्ति पर दया दिखाना मेरे लिए संभव नहीं था, क्योंकि इससे उसे और भी कड़ी सजा मिलती। इसलिए मैंने उसकी यातना को एक सामान्य घटना की तरह देखा। मेरे पास बैठे लामाओं ने मेरी नाक के नीचे मुट्ठी हिलाई और समझाया कि अब मेरी बारी आएगी। मैंने मुस्कुराते हुए हमेशा की तरह "निकुत्ज़ा, निकुत्ज़ा" (बहुत बढ़िया, बहुत बढ़िया) दोहराया।

पोम्बो और उसके अधिकारी असमंजस में थे। उनके चेहरों से यह स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहा था।

पोम्बो, एक स्त्री-समान, युवा, सुंदर व्यक्ति, जिसका व्यवहार लगभग उन्मादी था, सम्मोहन प्रयोगों के लिए एक शानदार विषय प्रतीत होता था। मेरे ऐसा सोचने का ठोस कारण था। जैसा कि हम आगे देखेंगे, वह पहले भी कई बार सम्मोहन के प्रभाव में रह चुका था। वह दो मिनट से अधिक समय तक, मानो किसी समाधि में हो, अपनी आँखें मेरी आँखों पर गड़ाए रहा।

उस व्यक्ति में एक अद्‌भुत और अचानक परिवर्तन आया। कुछ क्षण पहले उसकी आवाज़ घमंडी और क्रोधित थी, लेकिन अब वह नरम और दयालु प्रतीत हो रही थी। उसके आसपास के लामा अपने स्वामी को उग्र क्रोध से शांत मेमने में बदलते देखकर चिंतित थे। उन्होंने मुझे पकड़ लिया और उसकी नज़रों से दूर उस स्थान पर ले गए जहाँ चंदन सिंह को दंडित किया जा रहा था। यहाँ भी मुझे घुटने टेकने के लिए मजबूर नहीं किया जा सका, इसलिए अंततः मुझे पोम्बो के अधिकारियों के सामने बैठने की अनुमति दी गई।

दो लामाओं ने मेरी नोटबुक और नक्शे निकाले और मुझसे गहन पूछताछ शुरू कर दी, यह कहते हुए कि यदि मैंने सच बोला तो मुझे बख्श दिया जाएगा; अन्यथा मुझे कोड़े मारे जाएंगे और फिर मेरा सिर काट दिया जाएगा।

मैंने जवाब दिया कि मैं सच बोलूंगा, चाहे वे मुझे दंडित करें या न करें।

भड़कीले लाल रेशमी कोट में, जिसके कॉलर पर सोने की कढ़ाई थी, एक लामा, जो चंदेन सिंह की पिटाई में शामिल एक विशालकाय और क्रूर व्यक्ति था, ने मुझसे कहा कि मुझे कहना होगा कि "मेरे सेवक ने मुझे तिब्बत का रास्ता दिखाया था और नक्शे व रेखाचित्र बनाए थे।" अगर मैंने ऐसा कहा, तो वे मुझे रिहा करने और सीमावर्ती इलाके में वापस भेजने के लिए तैयार थे, और वादा किया कि वे मुझे आगे कोई नुकसान नहीं पहुँचाएँगे। वे मेरे सेवक का सिर काट देंगे, बस इतना ही, लेकिन मुझे कोई शारीरिक चोट नहीं पहुँचाई जाएगी।

मैंने लामाओं को स्पष्ट रूप से समझाया कि नक्शों और रेखाचित्रों के लिए और निषिद्ध भूमि में इतनी दूर तक पहुँचने के लिए मैं ही पूरी तरह से जिम्मेदार था। मैंने कई बार धीरे-धीरे और स्पष्ट रूप से दोहराया कि मेरा सेवक निर्दोष था, और इसलिए उसे दंडित करने का कोई कारण नहीं था। उसने केवल मेरे आदेशों का पालन करते हुए मेरा तिब्बत तक मेरा अनुसरण किया था, और यदि किसी को दंडित किया जाना था, तो केवल मुझे ही दंडित किया जाना था, मेरे दोनों सेवकों को नहीं।

इस पर लामा क्रोधित हो गए। उनमें से एक ने अपने चाबुक के पिछले हिस्से से मेरे सिर पर ज़ोरदार प्रहार किया। मैंने ऐसा दिखाया जैसे मुझे कुछ पता ही नहीं चला, हालाँकि इससे मेरे सिर की त्वचा में काफी दर्द हुआ।

"तो हम तुम्हें और तुम्हारे आदमी को तब तक पीटेंगे जब तक तुम हमारी बात न कह दो!" लामा ने क्रोधित होकर कहा।

मैंने आत्मविश्वास से जवाब दिया, "आप चाहें तो हमें पीट सकते हैं, लेकिन अगर आप हमें अन्यायपूर्ण तरीके से दंडित करेंगे तो इसका परिणाम आप पर ही पड़ेगा। आप हमारी खाल नोच सकते हैं, आप हमें खून बहाकर मार सकते हैं, लेकिन आप हमें दर्द का एहसास नहीं करा सकते।"

देशद्रोही एंडो, जो हिंदुस्तानी भाषा धाराप्रवाह बोलता था, हमारी बातचीत में जब भी कोई अड़चन आती, दुभाषिया का काम करता था। तिब्बती भाषा के मेरे ज्ञान और उस व्यक्ति की मदद से, मैंने तिब्बतियों को हर बात यथासंभव स्पष्ट रूप से समझाई। इसके बावजूद, वे मेरे बेचारे नौकर को बेरहमी से कोड़े मारते रहे। दर्द से कराहते हुए वह ज़मीन को दांतों से काट रहा था, हर कोड़े से उसकी त्वचा और मांस के टुकड़े छिल रहे थे। चंदन सिंह ने वीरता का परिचय दिया। उसके होंठों से न तो शिकायत का एक शब्द निकला और न ही दया की भीख। उसने कहा कि उसने सच कहा है और उसे कुछ और नहीं कहना है। सभी लामाओं और सैनिकों की निगाहों के सामने, मैं इस क्रूरतापूर्ण दृश्य के सामने बनावटी शांति से बैठा रहा, जब तक कि मेरी उदासीनता से क्रोधित होकर सैनिकों को मुझे घसीटकर ले जाने का आदेश नहीं दिया गया। वे मुझे फिर से मिट्टी के घर के पीछे ले गए, जहाँ से मैं चंदन सिंह से पूछताछ कर रहे लामाओं की क्रोधित चीखें और मेरे बेचारे नौकर पर पड़ रहे कोड़ों की भयानक आवाज़ें स्पष्ट रूप से सुन सकता था।

तेज बारिश शुरू हो गई। यह हमारे लिए सौभाग्य की बात थी, क्योंकि तिब्बत में, चीन की तरह ही, बारिश का लोगों पर गहरा प्रभाव पड़ता है। यहां तक कि कई बार तो सामूहिक नरसंहार भी बारिश रुकने तक स्थगित कर दिए गए हैं।

उस दिन भी यही हाल था। जैसे ही बारिश की पहली बूँदें गिरीं, सैनिक और लामा तंबुओं के अंदर इधर-उधर दौड़ने लगे। मुझे जल्दी से बस्ती के सबसे दूर वाले तंबू में घसीट कर ले जाया गया, जो उन सैनिकों से भर गया जिनकी देखरेख में मुझे सौंपा गया था।

फुटनोट:

[10] लामाओं ने बाद में कहा कि यही संख्या थी।

[11] लामाओं, ग्रामीणों और सैनिकों की गिनती।

अध्याय XIX

मृत्युदंड की धमकियाँ

तंबू के दूसरे छोर पर एक उच्च पदस्थ अधिकारी पालथी मारकर बैठे थे। उन्होंने सोने और तेंदुए की खाल से सजी एक सुंदर गहरे लाल रंग की कुर्ती पहनी हुई थी और चीनी शैली के काले और लाल रंग के चमड़े के ऊंचे जूते पहने हुए थे। उनकी कमर में एक सुंदर तलवार टंगी हुई थी, जिसका ठोस चांदी का म्यान मूंगे और मैलाकाइट के बड़े-बड़े टुकड़ों से जड़ा हुआ था।

यह व्यक्ति, जिसकी उम्र लगभग पचास से साठ वर्ष के बीच थी, बुद्धिमान, सभ्य, ईमानदार और सौम्य स्वभाव का था। मुझे लगा कि वह मेरा मित्र बनेगा। वास्तव में, जहाँ सैनिकों और लामाओं ने मेरे साथ क्रूरतापूर्ण व्यवहार किया और बेहद नीच थे, वहीं इस अधिकारी ने अकेले ही मेरे प्रति कुछ शिष्टाचार दिखाया। उन्होंने अपने बगल में जगह बनाई और मुझे वहाँ बैठने के लिए कहा।

उन्होंने गरिमापूर्ण स्वर में कहा, "मैं एक सैनिक हूँ, लामा नहीं। मैं अपने आदमियों के साथ ल्हासा से तुम्हें गिरफ्तार करने आया हूँ। अब तुम हमारे कैदी हो। तुमने कोई भय नहीं दिखाया, और मैं तुम्हारा सम्मान करता हूँ।"

इतना कहकर उसने अपना सिर झुकाया और अपना माथा मेरे माथे से सटा दिया, और अपनी जीभ बाहर निकाल दी। फिर उसने एक इशारा किया जिसका अर्थ था कि यद्यपि वह और कुछ कहना चाहता था, सैनिकों की उपस्थिति के कारण वह कुछ नहीं कह सकता था।

बाद में हमारी दोस्ताना बातचीत शुरू हुई, जिसके दौरान उन्होंने बताया कि वे रूपुन (जनरल से नीचे का पद) हैं। मैंने उन्हें अंग्रेज़ सैनिकों और हथियारों के बारे में विस्तार से समझाने की कोशिश की। उन्होंने मेरी हर बात में गहरी दिलचस्पी दिखाई। बदले में उन्होंने मुझे तिब्बत के सैनिकों के बारे में रोचक जानकारी दी। तिब्बत में युद्ध के समय या कर्तव्य निभाने की आवश्यकता पड़ने पर हर पुरुष को सैनिक माना जाता है। नियमित सेना में सत्रह वर्ष की आयु से सभी स्वस्थ और तंदुरुस्त लड़के भर्ती हो सकते हैं। तिब्बती सैनिकों में सबसे प्रशंसित गुणों में से एक है अच्छी घुड़सवारी, और उसके बाद असीम आज्ञाकारिता। रूपुन तिब्बती बंदूकों की कसम खाते थे, जिन्हें वे दुनिया का सबसे उपयोगी हथियार मानते थे। उनके अनुसार, जब तक आपके पास पर्याप्त बारूद है, आप किसी भी चीज़ का उपयोग प्रक्षेपास्त्र के रूप में कर सकते हैं। कंकड़, मिट्टी या कीलें किसी भी सीसे की गोली जितना ही अच्छा काम करती हैं।

उन्होंने मुझे बताया कि इन हथियारों का बड़ी मात्रा में निर्माण ल्हासा और सिगात्ज़ (शिगात्ज़े) में होता था। शहरों के बाहर रहने वाले अधिकांश तिब्बती पुरुषों के पास माचिस वाली बंदूकें होती थीं। बारूद का निर्माण देश में ही सॉल्टपीटर और गंधक से किया जाता था।

रूपुन ने देखा कि मैं तिब्बती शब्द कितनी जल्दी सीख लेता था, इसलिए उन्हें मुझे तिब्बती सेना के विभिन्न पदों के नाम सिखाने में विशेष आनंद आता था, जैसे कोई बच्चे को सिखाता है। सबसे निचला पद चू-पुन था,

जिसके अधीन केवल दस सैनिक होते थे; फिर किआत्साम्बा-पुन या किया-पुन आता था, जो सौ सैनिकों का सेनापति होता था; और फिर तुंग-पुन, जो एक हजार सैनिकों का मुखिया होता था। हालांकि, इन अधिकारियों को शायद ही कभी पूरे सैनिक रखने की अनुमति होती थी। अक्सर "एक हजार सैनिकों के सेनापति" के अधीन अधिकतम तीन या चार सौ सैनिक ही होते थे। तुंग-पुन से ऊपर रूपुन आता था, जो एक प्रकार का सहायक सेनापति होता था; फिर दाह-पुन, जो एक बड़ा अधिकारी होता था; और सबसे ऊँचा पद मग-पुन (या मग-बुन, जैसा कि आमतौर पर उच्चारित किया जाता है), जो सेनापति होता था।

इनमें से एक जनरल से मेरी जान-पहचान ज्ञानेमा में हो चुकी थी। हालाँकि मेरे सूचना देने वाले ने कहा था कि अधिकारियों का चुनाव युद्ध में उनकी वीरता और घुड़सवारी तथा हथियारों के इस्तेमाल में उनकी कुशलता और क्षमता के आधार पर होता है, लेकिन मैं अच्छी तरह जानता था कि ऐसा नहीं था। ये पद मुख्य रूप से उन लोगों को दिए जाते थे जो लामाओं के विशेष संरक्षण में रहने वाले परिवारों के सदस्यों में से भुगतान करने में सक्षम होते थे। कई मामलों में तो ये पद नीलामी के माध्यम से बेचे जाते थे।

रूपुन में हास्यबोध की गहरी समझ थी। मैंने उन्हें बताया कि पिछली बार जब मेरा सामना तिब्बती सैनिकों से हुआ था और मेरे पास राइफल थी, तो वे कितनी तेज़ी से भाग गए थे। उन्होंने स्थिति को बखूबी समझा और कहा, "हाँ, मुझे पता है कि वे भागे थे, लेकिन डर के मारे नहीं। वे इसलिए भागे थे क्योंकि वे आपको नुकसान नहीं पहुँचाना चाहते थे।" इस पर मैंने जवाब दिया कि अगर ऐसा होता, तो उन्हें इतनी तेज़ी से भागने की ज़रूरत नहीं थी।

रूपुन को मेरी बात पर हंसी आ गई और उसने मेरे व्यंग्य पर ठहाका लगाया। उसने मेरी पीठ थपथपाई और कहा कि मैं सही था। उसने मुझे बंधा हुआ देखकर दुख जताया। उसे सख्त आदेश मिले थे कि मुझे खाना न दे और न ही मेरे बंधन खोले।

जो सैनिक पहले कठोर और निर्दयी थे, वे रूपुन और मेरे बीच हो रही दोस्ताना बातचीत को बड़े आश्चर्य से सुन रहे थे, जो तिब्बत में बंदी बनाने वाले और कैदी के बीच आम बात नहीं है। अपने सरदार के उदाहरण का अनुसरण करते हुए, वे भी काफी दयालु और सम्मानजनक हो गए। उन्होंने मेरे नीचे एक तकिया रखा और मुझे थोड़ा और आराम देने की कोशिश की।

शाम होते-होते रूपुन को पोम्बो के सामने बुलाया गया। पहरेदारों की जगह नए पहरेदार तैनात किए गए। यह स्थिति बदतर हो गई। नए आए लोग बेहद हिंसक थे। उन्होंने मुझे तंबू में सम्मान के स्थान पर मेरी गरिमापूर्ण सीट से घसीटकर दूर कर दिया और मुझे ईंधन के रूप में इस्तेमाल होने वाले गोबर के ढेर पर ज़ोर से पटक दिया।

"प्लेनकिस के लिए यही जगह सही है!" उनमें से एक आदमी चिल्लाया, "तंबू के सबसे अच्छे हिस्से में नहीं।"

उन्होंने मुझ पर झपट्टा मारा, और हालांकि मैंने ज़रा भी प्रतिरोध नहीं किया, उन्होंने फिर से मेरे पैरों को एक साथ बांध दिया। मेरे घुटनों के चारों ओर एक अतिरिक्त रस्सी बांधी गई। इन रस्सियों के सिरे लंबे छोड़े गए थे, और प्रत्येक सिरे को एक सैनिक के हवाले कर दिया गया था।

तिब्बती तंबू का कोई भी हिस्सा कभी साफ नहीं होता था। जिस जगह मुझे रात को आराम करना था, वह सबसे गंदी थी। रस्सियों से इतनी बुरी तरह बंधा हुआ था कि मेरे शरीर में गहरे निशान पड़ गए थे, सोना नामुमकिन था। इससे भी बुरा यह था कि मैं जल्द ही कीड़े-मकोड़ों से भर गया, जो तंबू में झुंड बनाकर घूम रहे थे। इस समय से लेकर मेरी कैद के अंत तक, यानी पच्चीस दिनों तक, मैंने इस कीड़े-मकोड़ों से असहनीय यातनाएँ झेलीं। तंबू के अंदर चारों ओर तलवारें खींचे सैनिक तैनात थे। बाहर भी और सैनिक तैनात थे।

रात अजीबोगरीब घटनाओं से भरी थी। बाहर से थोड़ी-थोड़ी देर में चीखने की आवाज़ें सुनाई दे रही थीं, जिनका जवाब तंबू के अंदर मौजूद पहरेदारों में से कोई एक दे रहा था। उनका काम था आदमियों को जगाए रखना और यह सुनिश्चित करना कि मैं अभी भी वहीं हूँ।

आधी रात को रूपुन लौट आया। मैंने देखा कि वह बहुत परेशान लग रहा था। वह मेरे पास बैठ गया। टिमटिमाती आग की रोशनी और मक्खन से भरे पीतल के कटोरे में जलती बाती की वजह से उसके चेहरे पर गहरी चिंता के भाव दिखाई दिए। उसकी दयालु दृष्टि से मुझे लगा कि वह मुझे कोई बुरी खबर सुनाने वाला है। मेरा अनुमान सही निकला। उसने मुझे उस गंदी जगह से उठाया जहाँ सैनिकों ने मुझे असहाय अवस्था में फेंक दिया था, और तंबू के एक अधिक आरामदायक और साफ हिस्से में लिटा दिया। फिर उसने एक सैनिक को मेरे लिए कंबल लाने का आदेश दिया। इसके बाद, मुझे आश्चर्य हुआ, वह बहुत कठोर हो गया और बोला कि उसे मेरी जंजीरों की जाँच करनी होगी। वह बहुत क्रोधित हो गया और सैनिकों को मुझे इतनी असुरक्षित तरीके से बांधने के लिए डांटने लगा, और गांठों को कसने लगा, जो मुझे असंभव लगा। हालाँकि उसने ऐसा करने में अपनी पूरी ताकत लगाने का नाटक किया, लेकिन मुझे आश्चर्य हुआ कि मेरी जंजीरें वास्तव में ढीली हो रही थीं। फिर उसने जल्दी से मुझे भारी कंबल से ढक दिया।

बड़े तंबू के दूसरे छोर पर सैनिक किसी मामूली बात पर ज़ोर-ज़ोर से बहस कर रहे थे। रूपुन नीचे झुककर, कंबल ओढ़ने का नाटक करते हुए फुसफुसाया:

"कल तुम्हारा सिर काट दिया जाएगा। आज रात ही भाग जाओ। बाहर कोई सैनिक नहीं हैं।"

वह भले आदमी दरअसल मेरे भागने की सारी तैयारी कर रहा था। उसने बत्ती बुझा दी और मेरे बगल में आकर सो गया। जब सारे आदमी सो गए थे, तब तंबू के नीचे से निकलकर चुपके से भाग जाना अपेक्षाकृत आसान होता। मैंने आसानी से रस्सियों से हाथ छुड़ा लिए थे और बाकी बंधन खोलने में भी कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए थी; लेकिन यह सोचकर कि मैं अपने दो आदमियों को तिब्बतियों के भरोसे छोड़ रहा हूँ, मैं भागने की योजना को अंजाम नहीं दे पाया। रुपुन ने उठकर देखा कि पहरेदार सो रहे हैं, तो वह फिर से मेरे पास लेट गया और बुदबुदाया:

"नेलोन, नेलोन; पलाडो" (वे सो रहे हैं; जाओ)।

प्रस्ताव भले ही नेक इरादे से दिया गया था और लुभावना था, लेकिन मैंने उससे कहा कि मुझे अपने आदमियों के साथ ही रहना होगा।

मेरे हाथ खुले होने के कारण मैं रात में थोड़ी देर सो सका। सुबह होते ही मैंने अपने हाथ फिर से रस्सियों में डाल लिए, क्योंकि मुझे डर था कि कहीं वे रूपुन पर मेरे हाथ खोलने का आरोप न लगा दें और उसे मेरी वजह से सज़ा न मिल जाए।

रूपुन, जो काफी निराश लग रहे थे, ने मेरी कलाई पर रस्सियाँ फिर से कसकर बाँध दीं। हालाँकि वे मेरे द्वारा दिए गए उड़ान के अवसर का लाभ न उठाने से नाराज़ प्रतीत हुए, फिर भी उन्होंने मेरे प्रति और भी अधिक आदर और सम्मान का भाव दिखाया। उन्होंने अपना लकड़ी का कटोरा भी निकाला, जिसे उन्होंने रसंग से गर्म चाय से भर दिया, और मुझे पीने के लिए मेरे मुँह तक उठाया।

मेरी प्यास और भूख को भांपते हुए, उस भले आदमी ने न केवल मेरी प्यास बुझने तक बार-बार प्याला भरा, बल्कि उसने उसमें त्साम्बा और मक्खन के टुकड़े भी मिलाए, जिन्हें उसने अपनी उंगलियों से मेरे मुंह में ठूंस दिया।

यह देखकर सचमुच दिल को छू गया कि कैसे दयालुता से प्रेरित होकर सैनिकों ने उसका अनुकरण किया और एक-एक करके मुट्ठी भर त्साम्बा और चूरा निकालकर मेरे मुँह में डाल दिए। उनके हाथ बहुत साफ नहीं थे, लेकिन ऐसे मौकों पर ज्यादा बारीकी से देखना ठीक नहीं होता। मैं इतना भूखा था कि मुझे दिया गया खाना स्वादिष्ट लग रहा था। मैं दो रात और एक दिन से बिना भोजन के था, और लड़ाई की थकान और उस दौरान हुए कई रोमांचक अनुभवों के कारण मेरी भूख बहुत तीव्र थी।

रूपुन ही नहीं, बल्कि सैनिक भी मेरे साथ जिस विनम्रता और सम्मान से पेश आ रहे थे, उससे मुझे लगा कि मेरा अंत निकट है। चंदेन सिंह और मानसिंह के बारे में कोई खबर न मिलने से मैं दुखी था। उनके बारे में पूछे गए सवालों के जवाब देने में सैनिकों की चुप्पी ने मुझे भयभीत कर दिया कि कहीं कोई भयानक घटना न घट गई हो। फिर भी, हालांकि मेरे जेलर मित्रवत थे, मैंने अपनी चिंता नहीं जाहिर की, बल्कि जो कुछ भी हो रहा था उसे स्वाभाविक ही मान लिया। मैंने दिन का पहला भाग सैनिकों के साथ जीवंत बातचीत में बिताया, कुछ अपने विचारों को भटकाने के लिए और कुछ तिब्बती भाषा का ज्ञान बढ़ाने के लिए।

अध्याय XX

एक भयानक यात्रा

दोपहर के कुछ ही समय बाद एक सैनिक तम्बू में दाखिल हुआ और अपने भारी हाथ से मेरे कंधे पर प्रहार करते हुए चिल्लाया:

"ओहे!" (यह तिब्बती भाषा का एक विस्मयबोधक शब्द है जिसका प्रयोग अक्सर उच्च वर्ग के लोग बातचीत शुरू करते समय करते हैं। इसका अर्थ है "इधर देखो।")

"ओहे!" उसने दोहराया; "सूरज डूबने से पहले तुम्हें कोड़े मारे जाएँगे, तुम्हारी दोनों टांगें तोड़ दी जाएँगी, तुम्हारी आँखें निकाल दी जाएँगी, और फिर तुम्हारा सिर काट दिया जाएगा!"

वह आदमी, जो काफी गंभीर लग रहा था, हर वाक्य के साथ अपनी बात को समझाने के लिए उचित हावभाव का इस्तेमाल कर रहा था। मैं उस पर हँस पड़ा और ऐसा दिखावा किया जैसे यह सब एक मज़ाक हो, आंशिक रूप से इसलिए कि मुझे लगा कि उन्हें डराने का यही सबसे अच्छा तरीका है, और आंशिक रूप से इसलिए कि मेरे सामने जो कार्यक्रम रखा गया था वह इतना विस्तृत लग रहा था कि मुझे लगा कि इसका उद्देश्य केवल मुझे डराना ही हो सकता है।

सिपाही के शब्दों ने तंबू में मौजूद मेरे मित्रवत रक्षक दल के सदस्यों के मन में उदासी भर दी। जब मैंने उन्हें खुश करने की कोशिश की, तो उन्होंने साफ-साफ कहा कि मैं ज्यादा देर तक नहीं हंसूंगा। कुछ तो गड़बड़ थी। वे लोग तंबू के अंदर-बाहर भागते रहे और आपस में फुसफुसाते रहे। जब मैंने उनसे बात की तो उन्होंने कोई जवाब नहीं दिया, और जब मैंने बार-बार उनसे जवाब मांगा तो उन्होंने इशारे से कहा कि अब उन्हें चुप रहना होगा।

लगभग आधे घंटे बाद एक और व्यक्ति, अत्यधिक उत्तेजित अवस्था में, तम्बू में दौड़ा और मेरे पहरेदारों को मुझे बाहर ले जाने का इशारा किया। उन्होंने ऐसा किया, लेकिन मेरे बंधन पहले से भी अधिक कस दिए और मेरी छाती और बाहों के चारों ओर अतिरिक्त रस्सियाँ बाँध दीं। इस प्रकार मुझे मिट्टी के घर की ओर ले जाया गया और एक कमरे में ले जाया गया। बाहर बड़ी संख्या में सैनिक और ग्रामीण जमा थे। कुछ देर प्रतीक्षा करने के बाद, मानसिंह को, कसकर बाँधकर, उसी कमरे में लाया गया। अपने साथी को फिर से देखकर मुझे इतनी खुशी हुई कि मैंने दरवाजे से झाँक रही भीड़ के अपमानों पर कोई ध्यान नहीं दिया। थोड़ी देर बाद एक लामा मुस्कुराते हुए अंदर आए और कहा कि उन्हें मुझे एक अच्छी खबर देनी है।

"हमारे पास यहाँ टट्टू हैं," उसने कहा, "और हम तुम्हें सीमा पर वापस ले जा रहे हैं, लेकिन पोम्बो आज तुमसे पहले मिलना चाहता है। विरोध मत करना। चलो तुम्हारी कलाई पर बंधी रस्सियों को इन लोहे की हथकड़ियों से बदल देते हैं।"

यहां उसने हथकड़ियों का एक भारी जोड़ा निकाला जिसे उसने अपने कोट के नीचे छिपा रखा था।

"जब हम आपको उनके समक्ष ले जा रहे होंगे, तब आप इन्हें कुछ क्षणों से अधिक समय तक नहीं पहनेंगे। उसके बाद आप मुक्त हो जाएंगे। हम सूर्य और कुंजुक-सुम की कसम खाकर आपसे वादा करते हैं कि हम आपके साथ नरमी से पेश आएंगे।"

मैंने विरोध न करने का वादा किया, मुख्यतः इसलिए क्योंकि मेरे पास ऐसा करने का कोई मौका ही नहीं था। अधिक सुरक्षा के लिए उन्होंने मेरे पैर बांध दिए और मेरी गर्दन में एक फिसलने वाली गांठ लगा दी; फिर मुझे खुले में ले जाया गया, जहाँ तलवारें खींचे सैनिकों का एक घेरा मेरे चारों ओर खड़ा था। उन्होंने मुझे ज़मीन पर औंधे मुँह लिटा दिया और मुझे कसकर पकड़े रखा जबकि उन्होंने मेरी कलाई से रस्सियाँ खोलीं। उनकी जगह लोहे की बेड़ियाँ, एक भारी जंजीर से जुड़ी हुई, लगा दी गईं। उन्होंने भद्दे ताले को कसने में कुछ समय लिया, जिसके बाद, सब कुछ तैयार हो जाने पर, उन्होंने मेरे पैर खोल दिए।

जब मैं दोबारा खड़ा हुआ और यह जानते हुए कि मैं अपने हाथ नहीं छुड़ा सकता, तो उन्होंने मुझ पर गालियों की बौछार कर दी। ये गालियाँ मुझे एक व्यक्ति के रूप में नहीं, बल्कि एक अंग्रेज (प्लेन्की) होने के नाते दी जा रही थीं। उन्होंने मुझ पर थूका और कीचड़ उछाला। लामाओं का व्यवहार बाकियों से भी बदतर था। जिस लामा ने शपथ ली थी कि अगर मैं चुपचाप हथकड़ी पहन लूँ तो मेरे साथ किसी भी तरह का दुर्व्यवहार नहीं किया जाएगा, वही मेरे उत्पीड़कों में सबसे आगे था और भीड़ को और अधिक क्रूरता के लिए उकसाने में सबसे ज़्यादा तत्पर था।

अचानक भीड़ का ध्यान रूपुन की ओर आकर्षित हुआ, जो कई सैनिकों और अधिकारियों के साथ आ रहा था। वह उदास लग रहा था। उसका चेहरा भयानक रूप से पीला पड़ गया था। उसकी निगाहें ज़मीन पर टिकी हुई थीं। धीमी आवाज़ में बोलते हुए उसने आदेश दिया कि मुझे फिर से मिट्टी के घर के अंदर ले जाया जाए।

कुछ क्षण बाद वह अंदर आया और अपने पीछे दरवाजा बंद कर लिया, इससे पहले उसने कमरे में मौजूद सभी लोगों को बाहर निकाल दिया था। तिब्बती संरचनाओं में इस प्रकार की संरचनाओं में छत में एक वर्गाकार छिद्र होता है जिसके माध्यम से हवा आती है और प्रकाश आता है।

रूपुन ने करुणा के प्रतीक के रूप में अपना माथा मेरे माथे पर रखा और फिर दुख से अपना सिर हिलाया।

“अब कोई उम्मीद नहीं बची,” उसने फुसफुसाते हुए कहा; “आज रात तुम्हारा सिर काट दिया जाएगा। लामा लोग बुरे हैं। मेरा दिल दुख रहा है। तुम मेरे भाई जैसे हो, और मैं बहुत दुखी हूँ...”

उस भले-बुजुर्ग ने अपनी भावनाओं को मुझसे छुपाने की कोशिश की और इशारे से यह जता दिया कि वह अब और नहीं रुक सकता, कहीं ऐसा न हो कि उस पर मेरा दोस्त होने का आरोप लग जाए।

भीड़ फिर से कमरे में घुस गई। लामाओं और सैनिकों ने मुझे एक बार फिर बाहर खींच लिया। मेरे हथकड़ी की चाबी किसके पास रहेगी, इस पर कुछ चर्चा हुई और अंततः वह एक अधिकारी को सौंप दी गई, जो अपने टट्टू पर सवार होकर ल्हासा की दिशा में तेज़ी से चला गया।

तभी मुझे चंदेन सिंह की कमजोर, पीड़ादायक आवाज सुनाई दी जो मुझे पुकार रही थी:
"हज़ूर, हज़ूर, हम मर रहे हैं!" (हे प्रभु, हे प्रभु, मैं मर रहा हूँ!) दर्द भरी आवाज़ों की दिशा में सिर घुमाते हुए मैंने देखा कि मेरा वफादार नौकर, जिसके हाथ पीछे बंधे हुए थे, मिट्टी के घर के दूसरे कमरों में से एक के दरवाजे की ओर पेट के बल घिसटता हुआ जा रहा था। उसका बेचारा चेहरा पहचानना मुश्किल था, उस पर भयानक पीड़ा के निशान थे।
मैं और बर्दाश्त नहीं कर सका। अपने कंधों से अपने रक्षकों को हटाते हुए, मैंने उस बेचारे तक पहुँचने का प्रयास किया, और लगभग उसके पास पहुँच ही गया था कि सैनिक मुझ पर झपटे, मुझे जकड़ लिया, और मुझे उठाकर एक टट्टू की पीठ पर फेंक दिया।
अब मुझे सबसे बुरे की आशंका होने लगी। मैंने अपने बहादुर नौकर को यह कहकर हिम्मत देने की कोशिश की कि मुझे तकलाकोट ले जाया जा रहा है और उसे अगले दिन मेरे पीछे लाया जाएगा। दरवाजे तक रेंगते हुए पहुँचने में उसकी सारी ताकत खत्म हो गई थी। उसे बेरहमी से पकड़ा गया और मिट्टी के घर के कमरे में वापस धकेल दिया गया, जिससे हम एक शब्द भी नहीं बोल पाए। कुली मानसिंह को, उसके हाथ बांधकर, बिना काठी वाले टट्टू पर बिठा दिया गया।
जिस टट्टू पर मुझे फेंका गया था, उसकी काठी का वर्णन करना कठिन है। वास्तव में वह एक बहुत ऊँची पीठ वाली लकड़ी की काठी थी, जैसे मैक्सिकन काठी होती है। पीठ के सबसे ऊँचे हिस्से से पाँच-छह नुकीले लोहे के कांटे क्षैतिज रूप से निकले हुए थे। जब मैं यातना के इस उपकरण पर बैठा था, तो मैं वास्तव में कांटों पर नहीं बैठा था, बल्कि कांटे मेरी कमर के ठीक नीचे पीठ में चुभ रहे थे।
मेरे पहरे में बीस-तीस घुड़सवार सैनिक बंदूकें और तलवारें लेकर शामिल हो गए थे, और हम तेज़ी से आगे बढ़े। मेरे आगे चल रहा एक घुड़सवार रस्सी की मदद से मेरे टट्टू को खींच रहा था, क्योंकि मेरे हाथ पीछे की ओर हथकड़ी से बंधे थे। इस तरह हमने कई मील तक पैदल यात्रा की।
काठी में लगे उन भयानक नुकीले कांटों को छोड़कर, सवारी इतनी बुरी नहीं होती। जिस टट्टू पर मैं सवार था, वह बहुत फुर्तीला था, और आसपास का इलाका अनोखा और दिलचस्प था। हम पीले रेत के टीलों की एक श्रृंखला से आगे बढ़े, जिनमें से कुछ दो-तीन सौ फीट ऊंचे थे, जबकि अन्य बीस-तीस फीट से अधिक ऊंचे नहीं थे। ऐसा लगता था कि रेत पानी की तुलना में हवा द्वारा अधिक जमा की गई थी, हालांकि यह भी संभव है कि विशाल नदी के स्तर से बहुत ऊपर न होने के कारण, पूरा बेसिन कभी पूरी तरह से पानी में डूबा रहा हो। ब्रह्मपुत्र के उत्तर में स्थित पर्वत श्रृंखला और नदी के बीच का पूरा क्षेत्र इन रेत के टीलों से ढका हुआ था, सिवाय कुछ स्थानों के जहां मिट्टी बहुत दलदली थी। यहां हमारे टट्टू गहरे, नरम कीचड़ में धंस गए। हम कई छोटी धाराओं को पार करते हुए और कई तालाबों के किनारे से गुजरते हुए आगे बढ़े। जिस पहाड़ी की चोटी पर वे मुझे ले जा रहे थे, वहां से मैं देख सकता था कि नदी के पास पहाड़ियों का घेरा और ऊंचाई बहुत अधिक थी, और उत्तर में स्थित पर्वत श्रृंखला के पास पहुंचते ही वे छोटी होती जा रही थीं। जैसे-जैसे हम पूर्व दिशा में आगे बढ़ते गए, उनकी संख्या और आकार में वृद्धि होती गई।

जिस परिस्थिति में मैं यात्रा कर रहा था, उससे यह पता लगाना संभव नहीं था कि रेत कहाँ से आई थी। चारों ओर के इलाके पर एक नज़र डालने मात्र से ही मुझे यकीन हो गया कि रेत दक्षिण से आई होगी। गड्ढों और लहरदार उभारों से यह स्पष्ट था कि रेत (लगभग) उत्तर दिशा में बही थी। मुझे पूरा विश्वास था कि यह रेत हवा द्वारा यहाँ जमा की गई थी, जो इसे भारत के मैदानों से हिमालय पर्वतमाला के ऊपर से ले आई थी।
मेरे रक्षक ने उस ऊँचे स्थान से चारों ओर नज़र दौड़ाई जहाँ से हम चढ़े थे। दूर पूर्व दिशा में, हमने धूल के बादल उड़ाते हुए बड़ी संख्या में घुड़सवारों को देखा। नरम रेत में धंसते हुए हमारे टट्टुओं के साथ हम पहाड़ी से नीचे उतरते हुए नए आने वालों की दिशा में चल पड़े, क्योंकि पहाड़ी के निचले हिस्से की ज़मीन कुछ सख्त थी।
हम एक असहनीय गति से मीलों का सफर तय करते रहे, जब तक कि हम उस स्थान पर नहीं पहुँच गए जहाँ एक पंक्ति में वही घुड़सवारों का काफिला खड़ा था जिसे हमने पहाड़ी की चोटी से देखा था। जैसे ही हम उसके पास पहुँचे, वह एक सुंदर दृश्य था, हालाँकि मेरे दर्द ने उस मनोरम दृश्य के आनंद को कुछ हद तक कम कर दिया जो मुझे अन्यथा मिल सकता था। बीच में लगभग सौ लाल लामा थे, जिनके साथ ध्वजवाहक थे जिनके सिर विशिष्ट चपटी, रोएँदार टोपियों से ढके हुए थे, और उतनी ही संख्या में सैनिक और अधिकारी अपने भूरे, लाल और काले रंग के कुर्ते पहने हुए थे - कुल मिलाकर लगभग दो सौ घुड़सवार।
पीले कोट और पतलून तथा अपनी विचित्र नुकीली टोपी पहने पोम्बो, लामाओं और सैनिकों की भीड़ के सामने एक शानदार टट्टू पर बैठा था।
आश्चर्य की बात यह थी कि जब मैं इस नई भीड़ के पास पहुँचा, तो मेरे टट्टू को ले जा रहे घुड़सवार ने रस्सी छोड़ दी, और टट्टू को बेरहमी से कोड़े मारे गए और वह बेकाबू होकर भागने लगा। मेरे अंगरक्षक सैनिकों ने लगाम कस ली और एक तरफ हट गए। टट्टू पोम्बो की दिशा में दौड़ पड़ा, और जब मैं उसके पास से गुजरा, तो एक आदमी, जिसका नाम मुझे बाद में नेर्बा (टोकचिम तारजुम का एक निजी सचिव) पता चला, घुटनों के बल बैठ गया, और अपनी बंदूक को उसके डंडे पर टिकाकर, जानबूझकर मुझ पर गोली चला दी।
हालांकि नेरबा को देश के सर्वश्रेष्ठ निशानेबाजों में गिना जाता था, और उनकी बंदूक की नली से मेरी दूरी चार गज से अधिक नहीं थी, फिर भी गोली मुझे चूक गई और मेरे बाएं कान के पास से सनसनाती हुई निकल गई। शायद मेरे घोड़े की तेज गति ने मुझे बचा लिया, क्योंकि निशानेबाज स्थिर निशाना नहीं लगा सका। बंदूक की अचानक और इतनी नज़दीक से हुई आवाज से मेरा टट्टू चौंक गया और डरकर उछलने-कूदने लगा। मैं किसी तरह अपनी जगह पर बैठा रहा, हालांकि काठी में लगे नुकीले कांटे मेरी रीढ़ की हड्डी के निचले हिस्से को बुरी तरह से छील रहे थे।

कई घुड़सवार आए और मेरे टट्टू को पकड़ लिया। मेरी यातनाओं के कार्यक्रम में एक और रोमांचक दृश्य की तैयारी की जा रही थी। एक तरह से इन लामाओं का स्वभाव खेल-खेल जैसा था, लेकिन मैंने मन ही मन कसम खाई कि वे मेरे साथ चाहे जो भी करें, मैं उन्हें यह देखकर संतुष्टि नहीं दूंगा कि वे मुझे चोट पहुँचा रहे हैं।

इसी सिद्धांत पर चलते हुए, मैंने ऐसा दिखाया जैसे मुझे नुकीली कीलों से मेरी रीढ़ की हड्डी से मांस छिलने का कोई असर महसूस नहीं हो रहा हो। जब वे मुझे पोम्बो के सामने ले गए ताकि उसे दिखा सकें कि मैं कितना खून से लथपथ हूँ, तो मैंने इतने बेहतरीन टट्टू की सवारी करने पर संतोष व्यक्त किया। यह देखकर वह थोड़ा हैरान हुआ।

लगभग चालीस-पचास गज लंबी याक के बालों की एक रस्सी लाई गई। उसके एक सिरे पर लगा कुंडा मेरी हथकड़ियों से बांध दिया गया, और दूसरा सिरा एक घुड़सवार ने पकड़ रखा था। हम फिर से अपने बेतहाशा सफर पर निकल पड़े, इस बार हमारे पीछे न केवल गार्ड थे, बल्कि पोम्बो और उसके सारे आदमी भी थे। एक-दो बार मैं मुड़कर उन्हें देखने से खुद को रोक नहीं पाया। घुड़सवारों का काफिला एक विचित्र और मनमोहक दृश्य था, रंग-बिरंगे कपड़े पहने, लाल झंडों वाली बंदूकें लिए, रत्नजड़ित तलवारें लिए, और हवा में लहराते रंगों के लंबे रिबन वाले झंडे लिए घुड़सवार—सभी हजारों घोड़ों की घंटियों के कान फाड़ देने वाले शोर के बीच, उग्रता से सरपट दौड़ रहे थे, चिल्ला रहे थे, चीख रहे थे और फुफकार रहे थे।

हमारी गति बढ़ाने के लिए, एक घुड़सवार मेरे बगल में चल रहा था और मेरे टट्टू को चाबुक से पीटकर उसे पूरी ताकत से दौड़ा रहा था। इस बीच, रस्सी पकड़े हुए घुड़सवार ने मुझे काठी से नीचे खींचने की पूरी कोशिश की, शायद इस उम्मीद में कि पीछे चल रहे काफिले के नीचे कुचलकर मेरी मौत हो जाए। जैसे ही मैंने अपनी सीट पर टिके रहने के लिए अपना शरीर आगे की ओर झुकाया, और रस्सी से मेरे हाथ ज़ोर से पीछे की ओर खींचे जा रहे थे, हथकड़ी की जंजीर से मेरे हाथों और उंगलियों के जोड़ों की त्वचा रगड़ खाकर हड्डी तक पहुँच गई। हर झटके से मैं कांटों के संपर्क में आ रहा था और गहरे घाव हो रहे थे। आखिरकार, रस्सी अचानक टूट गई। दूसरे छोर से रस्सी खींच रहा सैनिक अनाड़ीपन से घोड़े से गिर गया, और मैं खुद भी अचानक लगे झटके से लगभग गिर ही गया। इस मज़ेदार घटना ने पहले तो मेरे साथ चल रहे लोगों में हंसी पैदा की, लेकिन उनके अंधविश्वासी दिमाग ने तुरंत उस हंसी को अपशगुन में बदल दिया।

जब मेरा टट्टू और घुड़सवार का भागा हुआ घोड़ा दोनों रुक गए, तो मैंने उनके डर का फायदा उठाया और उन्हें फिर से आश्वस्त किया कि वे मुझे जो भी नुकसान पहुंचाने की कोशिश करेंगे, वह उन्हीं पर भारी पड़ेगा। हालांकि, रस्सी को कई मजबूत गांठों से फिर से बांध दिया गया और कुछ मिनटों के विराम के बाद, हमने अपनी तेज रफ्तार फिर से शुरू कर दी, और मुझे फिर से आगे भेज दिया गया।

अपनी यात्रा के अंत में हमें एक रेतीले टीले के मोड़ से होकर गुजरना पड़ा, जिसके नीचे स्थित एक बड़े तालाब तक का रास्ता बहुत संकरा था। इस बिंदु पर मैंने अपने सामने एक सैनिक को घात लगाकर बैठे देखा, जिसकी बंदूक गोली चलाने के लिए तैयार थी। टट्टू रेत में धंस गया और तेज़ी से चल नहीं पा रहा था, शायद यही कारण था कि उसने वह स्थान चुना था। जैसे ही मैं उससे कुछ कदम दूर से गुजरा, उस आदमी ने गोली चला दी; लेकिन सौभाग्य से, इस दूसरे प्रयास में भी मुझे कोई चोट नहीं आई।

नरम रेत से निकलकर, पक्की ज़मीन पर पहुँचकर, हमने अपनी तेज़ रफ़्तार यात्रा फिर से शुरू की। पीछे से मुझ पर कई तीर चलाए गए। कुछ तीर बहुत नज़दीक से गुज़रे, लेकिन एक भी मुझे नहीं लगा। इस तरह, घटनाओं और रोमांच से भरी एक अंतहीन यात्रा के बाद, सूर्यास्त के समय हम अपने गंतव्य पर पहुँच गए।

एक पहाड़ी की चोटी पर एक किला और एक विशाल मठ स्थित था। उसके तल पर, एक बड़ी इमारत के सामने, पोम्बो का भव्य तम्बू लगा हुआ था। बाद में मुझे जो जानकारी मिली, उसके अनुसार इस स्थान का नाम नामज लैके गलशियो या ग्यात्शो था।

फुटनोट:

[12] यातना का एक रूप जिसमें पैरों को लकड़ी के दो समानांतर लट्ठों पर रखा जाता है। फिर उन्हें हथौड़े से ज़ोरदार प्रहार करके तोड़ दिया जाता है।

अध्याय XXI

करने वाला

दो-तीन आदमियों ने मुझे घोड़े की काठी से ज़बरदस्ती नीचे खींच लिया। कीलों से मेरी रीढ़ की हड्डी में असहनीय दर्द हो रहा था। मैंने थोड़ी देर आराम करने को कहा। मेरे पकड़ने वालों ने मुझे रुकने नहीं दिया और मुझे ज़बरदस्ती आगे धकेलते हुए कहा कि पल भर में मेरा सिर काट दिया जाएगा। आस-पास के सभी लोग मेरा मज़ाक उड़ा रहे थे और इशारे कर रहे थे कि मेरा सिर काट दिया जाएगा। लामाओं और सैनिकों की भीड़ ने मुझ पर तरह-तरह के अपमान बरसाए। मुझे फांसी के मैदान में ले जाया गया, जो तंबू के बाईं ओर था। ज़मीन पर एक प्रिज्म के आकार का लकड़ी का लंबा लट्ठा पड़ा था। मुझे इसके नुकीले किनारे पर खड़ा किया गया। कई आदमियों ने मुझे शरीर से पकड़ रखा था, जबकि चार-पाँच अन्य लोगों ने अपनी संयुक्त शक्ति से मेरे पैरों को चौड़ा फैला दिया। इस दर्दनाक स्थिति में जकड़े हुए, तिब्बतियों ने मेरे पैरों को याक के बालों की रस्सियों से लकड़ी के लट्ठे से कसकर बांध दिया। कई आदमियों को इन रस्सियों को खींचने के लिए कहा गया, और वे इतनी कसकर बंधी थीं कि मेरे टखनों और पैरों के आसपास कई जगहों पर मेरी त्वचा और मांस में कट लग गए। कई घाव तीन इंच तक लंबे थे।

जब मुझे इस प्रकार कसकर बांध दिया गया, तो वही आदमी नेर्बा, जिसका मैंने पहले जिक्र किया था कि उसने मुझ पर गोली चलाई थी, आगे आया और फिर मेरे पीछे जाकर मेरे बालों को पकड़ लिया। मेरे बाल लंबे थे, क्योंकि उन्हें पांच महीने से अधिक समय से काटा नहीं गया था।

मेरे सामने का नज़ारा बेहद भयावह था। पोम्बो के तंबू के पास कतार में खड़े थे वे सबसे क्रूर और निर्दयी लोग जिन्हें मैंने आज तक देखा था। उनमें से एक, एक शक्तिशाली और घिनौना व्यक्ति, अपने हाथ में हड्डियाँ तोड़ने वाला एक बड़ा हथौड़ा लिए खड़ा था; दूसरा धनुष और बाण लिए हुए था; तीसरा एक बड़ी दोधारी तलवार लिए हुए था; बाकी लोग यातना देने वाले तरह-तरह के भयानक औजारों का प्रदर्शन कर रहे थे। मेरे खून के प्यासे लोगों की भीड़ अर्धवृत्ताकार होकर खड़ी हो गई, ताकि मुझे यातना देने वाले उन औजारों का प्रदर्शन देखने का मौका मिल सके जो मेरा इंतज़ार कर रहे थे। जैसे ही मेरी नज़र एक से दूसरे पर पड़ी, कई लामाओं ने अपने-अपने औजारों को हिलाकर यह संकेत दिया कि वे कार्रवाई के लिए तैयार हो रहे हैं।

तंबू के प्रवेश द्वार पर तीन लामा खड़े थे। वे संगीतकार थे। एक के हाथ में एक विशाल सींग था, जिसे बजाने पर कर्कश, गरजती हुई ध्वनि निकलती थी। उनके साथियों में से एक के पास ढोल था और दूसरे के पास झांझ। कुछ दूरी पर एक और साथी लगातार एक विशाल घंटा बजा रहा था। जिस क्षण मुझे घोड़े से उतारा गया, उस भयावह संगीत की कान फाड़ देने वाली आवाज़ पूरी घाटी में गूंज उठी और दृश्य को और भी भयावह बना दिया।

लाल कपड़े से लिपटे लकड़ी के हैंडल वाली लोहे की छड़ को अंगीठी में गरम किया जा रहा था। पोम्बो ने अपने होठों पर कृत्रिम झाग लाने और अपना क्रोध दिखाने के लिए अपने मुंह में कुछ रखा हुआ था और वह

उन्माद में आ गया था। एक लामा ने उसे यातना देने का वह उपकरण (ताराम) थमा दिया, जो अब पूरी तरह गरम हो चुका था। पोम्बो ने उसे हैंडल से पकड़ लिया।

"न्गाघी किउ मेह टैक्सोन!" (हम तुम्हारी आंखें जला देंगे!) लामाओं के एक समूह ने एक साथ चिल्लाया।
पोम्बो भयानक औजार लहराते हुए मेरी ओर बढ़ा। वह अनिच्छुक लग रहा था, लेकिन उसके आसपास मौजूद लामाओं ने उसे उकसाया और उस आदमी का हाथ मेरी ओर उठाया।
“तुम इस देश को देखने आए हो” (पिछले दिन मैंने जो कहा था, उसी की ओर इशारा करते हुए—यानी कि मैं एक यात्री और तीर्थयात्री हूँ, और केवल देश को देखने आया हूँ)। “तो यही तुम्हारे लिए दंड है!” और इन भयानक शब्दों के साथ पोम्बो ने अपना हाथ उठाया और लाल-गरम लोहे की छड़ को मेरी आँखों के समानांतर, लगभग एक या दो इंच की दूरी पर, और मेरी नाक को लगभग छूते हुए रख दिया।
सहज रूप से मैंने अपनी आंखें बंद रखीं, लेकिन गर्मी इतनी तीव्र थी कि ऐसा लग रहा था मानो मेरी आंखें, खासकर बाईं आंख, सूख रही हों और मेरी नाक झुलस रही हो।
हालांकि समय अंतहीन सा लग रहा था, मुझे नहीं लगता कि गर्म लोहे की छड़ मेरी आँखों के सामने तीस सेकंड से ज़्यादा देर तक रही होगी। फिर भी यह काफ़ी लंबा समय था, क्योंकि जब मैंने अपनी दर्द भरी पलकें उठाईं, तो मुझे सब कुछ लाल धुंध जैसा दिखाई दिया। मेरी बाईं आँख में भयानक दर्द हो रहा था, और हर कुछ सेकंड में ऐसा लग रहा था जैसे उसके सामने कुछ आ गया हो और उसकी दृष्टि को धुंधला कर रहा हो। दाहिनी आँख से मैं अभी भी ठीक-ठाक देख पा रहा था, सिवाय इसके कि जैसा मैंने कहा, सब कुछ अपने सामान्य रंग के बजाय लाल दिखाई दे रहा था। फिर गर्म लोहे को नीचे फेंक दिया गया, और वह मुझसे कुछ कदम दूर गीली ज़मीन पर जल रहा था।
मेरी हालत दयनीय थी, क्योंकि मैं टांगें फैलाकर खड़ा था, मेरी पीठ, हाथ और टांगों से खून बह रहा था और मेरी दृष्टि कमजोर हो गई थी। यह सब घंटे, ढोल, झांझ और तुरही के कान फाड़ देने वाले शोर के बीच हो रहा था; भीड़ ने मेरा अपमान किया, मुझ पर थूका, और नेरबा ने मेरे बाल इतनी कसकर पकड़े हुए थे कि मेरे सिर से मुट्ठी भर बाल नोच लिए। मैं बस इतना ही कर सकता था कि शांत और संयमित रहूँ, और आगे होने वाले कष्टों की तैयारी को बेपरवाही से देखता रहूँ।
"मिउमता नानी सेहको!" (उसे राइफल से मार डालो!) एक कर्कश आवाज ने चिल्लाया।
एक सिपाही अब एक माचिस वाली बंदूक भर रहा था, और उसमें इतनी मात्रा में बारूद भरा गया था कि जो भी उसे चलाएगा उसका सिर उड़ जाएगा। मुझे यह देखकर कुछ संतोष हुआ कि बंदूक पोम्बो (सैनिक) को सौंप दी गई। उस सिपाही ने बंदूक का किनारा मेरे माथे पर इस तरह रखा कि उसका मुंह आसमान की ओर था। फिर एक सिपाही झुककर बंदूक में गोली चला दी। अंत में एक ज़ोरदार धमाका हुआ, जिससे मेरे सिर को ज़ोर का झटका लगा। सभी के आश्चर्य के बीच, बारूद से भरी हुई माचिस पोम्बो के हाथ से छूटकर दूर जा

गिरी। मैंने खुद को हँसने के लिए मजबूर किया। मुझे चोट पहुँचाने के उनके हर प्रयास की नाकामी ने भीड़ को गुस्से से भर दिया था।
"ता कोसाटन, ता कोसाटन!" (उसे मार डालो, उसे मार डालो!) चारों ओर से भयंकर आवाजें गूंज उठीं। "नगाला मंगबो शिदक माजिदान!" (हम उसे डरा नहीं सकते!) "ता कोसाटन, ता कोसाटन!" (उसे मार डालो, उसे मार डालो!) पूरी घाटी इन भयानक चीखों से गूंज उठी।
अब पोम्बो को एक विशाल दोधारी तलवार सौंपी गई, जिसे उसने म्यान से बाहर निकाला।
"उसे मार डालो, उसे मार डालो!" भीड़ ने एक बार फिर चिल्लाते हुए जल्लाद को उकसाया, जो आगे आने में काफी अनिच्छुक लग रहा था।
मैंने इस मौके का फायदा उठाते हुए कहा कि वे चाहें तो मुझे मार सकते हैं, लेकिन अगर मैं आज मर गया, तो वे सब कल मर जाएंगे—यह एक अटल सत्य है, क्योंकि हम सबको एक दिन मरना ही है। इससे वे पल भर के लिए शांत हुए; लेकिन भीड़ में उत्तेजना इतनी ज़्यादा थी कि आखिरकार वे पोम्बो को भड़काने में कामयाब हो गए। उत्तेजना इतनी ज़्यादा थी कि उसका चेहरा पहचानना मुश्किल हो गया। वह पागलों की तरह व्यवहार करने लगा।
इसी समय एक लामा पास आया और जल्लाद के मुँह में कुछ डाल दिया, जिससे उसके होंठों से झाग निकलने लगा। एक लामा ने उसकी तलवार पकड़ी हुई थी, जबकि उसने अपने कोट की एक आस्तीन ऊपर कर ली ताकि उसका हाथ मुक्त हो जाए, और दूसरे लामाओं ने उसके लिए दूसरी आस्तीन भी ऊपर कर दी। फिर वह धीमी, भारी चालों से मेरी ओर बढ़ा, अपनी नंगी बाहों को फैलाकर चमकदार, तेज धार वाली तलवार को इधर-उधर घुमाता हुआ।
नेरबा नाम का वह आदमी, जिसने अभी भी मेरे बाल पकड़ रखे थे, उसे मेरी गर्दन झुकाने का आदेश दिया गया। मैंने अपनी बची-खुची ताकत से विरोध किया, अपना सिर सीधा और माथा ऊंचा रखने का दृढ़ निश्चय किया। वे मुझे मार सकते थे, बेशक, वे चाहें तो मेरे टुकड़े-टुकड़े कर सकते थे, लेकिन जब तक मेरी आखिरी ताकत भी खत्म नहीं हो जाती, ये बदमाश मुझे अपने सामने झुकने नहीं देंगे। मैं मर सकता था, लेकिन मैं पोम्बो और उसके देशवासियों को नीचा दिखा रहा होता।
जल्लाद, जो अब मेरे करीब आ चुका था, कांपते हाथों से तलवार पकड़े हुए उसे अपने कंधे से काफी ऊपर उठा लिया। फिर उसने तलवार मेरी गर्दन पर नीचे की और धार से उसे छूकर दूरी नापने की कोशिश की, ताकि सटीक और असरदार वार कर सके। फिर एक कदम पीछे हटकर उसने तलवार को फिर से उठाया और पूरी ताकत से मुझ पर वार किया। तलवार मेरी ठुड्डी के नीचे से मेरी गर्दन के बेहद करीब से गुजरी, लेकिन मुझे छू नहीं पाई। मैं न तो हिला और न ही कुछ बोला। मेरी उदासीनता ने उसे लगभग डरा दिया। वह अपना यह घिनौना प्रदर्शन जारी रखने के लिए अनिच्छुक लग रहा था; लेकिन भीड़ का धैर्य और उग्रता चरम पर थी। उसके पास खड़े लामा पागलों की तरह इशारे कर रहे थे और उसे फिर से वार करने के लिए उकसा रहे थे।

मेरी इच्छा के विरुद्ध, जल्लाद ने मेरे सिर के दूसरे हिस्से पर भी वही प्रक्रिया दोहराई। इस बार तलवार इतनी करीब से गुजरी कि उसकी नोक मेरी गर्दन से आधे इंच से भी कम दूरी पर रही होगी।

सब कुछ मेरी मृत्यु के निकट होने का संकेत दे रहा था; लेकिन, अजीब बात है, मुझे हर पल यह आभास होता रहा कि कुछ न कुछ तो होगा और मेरी जान बच जाएगी। हालाँकि, बचने की संभावना बहुत कम लग रही थी, इसलिए मुझे इस बात का दुख था कि मुझे अपने प्यारे माता-पिता और रिश्तेदारों को दोबारा देखे बिना मरना पड़ेगा। उन्हें शायद कभी पता नहीं चलेगा कि मेरी मृत्यु कहाँ और कैसे हुई। तिब्बत में प्रवेश करने के बाद से अपने कठिन अनुभवों, कष्टों और रोमांच के कारण, शायद मुझे अपने खतरे का उतना एहसास नहीं हुआ जितना कि तब होता जब मुझे, उदाहरण के लिए, मेरे आरामदायक लंदन के कमरों से सीधे फांसी के मैदान में घसीट कर ले जाया जाता।

ज़ाहिर है, यह दृश्य मेरे लिए अविस्मरणीय था, और तिब्बतियों के लिए यह कहना होगा कि पूरा आयोजन बेहद कलात्मक था। यहाँ तक कि सबसे भयावह समारोहों में भी कलात्मकता झलकती है, और यह विशेष समारोह, जिसे अतिरिक्त धूमधाम और भव्यता के साथ संपन्न किया गया, वास्तव में बहुत प्रभावशाली था।

ऐसा प्रतीत होता है कि तिब्बत में सिर काटने से पहले कभी-कभी तलवार चलाने का कष्टदायक अभ्यास कराया जाता है, ताकि अंतिम प्रहार से पहले पीड़ित को मानसिक रूप से जितना संभव हो उतना कष्ट दिया जा सके। यह जल्लाद के तलवार चलाने के अद्भुत कौशल को प्रदर्शित करने के लिए भी किया जाता है। मुझे उस समय इसकी जानकारी नहीं थी, और मुझे कुछ सप्ताह बाद ही पता चला। आमतौर पर तीसरे प्रहार में ही पीड़ित का सिर धड़ से अलग कर दिया जाता है।

लामा अब भी मेरा सिर काटने की मांग कर रहे थे, लेकिन पोम्बो ने इस बार दृढ़ता से अपना रुख नहीं बदला और फांसी की प्रक्रिया जारी रखने से इनकार कर दिया। वे उसके चारों ओर जमा हो गए और बेहद गुस्से में लग रहे थे। वे चिल्ला रहे थे, चीख रहे थे और बेतहाशा इशारे कर रहे थे, फिर भी पोम्बो ने अपनी निगाहें मुझ पर आधी श्रद्धा और आधे भय के भाव से टिकाए रखीं और हिलने से इनकार कर दिया।

इसके बाद एक उत्तेजित परामर्श हुआ, जिसके दौरान इस बर्बरतापूर्ण दृश्य के बीच मेरा कुली मानसिंह आ पहुँचा। वह अपने नंगे घोड़े से कई बार गिर चुका था और बहुत पीछे छूट गया था। मेरे बाल पकड़े हुए व्यक्ति ने अब अपनी पकड़ ढीली कर दी, जबकि दूसरे ने मुझे सामने से ज़ोर से धक्का दिया, जिससे मैं बुरी तरह पीछे की ओर गिर पड़ी और मेरे पैरों की सभी नसों पर दर्दनाक खिंचाव आ गया। मानसिंह, जो चोटों से ग्रस्त और दर्द से कराह रहा था, को आगे लाया गया और उसके पैरों को उसी लकड़ी के लट्ठे से बाँध दिया गया जिससे मुझे बाँधा गया था। उन्होंने मुझे बताया कि वे पहले मेरे कुली को मार डालेंगे। एक क्रूर लामा ने उसका गला ज़बरदस्ती पकड़ लिया। मुझे बैठने की मुद्रा में धकेल दिया गया। मेरे सिर और चेहरे पर एक कपड़ा डाल दिया गया, ताकि मैं देख न सकूँ कि वे क्या कर रहे हैं। मैंने बेचारे मानसिंह की दयनीय कराह सुनी, फिर सन्नाटा छा गया। मैंने उसे पुकारा, लेकिन कोई जवाब नहीं मिला, इसलिए मैंने निष्कर्ष निकाला कि उसे मार दिया गया था। मैं लगभग पंद्रह मिनट तक इस भयानक अनिश्चितता में डूबा रहा, जब आखिरकार उन्होंने मेरे

सिर से कपड़ा हटाया और मैंने अपने कुली को अपने सामने लकड़ी के लट्ठे से बंधा हुआ लगभग बेहोश पड़ा देखा, लेकिन ईश्वर का शुक्र है कि वह अभी भी जीवित था। उसने मुझे बताया कि जब मैंने उसे पुकारा, तो एक लामा ने उसका मुंह अपने हाथ से ढक दिया ताकि वह जवाब न दे सके, और दूसरे हाथ से उसकी गर्दन इतनी कसकर दबा दी कि उसका दम घुटने लगा। इन भयानक परिस्थितियों में मानसिंह का धैर्य और साहस सचमुच अद्भुत था।

हमें बताया गया कि हमारी फांसी को केवल अगले दिन के लिए स्थगित किया गया है, ताकि हमें तब तक यातना दी जा सके जब तक कि हमें मौत के घाट उतारने का समय न आ जाए।

कई लामा और सैनिक हमारे चारों ओर खड़े होकर हमारा उपहास उड़ा रहे थे। मैंने इस अवसर का लाभ उठाते हुए एक अकड़ू लामा को आवाज़ दी और उनसे कुछ जलपान मांगा।

"ओरचेह, ओरचेह नगा दप्पा तुगु दुह, चुएन देह, डांग, याक, गुरम, त्वा, त्सम्बा पिन!" मैंने अपनी सर्वश्रेष्ठ तिब्बती भाषा में पूछा।

"हम मुर्र, महाराजा!" (महाराज, मुझे मक्खन चाहिए!) मानसिंग में, आधा हिंदुस्तानी और आधा तिब्बती भाषा में।

भोजन के लिए हमारी यह स्वाभाविक विनती हमारे यातनादाताओं के लिए बेहद मनोरंजक प्रतीत हुई। उन्होंने हमारे चारों ओर घेरा बना लिया और हमारी गुहार पर हँसने लगे, जबकि मैं और मानसिंग, दोनों ही भूख से बेहाल थे, अत्यंत कष्टदायक स्थिति में बंधे हुए थे।

दिन ढलने लगा था। हमारे यातना देने वाले हमें बार-बार याद दिला रहे थे कि अगले दिन हमारे सिर धड़ से अलग कर दिए जाएँगे। मैंने उनसे कहा कि इससे हमें कोई तकलीफ़ नहीं होगी, क्योंकि अगर वे हमें खाना नहीं देंगे तो शायद तब तक हम भूख से मर चुके होंगे।

उन्हें इस बात का आभास था या किसी और कारण से वे ऐसा करने को प्रेरित हुए, यह मैं नहीं कह सकता। कई लामा, जो पहले बेहद क्रूर थे, जिनमें से एक ने पिछले दिन चंदेन सिंह को कोड़े मारे थे, अब काफी विनम्र हो गए और उन्होंने हमारे साथ आश्चर्यजनक रूप से सम्मानपूर्वक व्यवहार किया। दो लामाओं को मठ भेजा गया और वे कुछ समय बाद त्साम्बा से भरे थैले और उबलती चाय का एक बड़ा रकसांग लेकर लौटे। मैंने शायद ही कभी इतना आनंदपूर्वक भोजन किया हो, हालाँकि लामाओं ने अपने गंदे हाथों से इतनी तेजी से खाना मेरे गले में ठूँसा कि मेरा दम घुटने ही वाला था।

उन्होंने गंभीर स्वर में कहा, "खाओ, जितना खा सकते हो उतना खाओ, क्योंकि यह तुम्हारा आखिरी भोजन हो सकता है।"

और मैंने खाया, और त्साम्बा को मक्खन वाली चाय की भरपूर मात्रा के साथ पिया, जिसे उन्होंने लापरवाही से रकसांग से मेरे मुंह में डाला।

मानसिंह, जिनके धर्म में उन्हें दूसरी जाति के लोगों द्वारा छुए गए भोजन को खाने की अनुमति नहीं थी, अंततः उन्हें लकड़ी के कटोरे से भोजन चाटने की अनुमति मिल गई। मुझे भी भोजन को किसी भी रूप में ग्रहण

करने में कोई हिचक नहीं थी, और जब मेरे विनम्र निवेदन "ओर्चेह, ओर्चेह त्वुएन मंगबो तेरोक्वी!" (कृपया मुझे थोड़ा और दीजिए!) पर लामाओं ने आपत्ति जताई और उन्होंने "मिड्डू, मिड्डू" कहकर मेरा मुंह बंद कर दिया, तब भी मुझे इतनी भूख थी कि मैं दिए गए कीमती भोजन को बर्बाद नहीं करना चाहता था। तिब्बतियों ने मेरे अनुरोध पर लकड़ी के कटोरे को मेरे मुंह के चारों ओर घुमाया और मैंने उसे ऐसे चाटा जैसे वह कभी इस्तेमाल ही न हुआ हो।

दिनभर की भागदौड़ के बाद, हम थोड़ा बेहतर महसूस करने लगे थे। कुछ पलों के लिए ही सही, हमारे साथ कम सख्ती से पेश आना एक बड़ी राहत थी, क्योंकि उस थोड़े समय के लिए ही सही, हमारी हालत में सुधार रुक गया था।

एक लामा मठ से आए और इधर-उधर आदेश देने लगे। पूरा इलाका फिर से अफरा-तफरी में डूब गया। हम पर झपट्टा मारा गया और हमें बेरहमी से पकड़ लिया गया। मेरे पैर जल्दी से खोल दिए गए, कई आदमी मुझे पकड़े हुए थे। फिर उन्होंने मुझे उठाया और तब तक खड़ा किया जब तक मैं प्रिज्म के आकार के लट्ठे के धारदार किनारे पर सीधा खड़ा नहीं हो गया; दो आदमियों ने मेरा एक पैर पकड़ा और दो ने दूसरा, और उन्हें जितना हो सके उतना फैला दिया। फिर एक के बाद एक कई रस्सियाँ मेरे पैरों और टखनों के चारों ओर लपेटी गईं, और मुझे पहले की तरह लट्ठे से बांध दिया गया।

इस बार मेरे पैर पहले से कहीं ज़्यादा फैले हुए थे, इसलिए जब उन्होंने मुझे पीछे की ओर धकेला, तो मेरे पैरों की मांसपेशियों में दर्द पिछली बार से भी कहीं ज़्यादा था। लेकिन इससे पहले कि मैं इसे पूरी तरह महसूस कर पाता, लामा, जो अब पहले की तरह ही क्रूर थे, मेरे हथकड़ी लगे हाथों को मेरे शरीर के नीचे से पीछे की ओर खींचकर हथकड़ी की चेन से एक रस्सी बांध दी। ऐसा करने के बाद, उन्होंने रस्सी को मेरे पीछे एक ऊंचे खंभे के ऊपरी हिस्से में बने छेद से निकाला और उसे खींचकर मेरे हाथों को इस तरह ऊपर की ओर मोड़ा कि अगर मैं इतना लचीला न होता, तो वे निश्चित रूप से टूट जाते। जब उनकी सारी ताकत लगाने के बाद भी मेरा शरीर टुकड़े-टुकड़े हुए बिना मुझे एक इंच भी नहीं खींच सका, तो उन्होंने रस्सी को कसकर बांध दिया, और मैं आधा लटका हुआ रह गया, और ऐसा महसूस हो रहा था जैसे मेरे अंगों की सभी हड्डियां अपने जोड़ों से निकल रही हों। शरीर का वजन स्वाभाविक रूप से नीचे की ओर झुकने लगता, लेकिन मुझे हर पल इस भयानक यातना की पीड़ा बढ़ती हुई महसूस हो रही थी, जो वास्तव में एक आदिम प्रकार की यातना थी।

इसी तरह, मानसिंग भी मेरे सामने लटका हुआ था। उसके पैर उसी लट्ठे से बंधे थे जिससे मेरे पैर बंधे थे, बस उनके पैर उतने चौड़े नहीं थे।

शुरुआत में दर्द बहुत तीव्र था, पैरों और हाथों की नसें बुरी तरह खिंची हुई थीं, और रीढ़ की हड्डी लगभग दो टुकड़ों में टूटने की कगार पर थी। कंधे की हड्डियाँ आपस में कसकर चिपकी हुई थीं, जिससे रीढ़ की हड्डियों पर अंदर की ओर दबाव पड़ रहा था और कमर की हड्डियों में असहनीय दर्द हो रहा था, जहाँ सबसे ज़्यादा खिंचाव था।

मानो इतना ही काफी नहीं था, मानसिंग की गर्दन से मेरी गर्दन तक एक रस्सी बांधी गई थी, जिसका उद्देश्य हमारी गर्दन को बेहद असहज स्थिति में खींचकर रखना था।

तेज़ बारिश शुरू हो गई। हमें खुले में छोड़ दिया गया। जब हमें पहली बार पकड़ा गया था, तब संघर्ष के दौरान हमारे कपड़े जो चिथड़े-चिथड़े हो गए थे, पूरी तरह भीग चुके थे। अधनंगे और घायल, हम कभी ठंड से कांप रहे थे तो कभी बुखार से झुलस रहे थे। एक पहरेदार ने हमें घेर लिया, उनके साथ खूंटियों से बंधे दो रखवाले कुत्ते भी थे। सैनिकों को हमारी भागने की क्षमता पर इतना भरोसा था कि उन्होंने अपने भारी कंबल अपने सिर पर ओढ़ लिए और सो गए। उनमें से एक नींद में हिला और अपनी तलवार को उस कंबल से बाहर निकाल लिया जिसमें उसने खुद को कसकर लपेटा हुआ था। इससे मुझे भागने की कोशिश करने का विचार आया।

दो-तीन घंटे बाद रात गहरी हो गई। मेरे हाथों की असाधारण लचीलेपन के कारण, मैं अपना दाहिना हाथ हथकड़ी से निकालने में कामयाब रहा, और लगभग एक घंटे की छुप-छुपकर और चिंता भरी मशक्कत के बाद, मैं मानसिंह के पैरों को बांधने वाली रस्सी को खोलने में सफल हो गया। मैंने उससे धीरे से उठने और अपने पैर से तलवार को मेरी ओर धकेलने के लिए कहा, ताकि मैं उसे पकड़ सकूँ। अगर मैं इसमें सफल हो जाता, तो मैं जल्द ही अपनी और मानसिंह के हाथों को बांधने वाली रस्सियों को काट सकता था, और हथियार हाथ में लेकर हम आज़ादी के लिए एक साहसिक छलांग लगा सकते थे।

लेकिन मानसिंग फुर्तीला नहीं था। थोड़ी आज़ादी महसूस करके खुशी से झूमते हुए बेचारा कुली अपने अकड़े हुए पैरों को बेढंगे तरीके से हिलाने लगा। चौकस पहरेदारों ने इसे भांप लिया और भौंककर खतरे का संकेत दिया। पल भर में पहरेदार उठ खड़े हुए। हमेशा की तरह डरपोक स्वभाव के कारण वे सब जल्दी से हमें छोड़कर चले गए और हमारे बंधनों की जांच करने के लिए रोशनी लाने चले गए।

इसी बीच, तूफानी रात के अंधेरे की आड़ में, मैं अपना हाथ लोहे की हथकड़ी में वापस डालने में कामयाब हो गया था। उसे वापस डालना निकालना से ज़्यादा मुश्किल था, लेकिन मैंने जैसे-तैसे समय रहते कर लिया। मठ गए लोग रोशनी लेकर लौट आए। मैंने सोने का नाटक किया: यह मुमकिन था क्योंकि मेरे शरीर की हर हड्डी टूटी हुई सी लग रही थी, हर अंग आधा सुन्न और जमा हुआ था, हर नस इतनी खिंची हुई थी कि दर्द से पागल हो रहा था!

तिब्बतियों ने मानसिंह के पैरों में बंधी रस्सियाँ खुली पाईं। उन्होंने मेरे हाथों की जाँच की और पाया कि वे वैसे ही थे जैसे उन्होंने छोड़े थे। उन्होंने मेरे पैरों का निरीक्षण किया। रस्सियाँ अभी भी वहीं थीं और मेरी त्वचा को काट रही थीं। उन्होंने मानसिंह के हाथों की जाँच की, तो पाया कि वे अभी भी पीछे खंभे से बंधे हुए थे।

तिब्बती लोग इस रहस्यमय घटना से इतने हैरान और भयभीत हो गए कि वे उत्तेजित होकर मदद के लिए चिल्लाने लगे। देखते ही देखते, लोगों की भीड़ हमारी ओर दौड़ी और तलवारें निकालकर हमें घेर लिया। उनमें से एक बहादुर व्यक्ति ने मानसिंग को चाबुक से कई वार किए और चेतावनी दी कि अगर रस्सियाँ दोबारा खोली गईं तो वे हमें वहीं मार डालेंगे। कुली को पहले से भी ज़्यादा कसकर बाँध दिया गया।

फुटनोट:

[13] कुछ सप्ताह बाद डॉक्टर विल्सन द्वारा मापा गया।

अध्याय XXII

एक जादुई जीवन

एहतियात के तौर पर, मानसिंह और मेरे बीच एक बत्ती जला दी गई थी, और चूंकि अभी भी तेज़ बारिश हो रही थी, इसलिए तिब्बतियों ने बत्ती बुझने से बचाने के लिए हमारे ऊपर एक तंबू लगा दिया। सुबह लगभग छह या सात बजे मानसिंह के पैर खोल दिए गए, लेकिन उसके हाथ नहीं खोले गए। मुझे उसी असहज और दर्दनाक स्थिति में छोड़ दिया गया। घंटे धीरे-धीरे और थका देने वाले ढंग से बीतते गए। मेरे पैर, मेरी बाहें और मेरे हाथ धीरे-धीरे बिल्कुल बेजान हो गए थे। रैक पर छह-सात घंटे तक तड़े रहने के बाद, मुझे कोई वास्तविक दर्द महसूस नहीं हुआ। सुन्नपन मेरे शरीर के हर अंग में फैल गया, यहाँ तक कि अब मुझे एक अजीब सी अनुभूति होने लगी जैसे मेरे पास एक मृत शरीर पर एक जीवित सिर हो।

अब जो दिन निकल रहा था, वह विचित्र घटनाओं से भरा था। जब सूरज आसमान में ऊँचा चढ़ गया, तो पोम्बो, कई लामाओं के साथ, पास ही स्थित मठ से नीचे उतरे। वे अपने तंबू में चले गए। कुछ ही देर बाद, मेरे वैज्ञानिक उपकरणों के बक्से बाहर लाए गए और खोले गए। सैनिक और लामा हर उस चीज़ को छूते समय जिज्ञासा और सावधानी का एक अजीब मिश्रण दिखा रहे थे। मुझे प्रत्येक उपकरण के उपयोग के बारे में समझाना पड़ा, जो वास्तव में एक कठिन काम था, क्योंकि उनकी अज्ञानता और तिब्बती भाषा के मेरे सीमित ज्ञान के कारण, मैं उनकी भाषा में वैज्ञानिक व्याख्यान नहीं दे सकता था। सेक्स्टेंट को बड़ी शंका से देखा गया, और उससे भी अधिक हाइप्सोमेट्रिकल उपकरण को, जिसमें पीतल की नलियों में थर्मामीटर लगे थे, जिसे वे किसी प्रकार का हथियार समझ रहे थे। फिर बहुत सारी अविकसित फोटोग्राफिक प्लेटें आईं, जिनके बक्से उन्होंने दिन के उजाले में एक-एक करके खोले, और कुछ ही क्षणों में मानसरोवर छोड़ने के बाद से मेरे द्वारा ली गई सभी मूल्यवान नेगेटिव नष्ट कर दीं। पोम्बो, जो दूसरों की तुलना में अधिक चौकस थे, ने देखा कि प्रकाश के संपर्क में आने पर प्लेटें पीले रंग की हो गईं।

"ऐसा क्यों है?" उसने पूछा।

"यह इस बात का संकेत है कि तुम मेरे साथ जो कर रहे हो, उसके लिए तुम्हें भुगतना पड़ेगा।"

पोम्बो ने उठाई हुई प्लेट फेंक दी और बहुत नाराज़ हो गया। उसने कुछ दूरी पर ज़मीन में एक गड्ढा खोदने और सभी प्लेटों को तुरंत उसमें गाड़ने का आदेश दिया। लेकिन जिन सैनिकों को यह आदेश सौंपा गया था, वे प्लेटों को छूने से कतरा रहे थे, और लामाओं को उन्हें डांटना और पीटना पड़ा, तब जाकर उन्होंने बात मानी। आखिरकार, उन्होंने अपने पैरों से नेगेटिव के बक्सों को कुछ दूरी पर धकेल दिया, जहाँ उन्होंने कुत्तों की तरह कीचड़ में अपने हाथों से एक गहरा गड्ढा खोदा। वहाँ कई हफ़्तों की मेरी बहुमूल्य फोटोग्राफी हमेशा के लिए मिट्टी में दब गई।

फिर मेरे पास रंगों का डिब्बा आया जिसमें पानी के रंगों की टिकियाएँ थीं।

"तुम इनका क्या करते हो?" क्रोधित लामा ने हानिरहित रंगों की ओर इशारा करते हुए चिल्लाकर कहा।

मैं चित्र बनाता हूँ।
"नहीं, तुम झूठ बोल रहे हो। 'पीले' रंग से तुम देश में सोने के भंडार का पता लगाते हो, और 'नीले' रंग से तुम मैलाकाइट के भंडार का पता लगाते हो।"
मैंने उन्हें आश्वस्त किया कि ऐसा नहीं है, और उनसे कहा कि यदि वे मुझे खोल देंगे तो मैं अपने हाथों का उपयोग पुनः प्राप्त करने पर उनके सामने एक चित्र बनाऊंगा।
उन्होंने समझदारी दिखाते हुए मुझे बंधा हुआ ही छोड़ना बेहतर समझा।
अब उनका सारा ध्यान चांदी और सोने की एक बड़ी रकम पर केंद्रित हो गया, जो उन्हें थैलों में मिली थी। पोम्बो ने लोगों को चेतावनी दी कि एक भी सिक्का चोरी नहीं करना है।
मैंने इस अवसर का लाभ उठाते हुए लामासेरी को पाँच सौ रुपये का दान दिया। मैंने पोम्बो से यह भी कहा कि मैं चाहूँगा कि वह मेरी मार्टिनी-हेनरी राइफल उपहार के रूप में स्वीकार करें, जो मुझे लगा कि उन्हें बहुत पसंद आई थी।
दोनों उपहार अस्वीकार कर दिए गए। उन्होंने कहा कि मठ बहुत समृद्ध है, और पोम्बो की आधिकारिक पदवी उन्हें राइफल रखने की अनुमति नहीं देती। फिर भी, पोम्बो ने इस प्रस्ताव की सराहना की और मुझे धन्यवाद देने के लिए स्वयं आए।
एक तरह से देखा जाए तो वे बदमाश अपने व्यवहार में काफी सभ्य थे। मैं उनकी शिष्टता और क्रूरता के मिश्रण की प्रशंसा किए बिना नहीं रह सका, जिसे वे पल भर में अपना सकते थे, चाहे दूसरा कुछ भी हो।
अब वे एक बेहद पुख्ता मामले की तह तक पहुँच चुके थे। पोम्बो ने बड़ी शंका के साथ एक विचित्र चपटी वस्तु को बाहर निकाला।
"यह क्या है?" उसने उस वस्तु को हवा में उठाते हुए पूछा।
मेरी दृष्टि इतनी कमजोर हो गई थी कि इतनी दूरी से मैं उसे ठीक से पहचान नहीं पा रहा था; लेकिन जब उन्होंने उसे मेरी नाक के सामने हिलाया, तो मैंने पहचान लिया कि यह मेरा लंबे समय से खोया हुआ नहाने का स्पंज था, जो सूखा और चपटा हो चुका था। चंदन सिंह ने अपनी हमेशा की तरह सामान पैक करने की कुशलता से इसे डिब्बे के नीचे छिपा दिया था और उसके ऊपर फोटोग्राफिक प्लेटों के भारी बक्से रख दिए थे। स्पंज, जो काफी बड़ा था, अब हफ्तों तक उस पर पड़े वजन के कारण एक इंच से भी कम मोटा रह गया था।
तिब्बती लोग इस नई खोज से बेहद हैरान थे। उन्होंने न तो कभी स्पंज देखा था और न ही उसके बारे में सुना था। कुछ लोगों ने कहा कि यह माचिस की तीली जैसा दिखता है। समझदार लामाओं ने कहा कि यह फट सकता है। इसे बड़ी सावधानी से छुआ गया।
जब उनकी जिज्ञासा शांत हो गई, तो उन्होंने उसे फेंक दिया। वह मेरे पास ही एक छोटे से पानी के कुंड में गिर गया। यह मेरे जेलरों को डराने का सुनहरा मौका था। मैंने स्पंज से अंग्रेज़ी में और जो भी शब्द मेरे दिमाग में आए, उनका इस्तेमाल करते हुए, मंत्रों का जाप करने का नाटक किया। लामाओं और सैनिकों का ध्यान तुरंत

मेरे इस असामान्य व्यवहार की ओर आकर्षित हो गया। जैसे-जैसे मैं स्पंज से ज़ोर-ज़ोर से बोलता गया, वह धीरे-धीरे नमी सोखकर अपने सामान्य आकार में वापस आ गया, जिसे देखकर वे अपना डर छिपा नहीं सके। तिब्बती लोग, जो पहले तो इस अविश्वसनीय घटना को देखकर अपनी आँखों पर विश्वास नहीं कर पा रहे थे, मेरी तांत्रिक शक्तियों के प्रदर्शन के रूप में समझकर दहशत में आ गए। चारों ओर भगदड़ मच गई।
एक तरह से, यह सब मनोरंजक था। खैर, इससे समय तो कट गया। हालांकि, उस दोपहर का सबसे मजेदार दृश्य अभी आना बाकी था।
कुछ समय बाद लामाओं ने हिम्मत जुटाई और उस जगह लौट आए जहाँ मेरा सामान रखा हुआ था। उनमें से एक ने मेरी मार्टिनी-हेनरी राइफल उठा ली। बाकी लोगों ने उसे चलाने के लिए उकसाया। वह मेरे पास आया और जब मैंने उसे राइफल लोड करने का तरीका समझाया, तो उसने एक कारतूस निकालकर ब्रीच में डाल दिया, लेकिन बोल्ट को पूरी तरह बंद करने से मना कर दिया। जब मैंने उसे अंजाम भुगतने की चेतावनी दी, तो उसने राइफल के बट से मेरे सिर पर वार कर दिया।
उनकी पिस्तौलों में, जिनमें एक सहारा लगा होता है, निशाना साधते समय बट को कंधे से सटाकर रखने के बजाय नाक के आगे रखने का चलन है, जैसा कि हम करते हैं। इसलिए लामा ने भी लगभग तीस गज दूर शांति से चर रहे मेरे एक याक पर इसी तरह निशाना साधा। जब सब लोग ध्यान से इस निशानेबाज के निशाने का नतीजा देख रहे थे, तभी उन्होंने ट्रिगर दबा दिया; राइफल एक ज़ोरदार धमाके के साथ चली, और देखिए! राइफल फट गई और ज़ोरदार झटके से लामा के चेहरे पर ज़ोरदार चोट लगी। राइफल उनके हाथों से छूटकर हवा में कलाबाज़ी खाती हुई उछली, और लामा पीछे की ओर ज़मीन पर गिर पड़े, जहाँ वे खून से लथपथ पड़े रहे और बच्चे की तरह चीखते रहे। उनकी नाक कुचल गई थी, एक आँख निकल गई थी, और उनके दाँत टूट गए थे।
राइफल का फटना बोल्ट के ठीक से बंद न होने के कारण हुआ या फिर बैरल के मुंह में कीचड़ चले जाने के कारण, मैं यह नहीं कह सकता।
घायल लामा ही उस दल का मुखिया था जो मेरा सिर कलम करना चाहता था, इसलिए स्वाभाविक ही था कि मैं इस दुर्घटना पर अपनी संतुष्टि को छिपा नहीं सका। मुझे खुशी थी कि उन्होंने मुझे एक और दिन जीने दिया, कम से कम इस मनोरंजक दृश्य को देखने के लिए ही सही।

पोम्बो, जो दोपहर के अधिकांश समय तक मुझे दया और सम्मान के मिले-जुले भाव से देख रहा था, मानो उसे अपनी इच्छा के विरुद्ध मेरे साथ इतना क्रूर व्यवहार करने के लिए मजबूर किया गया हो, लामा की दयनीय स्थिति पर मेरी हंसी में शामिल हुए बिना नहीं रह सका। एक तरह से, मुझे लगता है कि वह इस घटना के घटित होने से खुश था; क्योंकि, यदि वह तब तक मुझे मारने या न मारने के बारे में अनिश्चित था, तो जो कुछ हुआ उसके बाद उसे लगा कि ऐसा करना बुद्धिमानी नहीं होगी।

गिरफ्तारी के दिन मुझसे जो सोने की अंगूठी छीन ली गई थी, जिसके लिए मैंने कई बार गुहार लगाई थी, क्योंकि वह मेरी माँ ने मुझे दी थी, उसे तब तक चमत्कारी शक्तियों से युक्त माना जाता था जब तक वह मेरे पास या मेरे शरीर पर रहती थी। इसलिए उसे मुझसे दूर रखा जाता था, इस डर से कि कहीं उसकी मदद से मैं अपने बंधन तोड़कर भाग न जाऊँ।

पोम्बो, लामाओं और अधिकारियों ने एक और परामर्श किया, जिसके अंत में, सूर्यास्त के समय, कई सैनिक आए और मेरे पैरों को लटकते हुए लट्ठे से खोल दिया। मेरे हाथ, हालांकि अभी भी हथकड़ी से बंधे हुए थे, पीछे के खंभे से नीचे उतार दिए गए।

जैसे ही मेरे टखनों के चारों ओर बंधी रस्सियाँ उन गहरे घावों से खोली गईं जो उन्होंने मेरी त्वचा में बना दिए थे, त्वचा के बड़े-बड़े टुकड़े उनके साथ निकल आए। इस प्रकार मेरे जीवन के सबसे भयानक चौबीस घंटे समाप्त हुए।

जब मैं ज़मीन पर लेटा तो पहले तो मुझे ज़रा भी राहत नहीं मिली। मेरा शरीर और पैर ऐसे अकड़े हुए थे मानो बेजान हों। समय बीतता गया और उनमें जान आने के कोई आसार नहीं दिखे, तो मुझे लगा कि कहीं मैं पूरी तरह से सड़ न जाऊँ और अपने पैरों का इस्तेमाल हमेशा के लिए न कर पाऊँ। दो-तीन घंटे बाद मेरे दाहिने पैर में खून का संचार शुरू हुआ। जब खून का संचार शुरू हुआ तो दर्द असहनीय था। मानो मुट्ठी भर चाकू धीरे-धीरे मेरे पैर के अंदरूनी हिस्से में चलाए जा रहे हों, दर्द इससे ज़्यादा असहनीय नहीं हो सकता था। मेरी बाहों की हालत इतनी बुरी नहीं थी। वे भी सुन्न थीं, लेकिन उनमें रक्त संचार जल्दी ही सामान्य हो गया।

पोम्बो ने, चाहे मेरा मनोरंजन करने के लिए हो या अपनी दौलत का प्रदर्शन करने के लिए, मेरे सामने लगभग सौ टट्टुओं को प्रदर्शित करने का आदेश दिया, जिनमें से कुछ शानदार साज-सामान से सजे हुए थे। सबसे उत्तम टट्टू पर सवार होकर और हाथ में भयानक तारम (एक प्रकार का डंडा) लिए हुए, वह उस पहाड़ी के चारों ओर घूमा जिस पर मठ और किला स्थित थे।

लौटकर उसने अपने आदमियों को खूब खरी-खोटी सुनाई। फिर खेलों का सिलसिला शुरू हुआ, पोम्बो मेरे पास ही बैठ गया और ध्यान से मुझे देखने लगा कि मुझे खेल कितना पसंद आ रहा है। सबसे पहले सबसे अच्छे निशानेबाजों को चुना गया। उन्होंने अपनी तोपों से मेरे दो याकों पर एक के बाद एक गोलियां चलाईं, जो मुझसे कुछ ही गज की दूरी पर थे। हालांकि उन्होंने सावधानी से निशाना लगाया था, फिर भी कोई भी उन्हें मार नहीं पाया। मुझे पता था कि उन्होंने गोलियां चलाई हैं, क्योंकि मुझे गोलियों की सरसराहट सुनाई दे रही थी।

इसके बाद घुड़सवारी का एक दिलचस्प प्रदर्शन हुआ। अगर मुझे लगातार दर्द न हो रहा होता तो मैं इसका और भी आनंद ले पाता। प्रदर्शन ने मेरा मनोबल बढ़ाने में मदद की। पहले दो टट्टुओं की दौड़ हुई, जिसमें एक समय में केवल दो ही टट्टू भाग लेते थे, और आखिरी दौड़ दो विजेताओं के बीच हुई। अंतिम विजेता को एक काटा भेंट की गई। फिर एक घुड़सवार पूरी रफ्तार से काटा लहराते हुए आगे बढ़ा, जबकि कुछ अन्य उसके पीछे-पीछे चल रहे थे। काटा ज़मीन पर गिर गई। जब वह ज़मीन पर गिरी, तो नेता के पीछे चल रहे

घुड़सवार आगे बढ़ गए, और एक संकेत मिलते ही वे तेज़ी से वापस दौड़े, काटा की ओर बढ़े और बिना घोड़े से उतरे उसे उठाने की कोशिश की। कुछ युवा इस खेल में बहुत माहिर थे।

एक अन्य खेल में पैदल चल रहे एक व्यक्ति को घोड़े पर सवार साथी द्वारा पूरी रफ्तार से दौड़ते हुए पकड़कर घोड़े की काठी पर बिठाया जाता था।

हालाँकि मेरी दृष्टि उतनी अच्छी नहीं थी जितनी मैं चाहता था, फिर भी मैंने शो का आनंद लिया और टट्टुओं की प्रशंसा की। पोम्बो ने समझदारी से उनमें से सबसे अच्छे टट्टू को मेरे पास लाने का आदेश दिया और मुझे बैठने की मुद्रा में बिठा दिया ताकि मैं उन्हें बेहतर ढंग से देख सकूँ।

यह मेरे लिए बहुत बड़ी राहत थी। खड़े न हो पाने की मेरी अपमानजनक स्थिति मुझे यातनाओं से कहीं अधिक पीड़ा दे रही थी, चाहे वे यातनाएँ कितनी भी भयानक क्यों न हों। पोम्बो ने मुझसे कहा कि अब मुझे तम्बू की ओर देखना चाहिए। फिर वह उठा और तम्बू की ओर चल पड़ा।

तंबू का प्रवेश द्वार बीस फीट से भी अधिक लंबा था। कुछ सैनिक आए और मुझे घसीटकर उसके ठीक सामने ले गए, ताकि मैं वहां होने वाली हर चीज का साक्षी बन सकूं।

दो शक्तिशाली लामा पोम्बो लेकर तम्बू में दाखिल हुए। अंदर मौजूद कई अन्य लोगों को बाहर निकाल दिया गया। उन्होंने कुछ मिनटों के लिए तम्बू बंद कर दिया और फिर उसे खोल दिया। इसी बीच एक घंटा बजने से मठ से लामाओं को बुलाया गया और कुछ मिनटों बाद उनका एक जुलूस नीचे आया और तम्बू के अंदर अपने-अपने स्थान ग्रहण कर लिए।

पीले कोट, पतलून और चार नोक वाली टोपी पहने पोम्बो तंबू के बीचोंबीच एक ऊँची पीठ वाली कुर्सी पर बैठे थे। उनके बगल में वे दो लामा खड़े थे जो उनके साथ पहले आए थे। पोम्बो निस्संदेह सम्मोहन की अवस्था में थे। वे बिना हिले-डुले, हाथों को घुटनों पर रखकर और सिर सीधा करके बैठे थे; उनकी आँखें टकटकी लगाए घूर रही थीं। वे कुछ मिनटों तक इसी अवस्था में रहे। तंबू के सामने जमा हुए सभी सैनिक और लोग घुटनों के बल बैठ गए, अपनी टोपियाँ ज़मीन पर रख दीं और प्रार्थना करने लगे। उन दो लामाओं में से एक, जो सम्मोहन शक्ति से युक्त प्रतीत होता था, ने पोम्बो के कंधों पर हाथ रखा। पोम्बो ने धीरे-धीरे अपने हाथ ऊपर उठाए और जैसे किसी सम्मोहन की अवस्था में हों, काफी देर तक बिना हिले-डुले बैठे रहे।

इसके बाद लामा ने अपने अंगूठों से पोम्बो की गर्दन को छुआ, जिससे उसका सिर तेजी से बाएं से दाएं गोलाकार गति में घूमने लगा।

सम्मोहनकर्ता ने कुछ मंत्रों का उच्चारण किया। पोम्बो ने सांप की तरह असामयिक रूप से शरीर को मरोड़ना शुरू कर दिया, अपने हाथ, सिर, शरीर और पैरों को हिलाते-डुलाते हुए। वह स्वयं, या यों कहें कि किसी ने, एक ऐसे उन्माद में डाल दिया जो कुछ समय तक चला। भक्तों की भीड़ उसके पास आती गई और श्रद्धापूर्वक प्रार्थना करने लगी। जब पोम्बो ने अपने अंगों से कुछ विलक्षण हरकतें कीं, तो गहरी आहें और आश्चर्य, यहाँ तक कि भय की चीखें सुनाई दीं। कभी-कभी यह विचित्र नृत्य एक अजीब मुद्रा में समाप्त होता था, पोम्बो वास्तव में अपने सिर को अपने पैरों के बीच रखकर और अपनी लंबी, चपटी टोपी को जमीन पर

रखकर खुद को दोहरा कर लेता था। जब वह इस स्थिति में था, तो आस-पास खड़े लोग एक-एक करके उसके पैर छूते और प्रणाम करते थे। अंत में सम्मोहनकर्ता ने पोम्बो का सिर अपने हाथों में पकड़कर उसकी आँखों में देखा, उसके माथे को रगड़ा और उसे सम्मोहन से जगा दिया। पोम्बो पीला और थका हुआ था। जब वे कुर्सी पर पीछे की ओर झुके तो उनकी टोपी गिर गई। उनके मुंडे हुए सिर से यह स्पष्ट था कि वे भी एक लामा थे। वास्तव में, वे एक बहुत उच्च कोटि के थे, संभवतः ल्हासा के दलाई लामा के बाद प्रथम कोटि के।
इस प्रस्तुति के बाद उपस्थित सभी तिब्बतियों को काटा वितरित किए गए, जिन्हें उन्होंने मोड़कर अपने कोट में रख लिया।
पोम्बो अपने भव्य तंबू से बाहर आया। मैंने उससे कहा कि नृत्य बहुत सुंदर था, लेकिन मुझे बहुत भूख लगी थी। उसने मुझसे पूछा कि मैं क्या खाना चाहूँगी। मैंने कहा कि मुझे कुछ मांस और चाय चाहिए।
थोड़ी देर बाद मेरे लिए याक के मांस से बनी स्वादिष्ट ग्रेवी से भरा एक बड़ा बर्तन लाया गया, साथ ही भरपूर मात्रा में त्साम्बा भी। मुझे बहुत भूख लगी थी, लेकिन मुझे थोड़ा सा खाना भी निगलने में बहुत कठिनाई हो रही थी। मुझे लगा कि यह मेरी रीढ़ की हड्डी में लगी चोटों और मेरे अंगों के आंशिक रूप से क्षतिग्रस्त होने के कारण होगा, जिसने जाहिर तौर पर मेरे सिर को छोड़कर मेरे पूरे शरीर को प्रभावित कर दिया था।
जब पोम्बो आराम करने चला गया और रात हो गई, तो मुझे फिर से लट्ठे से बांध दिया गया। इस बार मेरे पैर पहले की तरह ज्यादा दूर नहीं फैले थे। मेरी भुजाएँ फिर से पीछे वाले खंभे से बंधी हुई थीं, लेकिन उन पर कोई तनाव नहीं था।
शाम ढलते ही, मठ से आधा दर्जन लामा एक दीपक और एक बड़ा पीतल का कटोरा लेकर आए, जिसमें उन्होंने कहा कि चाय है। घायल लामा, जिनके सिर पर पट्टी बंधी थी, उनमें से एक थे। वे मुझे ठंडी रात में गर्म रखने के लिए गरमागरम पेय पिलाने के लिए इतने उत्सुक थे कि मुझे शक हो गया। जब उन्होंने मेरे होठों तक चाय का कटोरा बढ़ाया, तो मैंने बस थोड़ा सा ही पिया और आगे पीने से मना कर दिया, जो थोड़ा सा उन्होंने मेरे मुंह में डाला था उसे थूक दिया। दुर्भाग्य से मैंने कुछ बूँदें निगल लीं। कुछ मिनट बाद मेरे पेट में तेज दर्द होने लगा, जो कई दिनों तक बना रहा। मुझे जो पेय दिया गया था वह विषैला था।
अगले दिन मेरा बायां पैर, जो पहली बार रैक से खोले जाने के बाद से बेजान पड़ा था, धीरे-धीरे ठीक होने लगा और रक्त संचार सामान्य हो गया। दर्द असहनीय था।
सुबह फिर से इस बात को लेकर असमंजस की स्थिति छा गई कि हमारे साथ क्या किया जाए। कई लामा अब भी हमारा सिर कलम करने को उत्सुक थे, जबकि पोम्बो और अन्य लोगों ने पिछली रात लगभग हमें सीमा पर वापस भेजने का फैसला कर लिया था। दुर्भाग्य से, ऐसा लगता है कि पोम्बो को रात में एक दिव्य दृष्टि दिखाई दी। एक आत्मा ने उसे बताया कि अगर उसने हमें नहीं मारा, तो उसे और उसके देश को एक बड़ी विपत्ति का सामना करना पड़ेगा। आत्मा ने कथित तौर पर कहा, "तुम प्लेंकी को मार सकते हो, और अगर तुम ऐसा करोगे तो कोई तुम्हें दंडित नहीं करेगा। प्लेंकी तिब्बतियों से लड़ने से डरते हैं।"

लामाओं के बीच कोई भी महत्वपूर्ण कदम मंत्रोच्चार और गुप्त विद्या के संदर्भ के बिना नहीं उठाया जाता। पोम्बो ने एक लामा को मेरे बालों की एक लट काटने का आदेश दिया। एक सैनिक ने कुंद चाकू से ऐसा किया, और पोम्बो उसे हाथ में लिए हुए लामाओं के मठ में भविष्यवक्ता से परामर्श करने के लिए गया। लट को जांच के लिए सौंप दिया गया। कुछ मंत्रोच्चार के बाद, भविष्यवक्ता ने उत्तर दिया कि मेरा सिर कलम किया जाना चाहिए अन्यथा देश गंभीर खतरे में पड़ जाएगा।

पोम्बो निराश होकर वापस लौटा और अब उसने मेरे पैर के एक नाखून को काटने का आदेश दिया। यह क्रिया उसी कुंद चाकू से की गई; फिर से ज्योतिषी से सलाह ली गई; वही उत्तर प्राप्त हुआ।

आम तौर पर लामाओं की उच्च सभा द्वारा ऐसी तीन परामर्श बैठकें आयोजित की जाती हैं, और तिब्बती लोग तीसरी बैठक में भविष्यवक्ता के निर्णय के लिए नाखून का एक टुकड़ा प्रस्तुत करते हैं। इस अंतिम प्रक्रिया को करने वाले लामा ने मेरे हाथों की जाँच की और मेरी उंगलियों को फैलाकर गहरी हैरानी व्यक्त की। देखते ही देखते सभी लामा और सैनिक मेरे पास आए और मेरे हाथों की जाँच की—टकर मठ में मेरे अनुभव की पुनरावृत्ति हुई। पोम्बो को भी सूचना मिलते ही वे तुरंत आए और मेरी उंगलियों का निरीक्षण किया। उस क्षण से परिस्थितियाँ एक अलग मोड़ लेने लगीं।

कुछ हफ़्तों बाद जब मुझे रिहा किया गया, तो तिब्बतियों से मुझे उनके आश्चर्य का कारण पता चला। मेरी उंगलियाँ सामान्य से कुछ ऊपर तक आपस में जुड़ी हुई थीं। तिब्बत में इसे बहुत पवित्र माना जाता है। तिब्बतियों के अनुसार, ऐसी उंगलियों वाले व्यक्ति का जीवन भाग्यशाली होता है। चाहे कितनी भी कोशिश कर ली जाए, उसे कोई नुकसान नहीं पहुँचा सकता। तिब्बत में मेरे जीवन में भाग्य का कितना महत्व था, इस सवाल से परे, इसमें कोई संदेह नहीं है कि इस मामूली अंधविश्वास ने पोम्बो लोगों के हमारे भाग्य के बारे में निर्णय लेने में बहुत बड़ी भूमिका निभाई।

पोम्बो ने आदेश दिया कि मेरी जान बख्श दी जाए और मैं उसी दिन भारतीय सीमा की ओर अपनी वापसी यात्रा शुरू करूँ। उसने मेरे पैसों में से एक सौ बीस रुपये लेकर मेरी जेब में रख दिए ताकि यात्रा के दौरान मेरी ज़रूरतों को पूरा कर सकूँ। उसने यह भी हुक्म दिया कि मुझे जंजीरों में बांधकर रखा जाए, लेकिन मेरे और मेरे नौकरों के साथ अच्छा बर्ताव किया जाए।

फुटनोट:

[14] एक शाम सूर्यास्त से अगले दिन सूर्यास्त तक।

अध्याय XXIII

सीमा की ओर अग्रसर

जब सब कुछ तैयार हो गया, तो मुझे और मानसिंग को पैदल टोक्सेम ले जाया गया। हमारे साथ लगभग पचास घुड़सवार थे। हमारे पैर बुरी तरह से छिले हुए थे, हड्डियाँ दर्द कर रही थीं और पूरे शरीर पर घाव और ज़ख्म थे, फिर भी हमें बहुत तेज़ी से चलना पड़ा। सैनिकों ने मुझे कुत्ते की तरह गर्दन से बाँधकर ले गए और जब मैं हाँफते-हाँफते, थककर और दर्द से कराहते हुए टट्टुओं के साथ नहीं चल पा रहा था, तो वे मुझे घसीटते हुए ले गए। हमने कई ठंडी नदियों को पार किया, जिनमें हम कमर तक पानी और कीचड़ में डूब गए थे।

टॉक्सेम में, मुझे यह देखकर अत्यंत प्रसन्नता हुई कि चंदन सिंह अभी भी जीवित थे। उन्हें मिट्टी के घर में बंदी बनाकर रखा गया था, जहाँ उन्हें तीन दिनों से अधिक समय तक एक खंभे से सीधा बांधकर रखा गया था। चार दिनों से उन्होंने कुछ भी खाया-पिया नहीं था। उन्हें बताया गया था कि मेरा सिर काट दिया गया है। उनकी हालत बेहद दयनीय थी—वे अपने घावों, ठंड और भुखमरी से लगभग मरणासन्न थे।

हमें मिट्टी के मकान के एक कमरे में रात भर के लिए बंदी बना लिया गया। वह जगह सैनिकों से खचाखच भरी हुई थी, जो पूरी रात जुआ खेलते रहे, गाते रहे, गालियां देते रहे और लड़ते रहे, जिससे हमें कुछ मिनटों के लिए भी सोने का मौका नहीं मिला। आग के धुएं से हमारा दम घुट रहा था।

अगले दिन सूर्योदय होते ही चंदेन सिंह और मुझे याक पर बिठा दिया गया, सवारी के लिए इस्तेमाल होने वाली काठी पर नहीं, बल्कि लकड़ी की बोझ ढोने वाली काठी पर। बेचारे मानसिंह को पैदल चलने के लिए मजबूर किया गया और जब वह थककर गिर जाता या पीछे रह जाता, तो उसे बेरहमी से पीटा जाता था। अंत में उन्होंने उसके गले में रस्सी बांध दी और उसे बड़े ही क्रूर तरीके से घसीटा। एक मजबूत पहरेदार ने हमें भागने से रोक दिया। सभी शिविरों में सैनिकों ने याक और टट्टुओं की नई टुकड़ियों और अपने लिए भोजन की मांग की, जिससे हमारी यात्रा तेज हो गई। पहले पांच दिनों में हमने एक सौ अठहत्तर मील की दूरी तय की, जिनमें से दो सबसे लंबी यात्राएँ क्रमशः बयालीस और पैंतालीस मील की थीं। उसके बाद हमारी यात्रा उतनी तेज नहीं रही।

इन लंबी यात्राओं में हमें बहुत कष्ट सहना पड़ा। सैनिकों ने हमारे साथ बुरा बर्ताव किया और हमें हर दिन खाने नहीं दिया, इस डर से कि कहीं हम बहुत मजबूत न हो जाएँ। वे हमें दो-तीन दिन में एक बार ही खाना देते थे। हमारी थकावट और घायल अवस्था में उन बदहाल याकों की सवारी करने से होने वाला दर्द असहनीय था।

हमारी सारी संपत्ति हमसे छीन ली गई थी। हमारे कपड़े चिथड़े-चिट्टे थे और उनमें कीड़े-मकोड़े भरे हुए थे। हम नंगे पैर थे और लगभग नग्न अवस्था में थे। पहले कुछ दिन हम आम तौर पर सूर्योदय से पहले से लेकर सूर्यास्त के एक-दो घंटे बाद तक चलते रहे। शिविर पहुँचते ही हमें याकों से अलग कर दिया गया और हमारे जेलरों ने हमारी कलाईयों में पहले से मौजूद जंजीरों के अलावा हमारे टखनों में भी भारी छल्ले ठूंस दिए। इस

प्रकार जंजीरों से जकड़े होने के कारण तिब्बती जानते थे कि हमारा भागना नामुमकिन है। हमें बिना किसी आवरण के खुले में सोने के लिए छोड़ दिया गया। कुछ रातें हम बर्फ पर लेटे रहे; कुछ रातें बारिश में भीगते रहे। हमारे पहरेदार आम तौर पर एक तंबू लगाते थे जिसके नीचे वे सोते थे। यहाँ तक कि जब उनके पास कोई आश्रय नहीं होता था, तब भी वे हमसे लगभग पचास गज की दूरी पर चाय बनाने जाते थे।

मेरे दो नौकर, जो मेरे पास बैठकर मेरी निगरानी कर रहे थे और मुझे देख रहे थे, उनकी मदद से मैंने बड़ी मुश्किल से, काफी जोखिम उठाकर, वापसी यात्रा का एक मोटा-मोटा ब्यौरा तैयार किया। यह ब्यौरा उस छोटे से कागज़ के टुकड़े पर था जो तिब्बतियों द्वारा तलाशी के दौरान मेरी जेब में रह गया था। मेरे हाथ लचीले थे, इसलिए मैं अपना दाहिना हाथ हथकड़ी से बाहर निकाल सका। मैंने एक हड्डी का छोटा सा टुकड़ा उठाया और उसे कलम बनाकर, और अपने खून को स्याही की तरह इस्तेमाल करके, संक्षिप्त गुप्त नोट्स और पूरे वापसी मार्ग का एक मोटा-मोटा नक्शा बनाया।

मजबूरीवश मुझे सूर्य की दिशा देखकर ही संतोष करना पड़ा, जिसकी स्थिति का अनुमान मैं अपने शरीर की छाया को लगातार देखकर काफी हद तक सटीक रूप से लगा लेता था। बेशक, जब बारिश या बर्फबारी होती थी, तो मुझे पिछले दिन के अवलोकन के आधार पर ही दिशा का अनुमान लगाना पड़ता था। हमने पहले पश्चिम की ओर, फिर पश्चिम-उत्तर-पश्चिम, उत्तर-पश्चिम, पश्चिम और उत्तर-पश्चिम की ओर यात्रा की, ब्रह्मपुत्र नदी के साथ-साथ उसी मार्ग पर चलते हुए, जो हमारी यात्रा के दक्षिण में था, जब तक कि हम युत्ज़ांग (ल्हासा) प्रांत की सीमा तक नहीं पहुँच गए। हमारे अंगरक्षकों का व्यवहार हमारे प्रति बहुत कठोर था। उन्होंने हर संभव तरीके से हमारे साथ दुर्व्यवहार किया। केवल एक-दो सैनिकों ने ही सहानुभूति दिखाई और जब भी संभव हुआ, अपने साथियों की नज़र से बचकर हमारे लिए थोड़ा सा मक्खन या त्साम्बा ले आए। अंगरक्षक इतनी बार बदलते थे कि हमें उनसे दोस्ती करने का कोई मौका ही नहीं मिला। हर बार आने वाला दल पिछले वाले से बदतर लगता था।

एक दिन एक अजीब घटना घटी, जिससे तिब्बतियों में दहशत फैल गई। हम एक चट्टान के पास रुके थे। सैनिक लगभग बीस गज की दूरी पर थे। इन बदमाशों को सम्मान दिलाने के सभी उपाय विफल हो जाने पर, मैंने आख़िरी उपाय के तौर पर वेंट्रिलोक्विज़्म (पेट से आवाज़ निकालना) का प्रयोग किया। मैंने बोलना शुरू किया और ऐसा नाटक किया जैसे चट्टान की चोटी से मुझे मेरे शब्दों के जवाब मिल रहे हों। तिब्बती भयभीत हो गए। उन्होंने मुझसे पूछा कि ऊपर कौन है? मैंने कहा कि वह कोई ऐसा व्यक्ति है जिसे मैं जानता हूँ।

"क्या यह प्लेंकी है?"

"हाँ।"

उन्होंने तुरंत हमें हमारी याकों पर बिठाया जबकि वे खुद अपने टट्टुओं पर सवार हो गए, और हम बड़ी तेजी से उस जगह से निकल गए।

अपनी यात्रा के दौरान किए गए अवलोकन के आधार पर, जब मैं एक ऐसे स्थान पर पहुँचा जो पूर्वी देशांतर 83° 6' 30" और उत्तरी अक्षांश 30° 27' 30" पर स्थित था, तो मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ। यहीं पर ब्रह्मपुत्र नदी

के दो प्रमुख स्रोत मिलते थे और एक नदी का निर्माण करते थे - एक उत्तर-पश्चिम से, जिसका मैंने पहले ही अनुसरण किया था, और दूसरा पश्चिम-उत्तर-पश्चिम से। तिब्बतियों ने, मेरी प्रसन्नता के लिए, दक्षिणी मार्ग चुना, जिससे मुझे इस महान नदी के दो प्रमुख स्रोतों में से दूसरे स्रोत के दर्शन करने का अवसर मिला। यह दूसरी धारा एक समतल मैदान से निकलती थी, जिसका उद्गम लगभग पूर्वी देशांतर 82° 47' और उत्तरी अक्षांश 30° 33' पर स्थित एक छोटी झील में होता था। मैंने उत्तरी स्रोत को अपना नाम दिया। ब्रह्मपुत्र नदी के दोनों स्रोतों का दर्शन करने वाला मैं पहला श्वेत व्यक्ति बनकर प्रसन्न था।

कैद का यह दौर भले ही नीरस था, लेकिन इससे काफी कुछ सीखने को मिला। जैसे-जैसे हम आगे बढ़े, मैंने सैनिकों से कई तिब्बती गीत सीखे, और अपने पहरेदारों में से जो कम गुस्सैल थे, उनसे मैंने सोच-समझकर सवाल पूछकर काफी जानकारी हासिल की।

मैयुम दर्रे की तुलना में अधिक दक्षिणी और निचले दर्रे से होकर, जिसके द्वारा हम स्वस्थ, आशावान और स्वतंत्र रूप से युत्ज़ांग प्रांत में प्रवेश कर चुके थे, अब हम उसे घायल, टूटे हुए, लगभग नग्न और कैदी बनकर छोड़ रहे थे।

हम उत्तर-पश्चिम दिशा में आगे बढ़े। पवित्र युत्ज़ांग प्रांत से बाहर निकलते ही हमारे रक्षकों का व्यवहार कुछ कम क्रूर हो गया। पोम्बो ने मुझे जो थोड़े पैसे रखने की अनुमति दी थी, उससे हमें अब पर्याप्त भोजन खरीदने की अनुमति मिल गई, जिससे हम अधिक बार भोजन कर सकें। जब हम भोजन कर रहे थे, सैनिकों ने हमारी हथकड़ियाँ खोल दीं और उन्हें अस्थायी रूप से हमारे टखनों में बाँध दिया। रक्षक द्वारा दिए गए बर्तनों से हमने कुछ खाना पकाया। खाना स्वादिष्ट लग रहा था। हमने प्लेटों के लिए चपटे पत्थरों का इस्तेमाल किया।

हमने अपने पुराने रास्ते को पार किया और फिर लगभग उसी के समानांतर, उससे कुछ मील उत्तर की ओर, एक ऊबड़-खाबड़, चिकनी मिट्टी के पठार पर आगे बढ़े। इस तरह हम उस दलदली मैदान से बच गए जिसे पार करना हमें अपनी पिछली यात्रा में बहुत मुश्किल लगा था। हमें जगह-जगह बिखरे हुए बहुत सारे काले तंबू दिखाई दिए। एक रात, जब हम कुछ छोटी झीलों के पास डेरा डाले हुए थे, तो हमें एक बकरी खरीदने की अनुमति मिली। हमारे मित्र एक सैनिक ने हमारे लिए एक मोटी-ताज़ी बकरी चुनी और हम बड़े चाव से भरपेट भोजन की उम्मीद कर रहे थे, तभी हमें यह जानकर निराशा हुई कि हमारे पास उस जानवर को मारने का कोई साधन नहीं है। हम उसका सिर नहीं काट सकते थे, क्योंकि तिब्बती हमें चाकू या तलवार देने पर भरोसा नहीं करते थे। तिब्बतियों ने हमारे लिए जानवर को मारने से इनकार कर दिया। आखिरकार, एक रुपये के भुगतान से हमारे सैनिक मित्र का संकोच दूर हो गया। उसने जानवर के पैरों को एक साथ बांध दिया और उसकी नाक में मिट्टी भरकर, एक हाथ से उस बेचारे जानवर का मुंह तब तक कसकर पकड़े रखा जब तक कि दम घुटने से उसकी मृत्यु नहीं हो गई। प्रदर्शन के दौरान सैनिक अपने खाली हाथ से प्रार्थना-चक्र घुमाता रहा और लगातार पूरी श्रद्धा से प्रार्थना करता रहा।

अंततः हम मैदान में पहुँच गए, जहाँ लगभग दो सौ तम्बुओं का एक तरजुम शिविर दिखाई दे रहा था। हम वहाँ एक रात रुके। वहाँ लामाओं और सैनिकों का एक बड़ा समूह था। आधी रात को हमें नींद से अचानक जगाया

गया और हमें अपना शिविर बस्ती से लगभग एक मील दूर स्थानांतरित करने के लिए कहा गया। सुबह जल्दी, बड़ी नदी पार करके, हम दक्षिण-पश्चिम दिशा में आगे बढ़े और उसी रात तोकचिम तरजुम के शिविर में पहुँच गए। वहाँ हमारी मुलाकात उन अधिकारियों से हुई, जो पहले हमारी वापसी यात्रा के दौरान हमारे लिए उपहार लाए थे और जिन्हें हमने उनके सैनिकों के साथ मिलकर तब हराया था जब उन्होंने हमें धमकी दी थी। इस बार उन्होंने समझदारी से व्यवहार किया। उनमें से सबसे बुजुर्ग ने हमारे प्रति अत्यंत विनम्रता दिखाई और इतनी विपरीत परिस्थितियों में भी हमारे धैर्य और दृढ़ता की सराहना की। उस बुजुर्ग सज्जन ने हमें आराम देने के लिए हर संभव प्रयास किया और यहाँ तक कि हमारे मनोरंजन के लिए दो संगीतकारों को भी बुलाया।

अगले दिन, हमारे मेज़बानों और जेलरों द्वारा बार-बार विदाई और मित्रता के वादों के बीच, हम मानसरोवर की ओर चल पड़े। दोपहर ढलते-ढूँढते हम टकर गाँव और गोम्बा पहुँचे, जहाँ हमने उसी सराय में रात बिताई जहाँ हम जाते समय सोए थे। यहाँ हमारे सारे बंधन खोल दिए गए और हमें अपेक्षाकृत स्वतंत्रता मिली, हालाँकि चार आदमी मेरे साथ-साथ चलते थे और उतने ही चंदन सिंह और मानसिंह की देखभाल करते थे। स्वाभाविक रूप से हमें सराय से दूर जाने की अनुमति नहीं थी, लेकिन हम गाँव में टहल सकते थे। मैंने इस अवसर का लाभ उठाकर मानसरोवर झील में स्नान किया। चंदन सिंह और मानसिंह ने एक बार फिर देवताओं को प्रणाम किया और पवित्र जल में डुबकी लगाई।

पिछली बार जब मैं यहाँ आया था तब स्थानीय लामा मेरे प्रति मित्रवत थे, लेकिन अब वे बेहद रूखे और असभ्य थे। हमारे आने को देखकर वे मठ के भीतर चले गए और दरवाज़ा ज़ोर से बंद कर दिया। सभी ग्रामीण भी जल्दी से अपने-अपने घरों में लौट गए। हमारे चारों ओर मौजूद सैनिकों को छोड़कर पूरा इलाका सुनसान लग रहा था।

बेचारी मानसिंग, जो थकी-हारी और बहुत दर्द में थी, मेरे पास ही बैठी झील को धुंधली निगाहों से देख रही थी, तभी उसे एक असाधारण दृश्य दिखाई दिया, जो शायद बुखार या थकावट का परिणाम था।

"ओह, महोदय," उसने मानो सपने में कहा, हालांकि वह पूरी तरह जागा हुआ था, "देखिए, देखिए! पानी पर चलते लोगों की भीड़ को देखिए! हज़ार से ज़्यादा लोग होंगे! ओह, ये कितने बड़े होते जा रहे हैं!... और ये रहे भगवान!... नहीं; ये तिब्बती हैं; ये हमें मारने आ रहे हैं; ये लामा हैं! ओह, आइए, साहब, ये पास आ रहे हैं!... ओह, ये उड़ रहे हैं!..."

मैंने पूछा, "वे कहाँ हैं?"

"वे सब गायब हो गए!" उसने हैरानी से कहा, जैसे ही मैंने अपना हाथ उसके माथे पर रखा और वह अपनी तंद्रा से जाग गया।

मुझे साफ दिख रहा था कि बेचारा मतिभ्रम का शिकार था। उसका माथा जल रहा था और उसे तेज बुखार था।

कुछ क्षणों के लिए वह बिल्कुल स्तब्ध सा लग रहा था। बाद में जब मैंने उससे पूछा कि क्या उसने फिर से उस प्रेत भीड़ को देखा था, तो उसे याद ही नहीं आया कि उसने उसे कभी देखा भी था।

शाम के समय स्थानीय लोग सराय में हमसे मिलने आए। हमने उनके साथ खूब मज़ा किया। तिब्बती लोग विनोदपूर्ण स्वभाव के थे और उनका व्यवहार भी हास्यप्रद था। अब जब हम तकलाकोट से केवल दो कदम दूर थे, तो हमारा उत्साह बढ़ना स्वाभाविक था। बस दो दिन की कैद, और फिर आज़ादी की उम्मीद!

जब हमें जगाया गया और चलने का आदेश दिया गया तब तक अंधेरा ही था। सैनिक हमें सराय से घसीटकर बाहर ले गए। हमने उनसे पवित्र मानसरोवर में एक और डुबकी लगाने की विनती की, और अंततः हम तीनों को इसकी अनुमति मिल गई। पानी बेहद ठंडा था, और हमारे पास खुद को सुखाने के लिए कुछ भी नहीं था। सूर्योदय से लगभग एक घंटा पहले हमें हमारी याकों पर बिठाया गया और लगभग तीस सैनिकों से घिरे हुए हम रवाना हो गए।

कई घंटों तक मार्च करने के बाद हमारे पहरेदार चाय पीने के लिए रुके। सुना नाम का एक व्यापारी, उसका भाई और बेटा, जिनसे मेरी मुलाकात गरब्यांग में हुई थी, हमारे पास आकर रुके। उनसे मुझे पता चला कि भारत में खबर पहुंची है कि मेरे दो आदमियों और मुझे मार डाला गया है, और इसके बाद डॉक्टर विल्सन और ब्रिटिश राजनीतिक अधिकारी करक सिंह, सच्चाई का पता लगाने और मेरा सामान वापस लाने आदि के लिए सीमा पार कर गए हैं। यह सुनकर मेरी खुशी का ठिकाना नहीं रहा कि वे अभी भी तकलाकोट में हैं। मैंने सुना को समझाया कि वह जितनी जल्दी हो सके लौटकर विल्सन को सूचित करे कि मैं कैदी हूँ और उन्हें मेरे ठिकाने के बारे में बताए। मैंने सुना को यह संदेश दिया ही था कि हमारे पहरेदार ने उस आदमी और उसके भाई को पकड़ लिया और उन्हें बेरहमी से वहाँ से भगा दिया, जिससे वे हमसे आगे कोई संपर्क न कर सकें।

जैसे ही हमने दोबारा चलना शुरू किया, एक घुड़सवार हमारे पास आया और उसने तकलाकोट के सरदार का सख्त आदेश दिया कि हमें लिप्पू दर्रे से सीमा की ओर आगे न बढ़ने दिया जाए, जहाँ हम दो दिनों में पहुँच सकते थे, बल्कि हमें दूर स्थित लुम्पिया दर्रे से ले जाया जाए। साल के उस समय लुम्पिया दर्रा पार करना असंभव होता। हमें कम से कम पंद्रह या सोलह दिनों की और यात्रा करनी पड़ती, जिसमें से अधिकांश बर्फ और हिम पर होती, और इस दौरान हम, अपनी भूख और कमजोरी के कारण, निश्चित रूप से मर जाते। हमने तकलाकोट ले जाने का अनुरोध किया, लेकिन हमारे रक्षक ने इनकार कर दिया। तकलाकोट के सरदार ने अपने आदेशों का पालन सुनिश्चित करने और हमारी आगे की प्रगति को रोकने के लिए अन्य दूतों और सैनिकों को भेजा था।

तकलाकोट के सैनिकों द्वारा मजबूत किए गए हमारे पहरेदारों ने हमें तकलाकोट मार्ग छोड़ने के लिए मजबूर किया, और हमने ठंडे लुम्पिया की ओर अपनी यात्रा शुरू की। यह हत्या थी। तिब्बती, यह भली-भांति जानते हुए, ब्रिटिश अधिकारियों को यह बताने की योजना बना रहे थे कि हमारी बर्फ में स्वाभाविक मृत्यु हो गई है।

हमें बताया गया कि हमें उस जगह पर छोड़ दिया जाए जहाँ से लगातार बर्फ गिरना शुरू होता है, तिब्बती हमें न तो खाना देंगे, न कपड़े और न ही कंबल, और हमें जैसे-तैसे सीमा पार करने के लिए छोड़ दिया जाए। कहने की जरूरत नहीं है कि इसका मतलब निश्चित मौत थी।

तकलाकोट मार्ग से लगभग ढाई मील पश्चिम की ओर जाने के बाद हमने उस दिशा में आगे बढ़ने से मना कर दिया। हमने कहा कि यदि वे हमें जबरदस्ती आगे बढ़ने के लिए मजबूर करते हैं, तो हम अपने रक्षकों से लड़ने के लिए तैयार हैं। चाहे हम उनकी तलवारों और बंदूकों से मारे जाएँ या लुम्पिया नदी पर ठंड से जम कर मर जाएँ, यह हमारे लिए बिल्कुल भी मायने नहीं रखता था।

गार्ड असमंजस में पड़ गया और उसने हमें रात भर वहीं रुकने की इजाजत दे दी, ताकि उसे तकलाकोट में एक संदेशवाहक भेजकर जोंग पेन को सूचित करने और आगे के निर्देश मांगने का समय मिल सके।

रात में आदेश आया कि हमें आगे बढ़ना होगा, इसलिए अगली सुबह हमारे पहरेदारों ने हमें फिर से लुम्पिया की ओर रवाना करने की तैयारी की। उसी क्षण हम तीनों अधमरे शरीरों ने अपनी बची-खुची ताकत को इकट्ठा किया और अचानक, जो भी पत्थर हमारे हाथ लगे, उनसे सैनिकों पर हमला कर दिया। यह अविश्वसनीय लग सकता है, लेकिन हमारे कायर पहरेदार भाग निकले! हम तकलाकोट की दिशा में आगे बढ़े, और कुछ दूरी पर ये बदमाश हमारा पीछा कर रहे थे, जो हमसे विनती कर रहे थे कि हम और विरोध न करें और उनके साथ वहीं चलें जहाँ वे हमें ले जाना चाहते थे। उन्होंने कहा कि अगर हम नहीं माने, तो वे उन सभी के सिर काट देंगे। हमने उनकी बात मानने से इनकार कर दिया और उन पर पत्थर फेंककर उन्हें दूर भगाया।

कुछ ही मील चलने के बाद हमारा सामना सैनिकों और लामाओं की एक बड़ी टुकड़ी से हुआ, जिन्हें जोंग पेन ने हमारी हत्या की तैयारी में भेजा था। निहत्थे, घायल, भूखे और थके-हारे होने के कारण, ऐसी प्रतिकूल परिस्थितियों में लड़ना व्यर्थ था। जब उन्होंने देखा कि हमने अपनी स्वतंत्रता पुनः प्राप्त कर ली है, तो वे हम पर गोली चलाने के लिए तैयार हो गए।

जोंग पेन के मुख्यमंत्री, लापसांग नाम के एक व्यक्ति, और जोंग पेन के निजी सचिव, इस दल के प्रमुख थे। मैं उनसे हाथ मिलाने गया। लंबी और तीखी बहस हुई, लेकिन वे अपनी बात पर अड़े रहे और इस बात पर अड़े रहे कि अब जब हम सीमा के बहुत करीब आ चुके हैं, तो हमें सीमा से पीछे हट जाना चाहिए। हमें मजबूरी में ऊँचे लुम्पिया दर्रे से होकर जाना होगा। ये जोंग पेन के आदेश थे, और उन्हें, साथ ही मुझे भी, इनका पालन करना था। उन्होंने हमें न तो जानवर दिए और न ही कपड़े, जबकि मेरे पास जो थोड़े पैसे थे उनसे ये सब खरीदा जा सकता था। उन्होंने हमें एक औंस भी भोजन नहीं दिया। हमने पुरजोर विरोध किया और कहा कि हम जहाँ हैं वहीं मरना पसंद करेंगे। हमने उनसे कहा कि वे हमें वहीं मार डालें, क्योंकि हम पश्चिम की ओर एक इंच भी नहीं हिलेंगे।

लापसांग और जोंग पेन के निजी सचिव ने चालाकी से सुझाव दिया कि मैं उन्हें उन शोकाओं के नाम लिखित में दे दूं जो मेरे साथ तिब्बत गए थे, शायद उनका उद्देश्य मेरे इन पूर्व अनुयायियों की ज़मीन और संपत्ति ज़ब्त करना था। चूंकि मैंने कहा कि मैं तिब्बती या हिंदुस्तानी नहीं लिख सकता, इसलिए उन्होंने मुझसे इसे अंग्रेज़ी में लिखने का अनुरोध किया। मैंने ऐसा ही किया, लेकिन अपने आदमियों के नामों और अपने हस्ताक्षर के स्थान पर व्यंग्यात्मक शब्द लिख दिए, जिससे तिब्बतियों को दस्तावेज़ का अनुवाद मिलने पर आश्चर्य हुआ होगा।

तिब्बतियों ने हमें वहीं मारने से इनकार कर दिया। लापसांग ने हमारे प्रति अत्यंत विनम्रता दिखाई और एक निजी उपकार के रूप में हमसे लुम्पिया दर्रे से होकर जाने का अनुरोध किया। मेरे पास कोई और विकल्प न होने के कारण मैंने अनिच्छा से उनकी शर्तें मान लीं, ताकि और समय बर्बाद न हो।

सैनिकों की विशाल टुकड़ी की सुरक्षा में, हम लगभग करदम पहुँच ही गए थे कि तभी एक घुड़सवार पूरी रफ्तार से आया और हमारे दल को आवाज़ दी। हम रुक गए। संदेशवाहक ने हमें पकड़ लिया और लापसांग को एक पत्र सौंपा। उसमें हमें तुरंत तकलाकोट लाने का आदेश था।

हम गक्कॉन नदी के ऊपर स्थित लहरदार पठार पर वापस लौटे। देर रात हम डोगमार गाँव पहुँचे, जो मिट्टी की दो ऊँची चट्टानों के बीच स्थित एक घाटी में बसा एक अनोखा गाँव था। वहाँ के मूल निवासी चट्टान में खोदे गए गड्ढों और कक्षों में रहते थे।

जोंग पेन के निजी सचिव लापसांग और अधिकांश सैनिक अपने टट्टुओं को बदलकर तकलाकोट की ओर चल दिए। हमें रुकने के लिए कहा गया। जोंग पेन का एक और पत्र आया जिसमें उन्होंने कहा कि उन्होंने अपना इरादा बदल लिया है, और हमें अंततः लुम्पिया दर्रे से ही जाना होगा!

अध्याय 24

अंततः दोस्तों के साथ

रात में बड़ी संख्या में घुड़सवार आ गए। वहां भारी अफरा-तफरी मच गई, लोग चिल्लाते हुए इधर-उधर भागने लगे।

तिब्बत को ऐसे अधिकारियों के हाथों में सौंप दिया गया है जो व्यावहारिक रूप से छोटे सामंती राजाओं की तरह हो गए हैं और जो लगातार एक-दूसरे से झगड़ते रहते हैं।

राजसी ईर्ष्या और सड़क के अधिकार को लेकर विवादों के चलते ही नई सेना का आगमन हुआ था। कुल मिलाकर लगभग डेढ़ सौ सैनिक थे जो तोपों और तलवारों से लैस थे। इस दल का सरदार आठ-दस अन्य अधिकारियों के साथ मेरे पास आया। वह इतनी उत्तेजित अवस्था में बोल रहा था कि मुझे लगा कि हमारे लिए कोई मुसीबत आने वाली है। और सचमुच मुसीबत आ गई। ये नए आए सैनिक ज्ञानमा, करदम और बारका जिलों से आए अधिकारी और सैनिक थे। वे बारका तरजुम के सख्त आदेशों के साथ आए थे कि हम किसी भी हालत में उनके प्रांत से होकर न गुजरें और न ही लुम्पिया दर्रे से भारत में प्रवेश करें। यह बात हास्यास्पद और साथ ही लुभावनी भी थी, क्योंकि अब हमारे पास सीमा पार करने का कोई रास्ता नहीं बचा था। हमारे अंगरक्षक और जोंग पेन के कुछ सैनिक जो पीछे रह गए थे, यह देखकर कि वे अल्पमत में हैं, उन्होंने गायब हो जाना ही समझदारी समझा। मैं स्वाभाविक रूप से जल्द से जल्द देश से बाहर निकलना चाहता था, लेकिन मैंने ज्ञानेमा के सभी लोगों की बात मान ली और उनसे आग्रह किया कि अगर जोंग पेन ने मुझे तरजुम प्रांत से होकर जाने पर जोर दिया तो वे लड़ें। देश से बाहर निकलने के सभी रास्ते अब हमारे लिए बंद हो चुके थे, और जब तक हम बल का प्रयोग नहीं करते, मुझे लगता था कि हम कभी बच नहीं पाएंगे।

ज्ञानेमा के लोगों ने मुझसे पूछा कि क्या जोंग पेन के सैनिकों से लड़ाई होने पर मैं उनका नेतृत्व करूँगा। हालाँकि मुझे उनकी बहादुरी पर पूरा भरोसा नहीं था, फिर भी मैंने कार्यवाहक सेनापति का पद स्वीकार कर लिया। चंदेन सिंह और मानसिंह को वहीं मेरे सहायक नियुक्त कर दिया गया। हमने रात का अधिकांश समय जोंग पेन की सेना पर हमले की योजना बनाने में बिताया। जब सब कुछ ठीक से तय हो गया, तो तिब्बतियों ने अपना आभार व्यक्त करते हुए मुझे मटन का एक टुकड़ा, कुछ त्साम्बा और चाय की दो ईंटें दीं।

सुबह हो गई। मुझे सवारी के लिए एक सुंदर टट्टू दिया गया। चंदेन सिंह और मानसिंह भी उतने ही सुंदर घोड़ों पर सवार थे। फिर मेरे तिब्बती सैनिक एक भव्य काफिले की तरह आगे बढ़े। हम खुशी-खुशी तकलाकोट की ओर चल पड़े। हमें सूचना मिली थी कि जोंग पेन ने अपने सैनिकों को सड़क के एक निश्चित बिंदु पर इकट्ठा किया है, जहाँ से वह हमारा रास्ता रोकना चाहता है। हमें उसी बिंदु को पार करना था। मेरे तिब्बती सैनिकों ने कहा कि वे जोंग पेन के सैनिकों से घृणा करते हैं और कसम खाई कि अगर उन्होंने हमारे सामने खड़े होकर हमारा रास्ता रोकने की हिम्मत की तो वे उन सभी का वध कर देंगे।

तिब्बती अधिकारियों में से एक ने कहा, "लेकिन वे इतने कायर हैं कि भाग जाएंगे।"

यह सारी बातचीत अचानक तब रुक गई जब हमें दूर से हमारे दुश्मनों के घोड़ों की घंटियों की झंकार सुनाई दी। मैंने अपने सैनिकों का हौसला बढ़ाया, लेकिन उनमें दहशत फैलने लगी। जोंग पेन के सैनिक नज़र आने लगे। मैंने दो सेनाओं को आमने-सामने खड़ा देखा, दोनों एक-दूसरे से बेहद भयभीत थीं।
मेरी आपत्तियों के बावजूद, दोनों पक्षों ने बड़ी उत्सुकता से अपनी बंदूकें और तलवारें जमीन पर रख दीं, ताकि यह दिखाया जा सके कि केवल शांतिपूर्ण इरादे ही प्रबल हैं। फिर एक बैठक हुई, जिसमें ऐसा लग रहा था कि हर कोई एक-दूसरे की मदद करने को तैयार है, सिवाय मेरे।
जब यह प्रक्रिया चल ही रही थी, तभी एक घुड़सवार जोंग पेन की ओर से एक संदेश लेकर आया, और अंततः, सभी की संतुष्टि के लिए, हमें तकलाकोट में प्रवेश करने की अनुमति मिल गई।
मेरी सेना उत्तर-पश्चिम की ओर वापस लौट गई। कुछ ही घंटों के लिए मैंने जिस ऊँचे सैन्य पद पर कार्य किया था, उससे हटाए जाने के बाद मैं फिर से एक आम नागरिक और कैदी बन गया। एक बड़ा दल हमें बंजर चट्टानों के किनारे गक्कोन नदी के प्रवाह का अनुसरण करते हुए एक पथरीले रास्ते से ले गया। हमने सैकड़ों छोटे-बड़े चोक्तेन (किले) देखे, जिनमें से अधिकतर लाल रंग से रंगे हुए थे, और मणि की दीवारें भी थीं। फिर, सफेद चिकनी मिट्टी पर एक खड़ी ढलान से नीचे उतरते हुए, हम एक घनी आबादी वाले क्षेत्र में पहुँचे, जहाँ चारों ओर पत्थर के घर बिखरे हुए थे। हमने बाईं ओर देलालिंग का विशाल मठ और थोड़ी दूरी पर सिबलिंग का गोम्बा देखा। चट्टानों और पत्थरों के बीच एक घुमावदार मार्ग बनाते हुए, हम ऊँची, सुंदर चट्टान के चारों ओर घूमे, जिसके शिखर पर तकलाकोट का किला और मठ स्थित थे।
इस बिंदु पर पहुँचते ही हमें इतनी चिंता होने लगी कि कहीं कुछ हो न जाए और हमें दूसरे रास्ते से वापस न लौटना पड़े। इसलिए गक्कोन नदी पर बने लकड़ी के पुल को पार करते ही, चंदेन सिंह और मैंने पहाड़ी की तलहटी में शोका लोगों की बड़ी बस्ती को देखकर अपने टट्टुओं को चाबुक मारा और अपने पहरेदारों से बचकर भाग निकले। ऊँची चट्टान पर, जिसमें स्थानीय लोगों के रहने के लिए छेद और रास्ते बने हुए थे, हम पूरी ताकत से सरपट दौड़ते हुए अंततः अपने दोस्तों के बीच पहुँच गए। शोका लोग, जो तिब्बतियों के साथ अपना सामान बदलने के लिए इस बाजार में आए थे, हमें देखकर चकित रह गए। उन्होंने बड़ी मुश्किल से हमें पहचाना।
हमने तुरंत डॉक्टर विल्सन के बारे में पूछताछ की। जब हमें वह मिले, तो वह हमें पहचान ही नहीं पाए, क्योंकि हम इतने बदले हुए थे। हमारी दयनीय हालत देखकर वे बहुत दुखी हुए।
शिविर में हमारे आगमन की खबर फैलते ही, सभी ने हमारा भरपूर स्वागत किया। विल्सन के तंबू के एक कोने में कई पौंड मीठा मीठा रखा था। मुझे इतनी ज़ोर की भूख थी कि मैं उस पर टूट पड़ा और झटपट सारा मीठा खा गया। बाद में, मेरे शोका मित्रों ने खाने-पीने की कई चीज़ें उपहार में दीं, और डॉक्टर के रसोइए रुब्सो ने एक शानदार भोजन तैयार करने की तैयारी शुरू कर दी।
ब्रिटिश राजनीतिक सीमा अधिकारी, करक सिंह, मेरे लिए कपड़े लेकर तुरंत आए। डॉक्टर विल्सन ने मुझे कुछ और कपड़े दिए। मेरे फटे-पुराने कपड़ों में कीड़े-मकोड़े भरे हुए थे। हमारे गार्ड ने हमें एक बार भी

कपड़े बदलने की इजाजत नहीं दी थी, और न ही वे हमारे रोज़ाना नहाने की बात सुनते थे। यह एक विशेष कृपा थी, और केवल इसकी पवित्रता के कारण ही हमें पवित्र मानसरोवर झील में डुबकी लगाने की अनुमति मिली थी।

बाद में उसी दिन डॉक्टर विल्सन ने मेरे घावों और चोटों की जांच की, जिन्होंने भारत सरकार को आधिकारिक रिपोर्ट भेजी।

विल्सन और करक सिंग की कोमल देखभाल और भरपूर भोजन से मेरा मनोबल, जो काफी कम हो गया था, जादू की तरह लौट आया। कुछ घंटों की खुशी के बाद, मैं अपने द्वारा झेली गई कठिनाइयों और कष्टों को भूलने लगा था। मैं तीन दिन तकलाकोट में रहा, इस दौरान तिब्बतियों ने मेरा कुछ जब्त किया हुआ सामान मुझे लौटा दिया। मुझे यह जानकर अत्यंत प्रसन्नता हुई कि बरामद की गई चीजों में मेरी डायरी, नोटबुक, नक्शे और रेखाचित्र शामिल थे। मेरे हथियार, मेरा अधिकांश धन, अद्भुत शक्तियों वाली सोने की अंगूठी, कई गणितीय उपकरण, संग्रह, चार सौ से अधिक फोटोग्राफिक नेगेटिव और कई अन्य वस्तुएं अभी भी गायब थीं, लेकिन मुझे जितना कुछ वापस मिला, उससे मैं खुश था।

डॉक्टर विल्सन के तंबू में उनके निजी सचिव टोकचिम तारजुम, नेरबा (जिन्हें पाठक शायद मेरी यातनाओं में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने के लिए याद करते होंगे), जोंग पेन के सचिव और चौड़ी आस्तीनों वाले सुंदर हरे मखमली कोट में लापसांग आए। इन तिब्बती अधिकारियों ने राजनीतिक अधिकारी के सामने डॉक्टर विल्सन, पंडित गोबारिया और कई शोकाओं को स्वीकार किया और यहाँ तक कि उन्होंने मेरे साथ जो किया था उस पर गर्व भी जताया। उन्होंने ब्रिटिश सरकार के प्रति बिल्कुल भी प्रशंसात्मक शब्दों का प्रयोग नहीं किया, जिसके प्रति वे घोर तिरस्कार भाव रखते प्रतीत होते थे।

मैंने लगभग राजनीतिक अधिकारी और डॉक्टर को झगड़े में फंसा ही दिया था। तिब्बती गालियाँ सुनकर मेरा खून, जो थोड़ा-बहुत बचा था, गुस्से से उबल रहा था। स्थिति तब चरम पर पहुँच गई जब नेरबा ने मेरी माँ की अंगूठी लौटाने से इनकार कर दिया, जो उसके पास थी। आवेश में आकर मैंने पास पड़ी एक छुरी उठाई और नेरबा पर झपट पड़ा, वही बदमाश जिसने मुझ पर गोली चलाई थी, और जिसने मेरी आँखों पर चोट पहुँचाते समय और मेरी फाँसी की तैयारी के दौरान मेरे बाल पकड़े थे। विल्सन और करक सिंह ने मुझे रोका और मेरे हाथ से छुरी छीन ली। तिब्बती अधिकारियों में भगदड़ मच गई और हमारी बातचीत अचानक समाप्त हो गई।

आगे की बातचीत में मुझे पता चला कि मेरी रिहाई कैसे हुई थी। डॉक्टर विल्सन और राजनीतिक एजेंट को खबर मिली कि मेरे नौकरों और मुझे मार डाला गया है। वे पूछताछ करने और मेरी संपत्ति वापस पाने की कोशिश में सीमा पार गए। तकलाकोट पहुँचने पर उन्हें सुना नाम के व्यक्ति से पता चला, जिसे मैंने मानसरोवर से अपना संदेश लेकर भेजा था, कि मैं अभी भी जीवित हूँ और कैदी हूँ, घावों से लथपथ, फटे-पुराने कपड़ों में और भूख से मर रहा हूँ। उनके पास इतने सैनिक नहीं थे कि वे देश में और आगे जाकर मुझसे मिल सकें। इसके अलावा, तिब्बती उन पर कड़ी नज़र रख रहे थे। प्रभावशाली पंडित गोबारिया के साथ

मिलकर उन्होंने तकलाकोट के जोंग पेन से ज़ोरदार बातचीत की। उन्हें धमकी दी कि अगर मुझे रिहा नहीं किया गया तो मेरी मदद के लिए सेना भेजी जाएगी। इस तरह वे अंततः अनिच्छुक तिब्बती शासक से मुझे तकलाकोट लाने की अनुमति प्राप्त करने में सफल रहे। बाद में अनुमति वापस ले ली गई, लेकिन अंततः मुझे फांसी देने की अनुमति मिल गई। इन तीनों व्यक्तियों के प्रयासों और अथक परिश्रम के कारण ही मैं जीवित वापस आ सका।

पंडित गोबारिया, भोट में हमारी सीमा पर सबसे प्रभावशाली शोका सरदार और व्यापारी थे। तिब्बतियों के साथ उनके बहुत अच्छे संबंध थे और उन्हीं के माध्यम से मेरी तत्काल रिहाई के लिए बातचीत हुई थी। जोंग पेन को उनकी सलाह के कारण ही बातचीत संतोषजनक ढंग से संपन्न हुई।
कुछ समय आराम करने और पर्याप्त शक्ति प्राप्त करने के बाद, मैंने भारत की ओर अपनी यात्रा फिर से शुरू की। लिप्पू दर्रा (16,780 फीट) पार करने के बाद, मैं अंततः फिर से ब्रिटिश धरती पर पहुँच गया। हम धीरे-धीरे सीढ़ियों से उतरकर गुंगी पहुँचे, जहाँ डॉक्टर विल्सन के औषधालय में मुझे अपनी दुर्बलता के कारण कुछ दिनों के लिए रुकना पड़ा।
विल्सन के पास मेरा काफी सारा सामान, उपकरण, कैमरे, प्लेटें आदि थे, जिन्हें मैंने अपनी यात्रा की शुरुआत में छोड़ दिया था। वे बहुत काम आए। मैंने अपने दो नौकरों और अपनी तस्वीरें खिंचवाईं, जिनमें हमारे घाव और हमारी सामान्य स्थिति दिखाई दे रही थी। इस पुस्तक में छपी पूरी तस्वीर में मेरी बाईं आंख की चोटें, साथ ही माथे और नाक की त्वचा पर गर्म लोहे से यातना के निशान साफ देखे जा सकते हैं। मैं अपनी दाहिनी आंख से अपेक्षाकृत अच्छी तरह देख सकता था, लेकिन बाईं आंख का बिल्कुल भी इस्तेमाल नहीं कर पा रहा था।
मेरी रीढ़ की हड्डी में गंभीर चोटें आई थीं, जिनसे मुझे बहुत तकलीफ हुई। कई बार तो मेरा पूरा बायां हिस्सा मानो लकवाग्रस्त हो जाता था। खड़े होने के बाद बैठने में और बैठने के बाद उठने में मुझे बहुत कठिनाई होती थी। अत्यधिक तनाव के कारण मेरे जोड़ अकड़े हुए और सूजे हुए थे, और कई महीनों तक ऐसे ही रहे।
मैं जल्द से जल्द यूरोप लौटना चाहता था। गुंगी और गरब्यांग से मैं राजनीतिक एजेंट के साथ अस्कोटे तक गया। नेरपानी सड़क दो-तीन जगहों से टूटी हुई थी। गहरी खाइयों पर ऊबड़-खाबड़, हिलते-डुलते पुल बनाए गए थे। हर जगह हमारा हार्दिक स्वागत हुआ और सभी ने हम पर समान रूप से दया दिखाई।
आस्कोटे में मेरी मुलाकात श्री जे. लार्किन से हुई, जिन्हें भारत सरकार ने मेरे मामले की जांच करने के लिए जल्दबाजी में सीमावर्ती क्षेत्र में भेजा था। हालांकि मुझे अभी भी काफी दर्द हो रहा था, फिर भी मैंने तिब्बत की ओर वापस लौटने और उनके काम में मदद करने की जिद की। तेजी से चलते हुए हम गरब्यांग पहुंचे और बर्फ की ओर चढ़ाई शुरू की। हमारा इरादा लिप्पू दर्रे को पार करके तिब्बत में प्रवेश करने का था ताकि जोंग पेन को साक्षात्कार का अवसर मिल सके। तिब्बती अधिकारी ने हमसे मिलने से इनकार कर दिया।
तिब्बतियों को हर संभव मौका देने के लिए, हमने लिप्पू दर्रे को पार किया। भारी बर्फबारी हो रही थी और कड़ाके की ठंड थी। कुछ ही दिन पहले एक शोका दर्रे को पार करने की कोशिश में बर्फ में जम कर मर गया

था। लगभग बारह फीट बर्फ थी और चढ़ाई आसान नहीं थी। पहाड़ की ढलान पर बने अपने आखिरी शिविर से दो घंटे की मशक्कत के बाद हम दर्रे की चोटी पर पहुँच गए। मैं एक बार फिर तिब्बत में था। डॉक्टर विल्सन, राजनीतिक एजेंट और अन्य लोग हमारे साथ थे। एक उपयुक्त जगह मिलने पर जहाँ हवा हमारे चेहरों पर इतनी तेज़ी से नहीं लग रही थी, हम काफी देर तक रुके और सीमा के तिब्बती हिस्से में जोंग पेन या उनके प्रतिनिधियों का बेसब्री से इंतज़ार करने लगे, जिन्हें पत्र भेजकर हमसे मिलने के लिए कहा गया था। वे नहीं आए।

12 अक्टूबर की दोपहर को मैंने आखिरकार उस निषिद्ध भूमि को अलविदा कह दिया। मेरी तबीयत अभी भी पूरी तरह ठीक नहीं थी, लेकिन इंग्लैंड और अपने दोस्तों से दोबारा मिलने की उम्मीद से मैं सचमुच बहुत खुश था।

हम अपने शिविर में लौट आए, जो दर्रे से कुछ सौ फीट नीचे था, जहाँ हमने अपना सामान और अपने कई साथियों को छोड़ दिया था जो पर्वतीय बीमारी से पीड़ित थे।

अपना मिशन पूरा करने के बाद, श्री लार्किन और मैं तेजी से पैदल चलकर अल्मोड़ा लौट आए। ब्रिटिश सरकार के लिए जांच करते हुए, श्री लार्किन ने सीमा पर घटी घटनाओं के पर्याप्त प्रमाण प्राप्त किए। एक विस्तृत रिपोर्ट भारत सरकार और लंदन स्थित विदेश कार्यालय और भारत कार्यालय को भेजी गई। सरकारी रिपोर्ट की एक प्रति परिशिष्ट में मिलेगी।

सर्दी का मौसम शुरू होते ही, तिब्बत से लौट चुके शोका लोग पहाड़ों के निचले हिस्से में स्थित अपने शीतकालीन आवासों की ओर पलायन करने लगे थे। जब हम उस बस्ती से गुज़रे, तो उनमें से कई लोग अपने शीतकालीन आवासों की गिरी हुई छतों की मरम्मत में लगे हुए थे। बड़ी संख्या में तिब्बती लोग अपनी भेड़ों के साथ ब्रिटिश क्षेत्र में सर्दी बिताने आए थे। जहाँ भी उनके झुंडों के लिए पर्याप्त घास थी, वहाँ सड़क के किनारे उनके डेरे दिखाई दे रहे थे। जब तक हम भोट में रहे, तिब्बती लोग—लामा और अधिकारी—अहंकारी और अभिमानी रवैया अपनाए रहे। वे भोट को अपने देश का हिस्सा मानते थे, लेकिन वास्तव में वह ब्रिटिश भूमि थी। हालांकि, यह कहना उचित होगा कि भोट से बाहर निकलते ही, शोकों के बजाय हिंदुओं से बात करनी पड़ी, तो उनका व्यवहार पूरी तरह बदल गया। अभिमान और उद्दंडता की जगह चापलूसी ने ले ली।

हम बिना किसी देरी के अल्मोड़ा के लिए रवाना हुए और वहाँ से नैनीताल गए, जो उत्तर-पश्चिम प्रांतों और अवध की सरकार का ग्रीष्मकालीन मुख्यालय था। वहाँ लेफ्टिनेंट-गवर्नर द्वारा मेरे मामले पर एक सम्मेलन आयोजित किया गया।

मैंने अपने वफादार कुली मानसिंह को जीवन की शुरुआत के लिए पर्याप्त धन देकर विदा किया। वह मेरे साथ काठगोदाम तक आया, जो रेलवे का उत्तरी टर्मिनल है। जब चंदन सिंह और मैं ट्रेन में चढ़े, तो उसके चेहरे पर गहरा दुख झलक रहा था। उसने मुझसे विनती की कि अगर मैं कभी तिब्बत वापस जाऊं, तो उसे भी अपने साथ ले जाऊं; बस अगली बार उसे भी एक राइफल दी जानी चाहिए! यही मेरी एकमात्र शर्त थी। जैसे ही ट्रेन प्लेटफार्म से रवाना हुई, उसने स्नेहपूर्वक हाथ हिलाया।

चंदेन सिंह, जो मेरे नौकर के रूप में मेरे साथ रहे, मेरे साथ बॉम्बे गए, और वहाँ से हम सीधे फ्लोरेंस गए, जो मेरे माता-पिता का घर था, जिन्होंने अपने घर में लगभग उतना ही कष्ट सहा था जितना मैंने उस निषिद्ध भूमि में सहा था।

फुटनोट:

[15] लापता वस्तुओं में से कुछ को कुछ महीनों बाद भारत सरकार द्वारा बरामद किया गया।

परिशिष्ट

सर विलियम ली वार्नर, सी.एस.आई., राजनीतिक और गुप्त विभाग, भारत कार्यालय, लंदन का पत्र।

इंडिया ऑफिस, व्हाइटहॉल, दक्षिण पश्चिम।

4 अगस्त, 1898।

प्रिय महोदय,

आपके 27 तारीख के पत्र में उल्लिखित अनुरोध और उसी दिन मेरे साथ हुई आपकी मुलाकात के संदर्भ में, मैं आपके उपयोग के लिए श्री लार्किन की तिब्बतियों द्वारा आपके साथ किए गए व्यवहार की "जांच और रिपोर्ट" की एक प्रति संलग्न कर रहा हूं।

भवदीय,

(हस्ताक्षरित,) डब्ल्यू. ली वार्नर.

ए. हेनरी सैवेज लैंडर, एस्क्वायर।

प्रथम श्रेणी के मजिस्ट्रेट जे. लार्किन, एस्क्वायर द्वारा सरकारी रिपोर्ट

श्री अर्नोल्ड हेनरी सैवेज लैंडोर के तिब्बतियों द्वारा बंदी बनाए जाने और यातना दिए जाने की खबर मिलने पर, मुझे तथ्यों का पता लगाने के लिए ब्यान्स के गारब्यांग भेजा गया था।

श्री लैंडोर पिछले साल 10 अप्रैल को भारत पहुंचे। वे अल्मोड़ा के लिए रवाना हुए और 27 अप्रैल को वहां पहुंचे। तिब्बत की यात्रा की व्यवस्था करने के लिए वे 10 मई तक वहीं रुके रहे। पहले उन्हें अपने साथ कुछ गोरखा सैनिक ले जाने की सलाह दी गई थी, लेकिन यह योजना विफल रही, क्योंकि सेना ने उनका अनुरोध स्वीकार नहीं किया। इसके बाद, 27 मई को वे ब्यांस पट्टी के गरब्यांग पहुंचे। ऐसा प्रतीत होता है कि उनका इरादा लिप्पू लेक दर्रे से तिब्बत में प्रवेश करने का था। यह सबसे आसान मार्ग है, जो समुद्र तल से लगभग 16,780 फीट ऊपर है। ब्यांस और चौदान के व्यापारी इस मार्ग का सबसे अधिक उपयोग करते हैं और यह ऊन, नमक, बोरेक्स, अनाज आदि के बाज़ार तकलाकोट के निकट स्थित है। हालांकि, उनका यह इरादा विफल रहा, क्योंकि तकलाकोट के जोंग पेन को श्री लैंडोर के इरादे की जानकारी हो गई और उन्होंने इसे

रोकने के लिए कदम उठाए। उसने पुलों को नष्ट करवा दिया और रास्ते में जगह-जगह पहरेदार तैनात कर दिए।
इसके अलावा, ऐसा प्रतीत होता है कि गार्ब्यांग में मौजूद अपने जासूसों के माध्यम से उन्हें श्री लैंडोर की गतिविधियों की पूरी जानकारी दी जाती थी।
इन परिस्थितियों में श्री लैंडोर को किसी अन्य मार्ग का सहारा लेने के लिए विवश होना पड़ा और उन्होंने 18,150 फीट की ऊंचाई पर स्थित लुम्पिया दर्रे को चुना।
पिछले साल 13 जुलाई को श्री लैंडोर अपने तीस साथियों के साथ तिब्बत में दाखिल हुए। वे ज्ञानिमा पहुंचे, जहां उन्हें बरखा तारजुम ने रोक लिया। हालांकि, कुछ समझाने-बुझाने के बाद, बरखा तारजुम ने श्री लैंडोर और उनके सात साथियों को मानसरोवर झील तक आगे जाने की अनुमति दे दी।
अगले दिन दी गई अनुमति वापस ले ली गई और श्री लैंडोर और उनके दल को वापस भेज दिया गया। दल तीन मील वापस लौटा, जिसके बाद श्री सैवेज लैंडोर ने निर्जन जंगली रास्तों से होते हुए मानसरोवार जाने का निश्चय किया।
21 जुलाई को श्री लैंडोर अपने नौ साथियों के साथ आधी रात को भयंकर हिमपात में पहाड़ पर चढ़ गए और निकल पड़े, जबकि उनके दल के अधिकांश सदस्य लुम्पिया लेक की ओर पीछे हटते रहे। इस रणनीतिक चाल से श्री लैंडोर ने तिब्बती पहरेदारों (चौकीदारों) को चकमा दे दिया। उन्होंने निवासियों से संपर्क करने से सावधानीपूर्वक परहेज किया और इसके लिए उन्हें ऊंचे पहाड़ों और सुनसान जंगली इलाकों में रहना पड़ा।
इस प्रकार, अपने कंपास, सेक्स्टेंट और रेखाचित्रों की सहायता से यात्रा करते हुए, वह मानसरोवर पहुंचा।
यहां उनके पांच अनुयायियों ने आगे उनका साथ देने से इनकार कर दिया, इसलिए उन्होंने उन्हें भुगतान करके विदा कर दिया। यह घटना टकर में घटी। इस प्रकार श्री लैंडोर के साथ केवल चार ही लोग रह गए। हालांकि, वे आगे बढ़ते रहे और केवल तीन मील ही तय कर पाए थे कि रात में उनके दो और अनुयायी उनका साथ छोड़कर भाग गए। वे उनके कुछ सामान, सभी नौकरों का भोजन और रस्सियां लेकर चले गए।
श्री लैंडोर के साथ अब केवल एक भारवाहक (चंदन सिंह) और एक कुली (मानसिंह) ही रह गए थे। अपनी तमाम विपत्तियों के बावजूद उन्होंने आगे बढ़ने का दृढ़ निश्चय किया: उनका इरादा ल्हासा पहुँचने का प्रतीत होता है।
वह मरियम ला दर्रे से होकर गुजरा। [16] यह दर्रा 16,000 फीट से अधिक की ऊंचाई पर स्थित है।
इसी बीच भगोड़ों ने श्री लैंडोर के ल्हासा जाने के इरादे की जानकारी फैला दी थी।
नेओ (त्साम्बो) नदी पार करते समय श्री लैंडोर की एक याक डूब गई। याक को तो बचा लिया गया, लेकिन उस पर लदा बहुमूल्य सामान, जिसमें डिब्बाबंद खाद्य सामग्री, 800 रुपये नकद, तीन जोड़ी जूते, एक कटा हुआ मेमना, कपड़े, रेजर, खाल उतारने के उपकरण और लगभग तीन सौ राइफल कारतूस शामिल थे, खो गया।

यह दुर्घटना ही श्री लैंडोर की गिरफ्तारी का प्रत्यक्ष कारण बनी, क्योंकि वे और उनके दो साथी, जो थके-हारे, भूखे और हताश थे, भोजन और घोड़े मांगने के लिए ग्रामीण इलाकों के निवासियों के पास जाने को विवश हो गए। 19 अगस्त, 1897 को वे टोक्सेम नामक स्थान पर गए। ग्रामीणों ने उनका गर्मजोशी से स्वागत किया और उन्हें भोजन और घोड़े उपलब्ध कराने का वादा किया। अगली सुबह, 20 तारीख को, कई तिब्बती लोग भोजन और टट्टू लेकर श्री लैंडोर के तंबू में आए।

जब श्री लैंडोर और उनके नौकर टट्टुओं को परखने और चुनने में व्यस्त थे, तभी भीड़ बढ़ गई और अपने तीन शिकारों के पीछे आ गई।

अचानक, बिना किसी चेतावनी के, तिब्बती लोग श्री लैंडोर और उनके दो नौकरों पर टूट पड़े और संख्या में अधिक होने के कारण उन्हें बंदी बना लिया। उन्होंने अपने शिकारों को बेरहमी से बांध दिया। तभी कई सैनिक (जो घात लगाकर बैठे थे) आ गए और बंदियों को अपने कब्जे में ले लिया। सबसे पहले चंदन सिंह को पकड़ा गया। उन पर अपने मालिक को तिब्बत ले जाने का आरोप लगाया गया था। उनसे इस बारे में और श्री लैंडोर के सामान के साथ मिले नक्शों और रेखाचित्रों के बारे में पूछताछ की गई। मैं यह भी बताना चाहूंगा कि गिरफ्तारी के समय तिब्बतियों ने श्री लैंडोर की सारी संपत्ति ले ली, जिसके साथ उन्होंने बहुत ही क्रूरता से व्यवहार किया और अधिकांश चीजों को नुकसान पहुंचाया। जब तिब्बतियों ने चंदन सिंह पर आरोप लगाया, तो श्री लैंडोर चिल्लाए कि उनके नौकर का तिब्बत में प्रवेश करने में कोई हाथ नहीं है। इस पर एक लामा ने अपने कोड़े के पिछले हिस्से से श्री लैंडोर के सिर पर वार किया। फिर चंदन सिंह को बांधकर कोड़े मारे गए। दो लामाओं द्वारा चलाए गए कोड़ों से उन्हें दो सौ कोड़े मारे गए। फिर कैदियों को रात भर रस्सियों से बांधकर अलग रखा गया। अगले दिन श्री लैंडोर को एक घोड़े पर बिठाया गया, जिस पर नुकीली काठी लगी थी। मानसिंग को बिना काठी वाले घोड़े पर बिठाया गया। वे अभी भी बंधे हुए थे। श्री लैंडोर के हाथ उनकी पीठ के पीछे बांध दिए गए थे। इस प्रकार उन्हें गैलशियो की ओर सरपट दौड़ाया गया। जब दल उस स्थान के पास पहुँच रहा था, तो उन्हें सड़क के किनारे लामाओं का एक दल उनका इंतजार करता हुआ मिला। यहाँ श्री लैंडोर के घोड़े को कोड़े मारे गए और आगे बढ़ने के लिए उकसाया गया। एक घुटने टेककर बैठे सैनिक ने, जिसकी बंदूक एक सहारे पर टिकी थी, श्री लैंडोर पर गोली चलाई जब वे वहाँ से गुजरे। गोली का कोई असर नहीं हुआ। फिर उन्होंने टट्टू को रोका और श्री लैंडोर की हथकड़ियों में एक लंबी रस्सी बांध दी। रस्सी का दूसरा सिरा घोड़े पर सवार एक सैनिक ने पकड़ रखा था। लामाओं के साथ आगे बढ़ते हुए दल ने अपना सफर जारी रखा। पूरी रफ्तार से आगे बढ़ते समय, श्री लैंडोर की हथकड़ी से बंधी रस्सी को पकड़े हुए घुड़सवार ने उन्हें घोड़े से गिराने की कोशिश में रस्सी को जोर से खींचा। अगर ऐसा हो जाता तो श्री लैंडोर अपने पीछे चल रहे घुड़सवारों के दल के नीचे कुचलकर मर जाते। इस प्रकार वे तेजी से आगे बढ़ते रहे जब तक कि वे गलशियो के पास नहीं पहुंच गए, तभी सड़क के एक मोड़ पर एक सैनिक को घुटनों के बल "तैयार" मुद्रा में बैठे देखा गया, जिसने श्री लैंडोर के ठीक सामने आते ही उन पर गोली चलाई। पिछली गोली की तरह यह गोली भी अपने लक्ष्य से चूक गई।

गैल्शियो पहुँचते ही श्री लैंडोर को उनके टट्टू से उतार दिया गया। उनकी पीठ बुरी तरह से घायल थी, काठी में लगे नुकीले कांटों से उन्हें गहरा घाव हो गया था। उन्होंने कुछ मिनटों के आराम की गुहार लगाई, लेकिन उनके पहरेदारों ने उपहास करते हुए कहा कि इसकी कोई आवश्यकता नहीं है, क्योंकि कुछ ही मिनटों में उनका सिर कलम कर दिया जाएगा। फिर उन्हें ले जाया गया, उनके पैरों को जितना हो सके फैलाया गया और फिर एक प्रिज्म के आकार के लट्ठे के नुकीले किनारे से बांध दिया गया। रस्सियाँ इतनी कसकर बंधी थीं कि वे मांस में धंस गईं।

फिर टोकचिम तारजुम के सचिव नेरबा नामक व्यक्ति ने श्री लैंडोर के सिर के बाल पकड़ लिए, और मुख्य अधिकारी, जिसे पोम्बो कहा जाता था, एक लाल गर्म लोहे का टुकड़ा लेकर आया और उसे श्री लैंडोर की आँखों के बिल्कुल पास रख दिया। गर्मी इतनी तीव्र थी कि कुछ क्षणों के लिए श्री लैंडोर को ऐसा लगा जैसे उनकी आँखें झुलस गई हों। लोहे का टुकड़ा इतना पास रखा गया था कि उनकी नाक भी जल गई। इसके बाद पोम्बो ने एक माचिस ली, जिसे उसने पीड़ित के माथे पर रखा और फिर ऊपर की ओर चला दिया।

परिणामस्वरूप, सदमे का गहरा असर महसूस हुआ। खाली बंदूक एक सैनिक को सौंपकर, पोम्बो ने दोधारी तलवार उठाई। उसने तलवार की धार को अपने शिकार की गर्दन के किनारे पर इस तरह रखा मानो वार करने के लिए सही दूरी नाप रहा हो। फिर तलवार को ऊपर उठाते हुए, उसने उसे श्री लैंडोर की गर्दन के पास से तेज़ी से गुज़ार दिया। उसने यही क्रिया गर्दन के दूसरी तरफ भी दोहराई।

इस दुखद घटना के बाद श्री लैंडोर को ज़मीन पर पटक दिया गया और उनके सिर और चेहरे पर कपड़ा डाल दिया गया ताकि वे अपने नौकर मानसिंग के साथ हो रही यातना को न देख सकें। ऐसा शायद श्री लैंडोर को यह विश्वास दिलाने के लिए किया गया था कि मानसिंग को फाँसी दी जा रही है। कुछ समय बाद कपड़ा हटा दिया गया और श्री लैंडोर ने अपने नौकर को उसी लट्ठे से बंधा हुआ देखा, जिसके पैर फैलाए हुए थे। श्री लैंडोर को चौबीस घंटे तक इसी कष्टदायक स्थिति में रखा गया, उनके पैर यथासंभव फैलाए हुए थे और हाथ एक खंभे से बंधे हुए थे, और मानसिंग को बारह घंटे तक इसी स्थिति में रखा गया। उनकी पीड़ा को और बढ़ाने के लिए, उन्हें बारिश में भीगने के लिए छोड़ दिया गया और बाद में उन्हें पानी के एक कुंड में बिठा दिया गया। इस यातना के परिणामस्वरूप उनके पैरों और हाथों की मांसपेशियां खिंच गईं और रीढ़ की हड्डी में चोट आ गई।

जब श्री लैंडोर के पैरों से रस्सियाँ खोली गईं, तो वे इतने सुन्न और सूजे हुए थे कि सोलह घंटे तक वे उनका इस्तेमाल नहीं कर पाए और उन्हें असहनीय पीड़ा का डर सता रहा था। श्री लैंडोर की संपत्ति को गल्शियो के अधिकारियों ने ज़ब्त कर लिया और सील कर दिया। तीसरे दिन दोपहर को, गल्शियो में, दोनों कैदियों को पैदल टोक्सेम ले जाया गया। यह एक बहुत ही कठिन यात्रा थी, क्योंकि रास्ते में कई नदियाँ पार करनी पड़ीं।

टॉक्सेम पहुँचने पर श्री लैंडोर ने अपने सहायक चंदन सिंह को अत्यंत दयनीय अवस्था में देखा, क्योंकि चंदन सिंह को चार दिनों से भोजन नहीं मिला था। इस पूरे समय के दौरान कैदियों को कसकर बांधकर रखा गया था और उनकी कड़ी निगरानी की जा रही थी। अगले दिन, श्री लैंडोर और चंदन सिंह को याकों पर बिठाया

गया। मानसरोवर झील की ओर उन्हें ले जाया गया। मानसरोवर पहुँचने पर ही श्री लैंडोर के पहरेदारों ने उन्हें खोला।
डोगमार पहुँचने पर, दल को तकलाकोट के जोंग पेन ने रोक लिया और उन्हें अपने जिले से गुजरने देने से इनकार कर दिया। यह एक बहुत ही गंभीर मामला था, क्योंकि इसका मतलब था कि थके-हारे कैदियों को ज्ञानिमा होते हुए और लम्पिया दर्रे से होकर भारत ले जाने के लिए एक लंबे, घुमावदार रास्ते से जाना पड़ता। यह शायद उनके लिए जानलेवा साबित होता। मेथोडिस्ट एपिस्कोपल मिशन के रेवरेंड हरकुआ विल्सन, पेशकार खारक सिंह पाल और ब्यान के भूटिया समुदाय के सबसे प्रभावशाली व्यक्ति पंडित गोबारिया के हस्तक्षेप के कारण, जोंग पेन को अपना प्रतिबंध वापस लेने और कैदियों को तकलाकोट ले जाने की अनुमति देने के लिए विवश होना पड़ा।
इस स्थान पर पहुँचने पर कैदियों का स्वागत रेवरेंड हरकुआ विल्सन ने बड़े ही सत्कारपूर्ण ढंग से किया, जो स्वयं एक चिकित्सक भी थे। उन्होंने उनकी चोटों की जाँच की और उनका उपचार किया। उनके बयान से उनकी दयनीय स्थिति का पता चलता है। तिब्बती गार्डों ने श्री लैंडोर की कुछ संपत्ति तकलाकोट स्थित उन्हें सौंप दी। तब पता चला कि बहुत सी संपत्ति वापस नहीं की गई थी। श्री लैंडोर ने अपनी याददाश्त के आधार पर अपनी अप्राप्त संपत्ति की एक सूची तैयार करवाई। इस सूची (एक प्रति) को तकलाकोट के जोंग पेन को सौंप दिया गया।
मैं सूची संलग्न कर रहा हूँ। जोंग पेन को लापता वस्तुओं को लौटाने के लिए कहा गया है। उनका कहना है कि यह घटना उनके जिले में नहीं घटी और संपत्ति के नुकसान के लिए वे किसी भी तरह से जिम्मेदार नहीं हैं।

हालांकि, उन्होंने उन्हें वापस लाने की कोशिश करने का वादा किया है, और दावा किया है कि इस मामले की सूचना गार्टोक के एक उच्च अधिकारी को दे दी गई है। यहाँ से मुझे जो जानकारी मिली है, उससे लगता है कि पैसे को छोड़कर बाकी सभी गायब संपत्ति वापस मिल जाएगी। मैंने जोंग पेन से मिलने की कोशिश की, लेकिन उन्होंने बीमारी का बहाना बनाया और कहा कि ऐसी मुलाकात में कुछ नया खुलासा न करना व्यर्थ होगा। यह व्यक्ति इन इलाकों में अंग्रेज़ प्रजा के प्रति अपनी घोर नफरत के लिए कुख्यात है।
श्री सैवेज लैंडोर द्वारा बताई गई घटना का विवरण उनके दो नौकरों द्वारा पूरी तरह से प्रमाणित किया गया है, और इसके अलावा, इसमें भाग लेने वाले तिब्बतियों ने इसे छिपाने की कोशिश नहीं की।
तकलाकोट में रेवरेंड हरकुआ विल्सन के तंबू में, पेशकार खारक सिंह, पंडित गोबारिया और बड़ी संख्या में भूतिया लोगों के सामने, कई तिब्बती अधिकारियों ने श्री लैंडोर द्वारा बताई गई पूरी कहानी की पुष्टि की। नेरबा नामक व्यक्ति, जिसने श्री लैंडोर का सिर कलम किए जाने और उनकी आँखें जलाए जाने के समय उनके बाल पकड़े थे, ने स्वीकार किया कि उसने इस घटना में भाग लिया था। इसमें कोई संदेह नहीं है कि उपरोक्त विवरण सत्य और बिना किसी अतिशयोक्ति के है, क्योंकि ब्यान और चौदान के सभी क्षेत्रों में इसकी चर्चा है।

तकलाकोट के जोंग पेन को इस घटना के बारे में स्पष्टीकरण देने का पर्याप्त अवसर दिया गया था, लेकिन उन्होंने ऐसा करने से इनकार कर दिया।

श्री सैवेज लैंडर के पास चीनी पासपोर्ट था, और उस देश में रहने के दौरान उनके आचरण से अधिकारियों को उनके साथ बर्बर और क्रूर व्यवहार करने का कोई औचित्य नहीं था। मैंने यहाँ के लोगों से सावधानीपूर्वक पूछताछ करके श्री लैंडर के व्यवहार के बारे में पूरी जानकारी प्राप्त कर ली।

कहा जाता है कि वे सबके साथ बेहद उदार और हमेशा विनम्र स्वभाव के थे। मैंने श्री लैंडोर को तिब्बत में प्रवेश करने से ठीक पहले देखा था, और जब मैं उनसे मिला तो उन्हें पहचानना मेरे लिए मुश्किल हो गया, हालांकि वे उस भयानक यातना से काफी हद तक उबर चुके थे। मैंने उनके हाथों और पैरों पर रस्सियों के निशान देखे, जो इतने समय बाद भी दिखाई दे रहे हैं। वे शिकायत करते हैं कि उनकी रीढ़ की हड्डी में लगी चोट से वे अभी भी पीड़ित हैं, और उन्हें डर है कि यह चोट स्थायी हो सकती है।

15 अक्टूबर*, 1897*।

फुटनोट:

[16] गुजर सकता है.

[17] गलशियो, या ग्यात्शो.

[18] Bhutias, or Shokas.

सरकार को भेजे जाने वाले सभी पत्रों में पूर्ववर्ती पत्राचार का क्रमांक, तिथि और विषय अवश्य दिया जाना चाहिए, और उसमें उल्लिखित विभाग का उल्लेख अवश्य होना चाहिए।

645

सं. एन. 277 ए. 189—.

सरकार के अवर सचिव, उत्तर-पश्चिमी प्रांत और अवध।

को

ए. एच. सैवेज लैंडर, एस्क्वायर, मेसर्स ग्रिंडले, ग्रूम एंड कंपनी, बैंकर्स, बॉम्बे के माध्यम से। दिनांक, इलाहाबाद, 13 नवंबर, 1897।

राजनीति विभाग।

महोदय ,

आपके 5 नवंबर के पत्र के उत्तर में, मुझे श्री लार्किन द्वारा दर्ज किए गए बयानों की एक मुद्रित प्रति आपको भेजने का अनुरोध किया गया है, जैसा कि नीचे उल्लेख किया गया है:

1. स्वयं के बारे में;
2. चंदेन सिंह का;
3. मनुष्य का गीत;
4. रेव. फादर के. हरकुआ विल्सन;
5. पंडित गोबारिया का;
6. खरक सिंग का;
7. सुना का।

महोदय, मैं आपका सबसे आज्ञाकारी सेवक, एच. एन. राइट, उत्तर-पश्चिमी प्रांत और अवध, न्यू मैक्सिको में सरकार का अवर सचिव होने का गौरव प्राप्त कर रहा हूँ।

चंदेन सिंह का बयान, जो 9 अक्टूबर, 1897 को लिया गया था।
मेरे द्वारा संपन्न गंभीर प्रतिज्ञान।

मेरा नाम चंदेन सिंह है; मेरे पिता का नाम बिजे सिंह है; मैं जाति से थाटोला हूँ; मेरी उम्र बत्तीस वर्ष है; मैं खेती करता हूँ; मेरा घर थाट, पुलिस स्टेशन बिसोट, जिला अल्मोड़ा में है।

मैंने पिछले साल 27 या 28 अप्रैल को अल्मोड़ा में श्री लैंडोर के यहाँ भारवाहक के रूप में काम शुरू किया। मैं उनके साथ तिब्बत की यात्रा पर गया। हम घने जंगलों से होते हुए कई कठिनाइयों का सामना करते हुए टोक्सेम पहुँचे। वहाँ मैंने अपने मालिक से ज़िद की कि वे हमें दार्जिलिंग ले जाने के लिए टट्टू खरीदें। इसी वजह से हमें पकड़ लिया गया, क्योंकि तब तक हम लोगों से दूर ही रहे थे। जो लोग हमारे लिए टट्टू लाए थे, उन्होंने हमें धोखा दिया। उन्होंने अधिकारियों को सूचना दी, जिन्होंने सैनिक भेजे। सैनिक रेत के टीलों के पीछे घात लगाकर बैठे रहे, जब तक कि घोड़ों के सौदागरों और तमाशबीनों की भीड़, जिन पर हमें धोखे का कोई शक नहीं था, ने हमें घेरकर पकड़ नहीं लिया। हमें बांहों और पैरों से रस्सियों से बांध दिया गया। मेरे मालिक को हम दोनों नौकरों से कहीं ज़्यादा बेरहमी से बांधा गया था। हमें राजा के पास ले जाया गया, जिसने मुझ पर अपने मालिक को देश में लाने का आरोप लगाया। फिर मुझे लिटाया गया और दो बलवान आदमियों ने कोड़ों से मुझ पर 200 कोड़े मारे। मुझसे नक्शों के बारे में पूछताछ की गई। मेरे मालिक ने कहा कि उन्हें केवल वही समझते हैं, मैं नहीं, और उन्होंने निवेदन किया कि मुझे पीटा न जाए। इस पर एक लामा ने उनके सिर पर प्रहार किया और उन्हें दूर ले गए, ताकि मैं उनसे बात न कर सकूँ। उन्होंने हमारी सारी संपत्ति ले ली। फिर हमें रात भर अलग रखा गया। मुझे एक कमरे में बंद कर दिया गया और मेरे हाथ एक खंभे से बाँध दिए गए। मैं दर्द से सो नहीं सका। अगले दिन मेरे मालिक को, जिनके हाथ पीछे बँधे हुए थे, एक नुकीली काठी पर बिठाया गया और एक घुड़सवार द्वारा पकड़ी गई लंबी रस्सी से बाँध दिया गया। वे लगभग पचास बंदूक और तलवारों से लैस घुड़सवारों से घिरे हुए सरपट दौड़े। हमारे कुली मान सिंह को भी उनके साथ ले जाया गया। मेरे

पहरेदारों ने मुझे बताया कि मेरे मालिक का सिर गलशियो में काट दिया जाएगा, और मेरा सिर वहीं काट दिया जाएगा जहाँ मैं था। चौथे या पाँचवें दिन मेरे मालिक लौट आए। इस बीच मैं एक तंग कैदी था, बंधा हुआ, बिना भोजन के। जब मैंने अपने मालिक को देखा तो उनकी हालत दयनीय थी। उन्हें भारी हथकड़ियों से जकड़ा गया था, कपड़े चीर-फाड़ कर दिए गए थे, कमर से खून बह रहा था, पैर और हाथ सूजे हुए थे। अगले दिन एक घुड़सवार गार्ड हमें बंधे हुए ही याक की पीठ पर लादकर मानसरोवर की ओर ले गया। वहाँ मेरी रस्सियाँ खोली गईं। मेरे स्वामी को तांगचिम पहुँचने तक बांधे रखा गया। अंततः हमें तकलाकोट ले जाया गया, जहाँ रेवरेंड हरकुआ विल्सन ने हमसे मुलाकात की और हमारी हालत देखी। उन्होंने हमारी जरूरतों का ध्यान रखा। मेरे स्वामी मृत्यु के कगार पर थे। तिब्बतियों ने मेरे स्वामी की कुछ संपत्ति लौटा दी, लेकिन उन्होंने लगभग 475 रुपये नकद, दो राइफलें, एक रिवॉल्वर, दो फाइलें, बहुत सारा साबुन, दवाइयाँ, एक बटरफ्लाई डॉजर, माचिस, गणितीय उपकरणों का एक डिब्बा, 400 कारतूस, फोटोग्राफिक प्लेटों और नेगेटिव का एक बड़ा डिब्बा और तीन थैले रख लिए। हमने किसी को परेशान नहीं किया और जो भी खाना खरीदा, उसकी कीमत से चार गुना अधिक भुगतान किया।

इसे पढ़कर देखें।

जे. लार्किन.

नोट—अन्य अनेक बयानों, दस्तावेजों और प्रमाण पत्रों के लिए, 'निषिद्ध भूमि में' के बड़े संस्करण को देखें।

फुटनोटः

[19] राजा, या राजा.

समाप्त

---

sjeet